पारिस्थितिक चेतना : समकालीन हिंदी कविता में

(सन् १९९० के बाद के विशेष संदर्भ में)

Ecological consciousness in contemporary Hindi Poetry

(with special reference to post 1990)

शोध-प्रबंध

कालिकट विश्वविद्यालय की डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध

Thesis submitted to the University of Calicut for the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi

निर्देशक :
डॉ.प्रमोद कोवप्रत
असोसिएट प्रोफेसर

प्रस्तुतकर्ता :
सिन्जु.ए
शोध छात्रा

हिंदी विभाग

कालिकट विश्वविद्यालय

२०१२

CERTIFICATE

This is to certify that the Thesis entitled ‘Ecological consciousness in contemporary Hindi poetry (with special reference to post 1990)’ is a bonafide record of research work carried out by SINCHU.A, under my supervision and that no part of this thesis has hitherto been submitted for a research degree in any University.

C.U Campus

Dr.Pramod Kovvaprath
Associate Professor
Department of Hindi
University of Calicut

DECLARATION

I SINCHU.A, do hereby declare that the thesis entitled 'Ecological consciousness in contemporary Hindi poetry (with special reference to post 1990)' is a record of bonafide research carried out by me and this has not previously formed the basis for the award of any Degree, Diploma, Associateship, Fellowship other similar Title or Recognition. This research work was supervised by Dr.Pramod Kovvaprath, Associate Professor, Department of Hindi, University of Calicut.

C.U. Campus

SINCHU.A
Research Scholar
Department of Hindi
University of Calicut

अनुक्रम

प्राक्कथन

अध्याय १ : पारिस्थितिक चेतना : एक रूपरेखा **१-४८**

१.१. पारिस्थितिकी : अर्थ एवं परिभाषा
१.२. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी
१.२.१. पर्यावरण वर्गीकरण
१.२.१.१. प्राकृतिक पर्यावरण
१.२.१.२. सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण
१.३. पारिस्थितिकी एवं मानव
१.३.१. प्रागैतिहासिक काल
१.३.२. पशुपालन एवं कृषिकाल
१.३.३. आधुनिक काल
१.४. प्रदूषण
१.४.२. प्रदूषण के प्रकार
१.४.१. प्रदूषण : अर्थ एवं परिभाषा
१.५. प्रदूषक
१.६. जल-संकट
१.६.१. नदी की मौत
१.७. वायु-संकट
१.८. मिट्टी का प्रदूषण
१.९. ध्वनि प्रदूषण
१.९.१. ध्वनि प्रदूषण और मानव
१.९.२. ध्वनि प्रदूषण का नियंत्रण
१.१०. समुद्रीय पारिस्थितिकी

१.१०.१. समुद्र प्रदूषण
१.१०.२. सागर प्रदूषण का नियंत्रण
१.११. पेट्रोलियम और प्रदूषण
१.१२. रेडियोधर्मी प्रदूषण
१.१३. औद्योगिकीकरण और पारिस्थितिकी
१.१४. जनसंख्या वृद्धि एवं पारिस्थितिकी
१.१५. प्लास्टिक और पारिस्थितिकी
१.१६. कचरे और पारिस्थितिकी
१.१७. पारिस्थितिक प्रकोप
१.१७.१. भूस्खलन
१.१७.२. सूखा
१.१७.३. बाढ़
१.१७.४. सुनामी
१.१७.५. अलनीनो व लानिनो
१.१७.६. भूकम्प
१.१८. तेजाबी वर्षा
१.१९. वैश्विक तापन
१.२०. जलवायु परिवर्तन
१.२१. पारिस्थितिक संकट : इतिहास की सबक
१.२१.१. हिरोशिमा-नागसाकी
१.२१.२. चेर्नोबिल दुर्घटना
१.२१.३. भोपाल गैस त्रासदी
१.२१.४. मिनिमाता त्रासदी
१.२२. वन, वन्यजीव एवं पारिस्थितिकी
१.२३. पारिस्थितिकी : भारतीय संदर्भ में
१.२३.१. भारतीय संस्कृति एवं पर्यावरण
१.२४. पारिस्थितिकी : विश्व संदर्भ में
१.२५. पारिस्थितिकी और मीडिया

१.२६. पारिस्थितिकी और साहित्य

१.२७. इको-क्रिटिसिज़्म

१.२८. पारिस्थितिकी-शिक्षा

१.२९. पारिस्थितिकी : संवैधानिक संदर्भ

१.३०. निष्कर्ष

अध्याय २ : पारिस्थितिक चेतना हिंदी कविता में : एक पूर्वपीठिका **४९-१३५**

२.१. आदिकाल

२.१.१. अब्दुल रहमान

२.१.२. चंदबरदाई

२.१.३. विद्यापति

२.२. मध्यकाल

२.२.१. भक्तिकाल

२.२.१.१. कबीरदास

२.२.१.२. तुलसीदास

२.२.१.३. सूरदास

२.२.१.४. मलिक मुहम्मद जायसी

२.२.२. रीतिकाल

२.२.२.१. रहीम

२.२.२.२. वृंद

२.३. आधुनिक काल

२.३.१. भारतेंदु युग

२.३.२. द्विवेदी युग

२.३.२.१. श्रीधर पाठक

२.३.२.२. नाथूराम शर्मा शंकर

२.३.२.३. सियारामशरण गुप्त

२.३.२.४. रामचंद्र शुक्ल

२.३.२.५. अयोध्यासिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’
२.३.२.६. मैथिलीशरण गुप्त
२.३.३. छायावाद
२.३.३.१. जयशंकर प्रसाद
२.३.३.२. सुमित्रानंदन पंत
२.३.३.३. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला
२.३.३.४. महादेवी वर्मा
२.३.४. हालावाद
२.३.५. राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्यधारा
२.३.५.१. रामधारी सिंह दिनकर
२.३.५.२. माखनलाल चतुर्वेदी
२.३.६. प्रगतिवाद
२.३.६.१. केदारनाथ अग्रवाल
२.३.६.२. शिवमंगलसिंह सुमन
२.३.६.३. रामविलास शर्मा
२.३.६.४. नागार्जुन
२.३.६.५. त्रिलोचन
२.३.७. प्रयोगवाद एवं नयी कविता
२.३.७.१. धर्मवीर भारती
२.३.७.२. लक्ष्मीकांत वर्मा
२.३.७.३. प्रभाकर माचवे
२.३.७.४. गिरिजाकुमार माथुर
२.३.७.५. नरेश मेहता
२.३.७.६. अज्ञेय
२.३.७.७. भवानीप्रसाद मिश्र
२.३.७.८. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
२.३.८. समकालीन कविता (सन् १९९० से पूर्व)
२.४. निष्कर्ष

अध्याय ३ : हिंदी कविताओं में पारिस्थितिक चेतना : सन् १९९० के बाद **१३६-२३६**

३.१. अनिता निहालनी
३.२. अरुण कमल
३.३. अरुण देव
३.४. अशोक वाजपेयी
३.५. इन्दु जैन
३.६. इमरोज़
३.७. ॠतुराज
३.८. एकांत श्रीवास्तव
३.९. ओमप्रकाश वाल्मीकि
३.१०. कमलेश्वर साहू
३.११. कान्ता शर्मा
३.१२. कुमार अम्बुज
३.१३. केदारनाथ सिंह
३.१४. कैलाश वाजपेयी
३.१५. गणेश गायकवाड़
३.१६. गोविंद मिश्र
३.१७. गंगाप्रसाद विमल
३.१८. चंद्रकांत देवताले
३.१९. जयप्रकाश कर्दम
३.२०. जयप्रकाश धूमकेतु
३.२१. धर्मवीर शर्मा
३.२२. नन्द चतुर्वेदी
३.२३. नवल शुक्ल
३.२४. निर्मला पुतुल
३.२५. नीलाभ

३.२६. प्रेमशंकर शुक्ल

३.२७. बद्रीनारायण

३.२८. बलदेव वंशी

३.२९. बी.एल.आर्य

३.३०. बोधिसत्व

३.३१. मदन कश्यप

३.३२. मंगलेश डबराल

३.३३. रमेश कुन्तल मेघ

३.३४. रमेश मयंक

३.३५. राग तेलंग

३.३६. राजकुमार कुम्भज

३.३७. राज्यवर्द्धन

३.३८. राजेंद्र नागदेव

३.३९. राजेश जोशी

३.४०. रामदरश मिश्र

३.४१. लीलाधर जगूडी

३.४२. लीलाधर मंडलोई

३.४३. विजेंद्र

३.४४. विनोद बिहारी लाल

३.४५. वीरेन डंगवाल

३.४६. शशि सहगल

३.४७. शैल रस्तोगी

३.४८. शैल सक्सेना

३.४९. श्रीकांत जोशी

३.५०. श्रीकृष्णकुमार त्रिवेदी

३.५१. सदानंद साही

३.५२. सुनीता जैन

३.५३. सुशांत सुप्रिय

३.५४. सूरजप्रसाद पचौरी
३.५५. संजय कुन्दन
३.५६. हरीशचंद्र पाण्डे
३.५७. हरीश गोयल
३.५८. त्रिजुगी कौशिक
३.५९. ज्ञानेंद्रपति
३.६०. ज्ञानेंद्रसाज
३.६१. निष्कर्ष

अध्याय ४ : पारिस्थितिक समस्याएँ : तुलनात्मक दृष्टि से **२३७-२८६**

४.१. जलस्रोतों का प्रदूषण
४.२. पानी का संकट
४.३. बाँध-निर्माण की समस्या
४.४. जलवायु परिवर्तन
४.५. वैश्विक तापन
४.६. अम्ल-वर्षा
४.७. वायु प्रदूषण
४.८. टेरमिनेटर जीन की समस्या
४.९. प्लास्टिक की समस्या
४.१०. कूडा-करकट की समस्या
४.११. युद्ध से पारिस्थितिक विनाश
४.१२. जंगल-विनाश
४.१२.१. पेड़-विनाश
४.१२.२. पक्षी-विनाश
४.१२.३. वन्य जीवि-विनाश
४.१३. पहाड़-विनाश
४.१४. बाढ़ की समस्या

४.१५. अकाल, सूखे की समस्या

४.१६. तूफान की समस्या

४.१७. भूकम्प की समस्या

४.१८. निष्कर्ष

अध्याय ५ : उपसंहार २८७-२९८

परिशिष्ट : कवियों के पत्र २९९-३०२

संदर्भ ग्रंथ सूची ३०३-३२९

प्राक्कथन

आज संपूर्ण दुनिया एक ओर बाज़ारवाद, नव-उपनिवेशवाद, पूँजीवाद आदि के गिरफ्त में है दूसरी ओर अनेक समस्याओं से त्रस्त है। वर्तमान युग में पारिस्थितिक चेतना और सजगता के उदय के पीछे आसन्न पारिस्थितिक संकट ही है। विज्ञान और सूचना-प्रौद्योगिकी ने विकास के नये आयाम खोल दिये हैं। साथ ही मनुष्य की स्वार्थ-लिप्सा में परिस्थिति को काफी धक्का भी लग रहा है। उपभोक्तवादी या बाज़ारवादी संस्कृति से प्रभावित वर्तमान मानव के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी अलाउदीन का चिराग है। विश्वकल्याण के नाम पर हो रहे उनके नये-नये आविष्कार पृथ्वी, आकाश, मिट्टी जैसे पारिस्थितिक तत्वों के लिए संहारक साबित हो रहे हैं। पारिस्थितिक तंत्र को असंतुलित कर हो रहे विकास की इस अंधी दौड़ में विकास के साथ-साथ मानव सहित कई जीव-जंतुओं की आसन्न मृत्यु की घंटी भी बज रही है।

नयी भोगवादी संस्कृति ने प्रकृति को उपभोग की वस्तु बनाकर इको-सिस्टम को पूरी तरह मटियामेट कर दिया है। मुनाफे पर आधारित विश्व गाँव में प्राकृतिक संसाधन भी अर्थ कमाने की चीज़ मात्र है। इसके कारण पारिस्थितिक प्रदूषण आज की वैश्विक समस्याओं में प्रमुख बन गया है। आज के जलवायु परिवर्तन, ओज़ोन पर्त-क्षरण, भौम तापन आदि अनेक पारिस्थितिक समस्याओं को निपटाने के लिए राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किया जा रहा है। कोपनहेगन सम्मेलन, क्योटो प्रोटोकोल आदि इसमें प्रमुख हैं। पारिस्थितिक तत्वों का न शोषण कर, माधुर्यपूर्ण संबंध स्थापित कर पारिस्थितिकी की रक्षा का संकल्प लेना वर्तमान युग की महत्ती आवश्यकता है। इसके प्रति हिंदी कवियों की निगाह चौकन्नी है। पारिस्थितिक संरक्षण एवं संकट की अभिव्यक्ति हिंदी कविता में भी दृष्टिगत होती है। वास्तविक रूप से कहा जाय तो वैश्विक स्तर पर पारिस्थितिक संरक्षण की संवाहिका है समकालीन कविता। हिंदी कविता आदिकाल से लेकर आज तक के मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों में आये बदलाव को सशक्त रूप से अभिव्यक्ति देती है। प्राचीन काल में यह प्रकृति चित्रण के रूप में रही तो अब पर्यावरण समस्याओं के रूप में। विद्यापति, सूर, तुलसी आदि पुराने कवियों से लेकर केदारनाथ सिंह,

अरुण कमल, राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रपति, हरीशचंद्र पाण्डे, कुमार अम्बुज, मदन कश्य, बलदेव वंशी आदि अनेक समकालीन कवियों की चिंताएँ भी प्रकृति के साथ जुडी हैं। प्राकृतिक संसाधनों के शोषण या विनाश को रोककर पारिस्थितिक संरक्षण व संतुलन बनाये रखना उनकी कविताओं का संदेश है।

यहाँ शोध के लिए चुना हुआ विषय है - 'पारिस्थितिक चेतना : समकालीन हिंदी कविता में (सन् १९९० के बाद के विशेष संदर्भ में)'। अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबंध को चार अध्यायों में बाँटा गया है -

पहला अध्याय है - 'पारिस्थितिक चेतना : एक रूपरेखा'। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने वैश्विक स्तर पर पारिस्थितिक समस्याओं को और भी अधिक गंभीर बना दिया है। जलवायु-परिवर्तन, भौम-तापन, ओज़ोन पर्त-क्षरण, पानी की कमी जैसे पारिस्थितिक संकट की मार विकसित और विकासशील राष्ट्रों के लिए युद्ध के समान है। बाज़ारवादी, उपभोक्तावादी, नव-उपनिवेशवादी संस्कृति से प्रभावित हम अपने सुख-भोग की लालसा की पूर्ति करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों को अत्यधिक उपभोग कर अपनी जन्म धात्री धरती माँ के अस्तित्व को भी खतरे में डालते हैं। यहाँ पर्यावरण-प्रदूषण की समस्याओं, आयामों तथा पर्यावरण संरक्षण कानून आदि का विवेचन किया गया है।

दूसरा अध्याय है - 'पारिस्थितिक चेतना : हिंदी कविता में - एक पूर्व पीठिका'। इसमें आदिकाल से लेकर सन् १९९० तक की कविताओं में विद्यमान पारिस्थितिक चेतना पर विचार किया गया है। मानव के विकास के साथ-साथ मानव एवं पर्यावरण के संबंधों में बदलाव आया है। उसका संकेत इस अध्याय में मिलता है। आदिकाल से लेकर सन् १९९० तक के कवियों ने अपनी कविताओं में प्रकृति एवं परिस्थिति को चर्चा का विषय बनाया है। कवि पारिस्थितिक असंतुलन पर अधिक चिंतित हैं और पारिस्थितिक संरक्षण की आवश्यकता के बारे में बताते हैं। क्योंकि भूमण्डलीकरण, निजीकरण के नाम पर नव-उपनिवेशवादी, पूँजीवादी शक्तियों ने पर्यावरण को प्रदूषित करने के साथ-साथ नदी, पेड़ जैसे प्राकृतिक संसाधनों पर अपना आधिपत्य भी स्थापित किया है। आज की इस भीषण स्थिति का उल्लेख यहाँ मिलता है।

तीसरा अध्याय है - 'हिंदी कविताओं में पारिस्थितिक चेतना : सन् १९९० के बाद'। इक्कीसवीं शती में सबसे अधिक चर्चित विषय है - पारिस्थितिक असंतुलन। जिसका मूल कारण भूमण्डलीकरण, पूँजीवाद, नव-उपनिवेशवाद के साथ-साथ विकास के नाम पर हो रहे मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन है। भूमण्डलीकरण, उपभोक्तावाद आदि से प्रभावित वर्तमान मानव प्रकृति के बारे में चिंतित न होकर उनके संसाधनों को बेचकर या प्रदूषित कर किसी न किसी रूप में मुनाफा या लाभ कमाने के बारे में मात्र ही सोचते हैं। इसके प्रति चिंतित हैं समकालीन कवि। मानव सहित सभी जीवजंतुओं का जीवन पूर्णतः प्रकृति पर निर्भर है। जब तक मानव प्रकृति से जुड़ नहीं जाता है तब तक पारिस्थितिक संकट को रोकना असंभव है। इस अध्याय में सन् १९९० के बाद की कविताओं में अभिव्यक्त पारिस्थितिक चेतना का विश्लेषण है।

चौथा अध्याय है - 'पारिस्थितिक समस्याएँ : तुलनात्मक दृष्टि से'। मल्टी नैशनल कंपनियाँ, मॉल संस्कृति, हाइटेक ज़माना आदि पारिस्थितिकी के स्नायु तंत्र को छिन्न-भिन्न कर उनके संतुलन को नष्ट करेंगे। जलवायु परिवर्तन, भौम तापन, पशु-पक्षी विनाश, पेड़-विनाश, पानी की कमी, नदी संकट, एसिड़ वर्षा, बाँध-निर्माण से उत्पन्न संकट, सूखा, बाढ़ जैसे पारिस्थितिक संकटों का प्रमुख कारण मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न पारिस्थितिक असंतुलन है। इन समस्याओं पर समकालीन हिंदी कवि प्रस्तुत विचार-विमर्शों में साम्य और वैषम्य देख सकते हैं। फिर भी सभी कवियों ने पारिस्थितिकी के संतुलन बनाये रखने पर बल दिया है। साथ ही युगीन ज्वलंत पारिस्थितिक समस्याओं पर आशंका व्यक्त की है। अंत में उपसंहार है, जिसमें इस शोध-प्रबंध का निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध कालिकट विश्वविद्यालय के असोसिएट प्रोफेसर डॉ.प्रमोद कोवप्रत जी के निर्देशन में संपन्न हुआ है। उन्होंने व्यस्ततापूर्ण समय में मेरी जिज्ञासाओं, त्रुटियों को दूर कर अमूल्य सुझाव एवं समय-समय पर प्रेरणा देकर मुझे प्रोत्साहित किया है। उनके विद्वतापूर्ण निर्देशन, प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा शुभ आशिर्वाद का फल है यह शोध-प्रबंध। ज्ञान के आलोक से संपन्न गुरुवर डॉ.प्रमोद जी ने मेरे लिए जो उपकार किया है वह असीम है। उनके स्नेहाशीश को कृतज्ञता, आभार जैसे शब्दों से व्यक्त कर गुरु ऋण से मुक्त होना मेरे लिए असंभव है। उनके असीम स्नेह, सहयोग, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के लिए मैं सदैव उनका ऋणी हूँ।

विभाग के प्रो.आरसु जी एवं प्रो.सुधा जी से सामग्रियों की सूचना एवं प्रेरणा मुझे मिली है। उनके प्रति भी हृदय से हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ। विभाग के अध्यक्ष तथा अन्य सभी गुरुजनों के प्रोत्साहन एवं सहयोग के लिए कृतज्ञता प्रकट करती हूँ। मेरे जीवन साथी श्री.सुनीष एवं परिवारवालों का पूर्ण सहयोग एवं प्रोत्साहन मुझे सदैव मिलते रहे। उन सबके प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ।

शोध कार्य में कवि ज्ञानेंद्रपति, अरुण कमल, राजेश जोशी, मदन कश्यप, स्वप्निल श्रीवास्तव, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, हेमंत कुकेरती, शैलेंद्र कुमार आदि कवियों से फोन व पत्राचार के माध्यम से विचार-विमर्श करने का मौका मुझे मिला है। इससे मैं बहुत लाभान्वित हुई हूँ। उन सभी कवियों के प्रति भी मैं हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ। इसके अतिरिक्त डॉ.दिनेश चमोला ‘शैलेश’ ने सामग्री संकलन में सहायता दी है। उनके प्रति भी मैं हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ। अंत में सभी हितैषियों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ।

कालिकट विश्वविद्यालय **सिन्जु.ए**
29.6.2012

Sinchu A. “Ecological consciousness in contemporary Hindi poetry (with special reference to post 1990), Thesis. Department of Hindi, University of Calicut, 2016.

अध्याय १

पारिस्थितिक चेतना : एक रूपरेखा

१.१. पारिस्थितिकी : अर्थ एवं परिभाषा

विज्ञान की एक बहुआयामी शाखा है - पारिस्थितिक विज्ञान। 'इकोलजी' शब्द का हिंदी रूपांतर है - पारिस्थितिकी। "१८६० के आसपास जर्मन जीव-वैज्ञानिक हाकेल (Ernest Hackel) ने सबसे पहले इकोलजी (Ockologie) शब्द का प्रयोग किया है। Oikas और logos नामक दो ग्रीक शब्दों से बना है इकोलजी। Oikas का अर्थ घर या place to live और logos का अर्थ Habitat है।"[१]

पारिस्थितिकी की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं - "Ecology is the interdisciplinary scientific study of the distribution and abundance of organisms and their interactions with their environment."[२] माकहॉउस एवं स्माल के अनुसार - "पारिस्थितिकी जीवों और पर्यावरण के आपसी संबंधों का विज्ञान है।"[३] एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में पारिस्थितिकी को इस प्रकार परिभाषित किया है - "Study of the relationship between organisms and their environment."[४]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि पारिस्थितिकी पशु, पक्षी, जीव, पेड़-पौधों, अन्य प्राणियों और मानव तथा उनके पर्यावरण के अन्तर-संबंधों का विज्ञान है, जिसमें पूरी आवास व्यवस्था शामिल है।

१.२. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी का संबंध जैविक तथा अजैविक तत्वों से है। इकोलजी का प्रारंभिक अध्ययन वनस्पति और उसके वातावरण के बीच के संबंधों पर ही केंद्रित है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वैज्ञानिकों ने संपूर्ण जीव-जगत् और पर्यावरण के संदर्भ में जोड़कर इसका अध्ययन करना शुरू किया। पारिस्थितिकी का एक प्रमुख घटक पर्यावरण है। पर्यावरण के जो तत्व हैं वही तत्व पारिस्थितिकी के भी होते हैं। इसलिए इन दोनों का एक घनिष्ठ संबंध है।

पर्यावरण - परि + आवरण शब्दों से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है वातावरण या चारों ओर से ढका हुआ। अंग्रेज़ी भाषा में पर्यावरण को 'एनवायोरनमेण्ट' कहा गया है। इस शब्द का अर्थ 'सराउंडिङ्स' है। प्रसिद्ध पर्यावरणविद् एवं भूगोलवेत्ता डडले स्टाम्प के अनुसार - "पर्यावरण प्रभावों का ऐसा योग है जो जीव के विकास एवं प्रकृति को परिवर्तित तथा निर्धारित करता है।"[५] डी.डेविस के अनुसार - "पर्यावरण से अभिप्राय जीव को चारों ओर से घेरे उन सभी भौतिक स्वरूपों से है, जिनमें वह रहता है, जिनका उसकी आदतें, उसकी क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के स्वरूपों में भूमि, जलवायु, मिट्टी की प्रकृति, वनस्पति, प्राकृतिक संसाधन, खनिज, जल-थल आदि सम्मिलित हैं।"[६] संक्षिप्त रूप से कहा जाये तो पर्यावरण मानव सहित संपूर्ण जीव-जगत् के विकास को प्रभावित करनेवाली समस्त पारिस्थितिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटकों का समुच्चय है।

१.२.१. पर्यावरण : वर्गीकरण

पर्यावरण को प्रमुख रूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है - प्राकृतिक पर्यावरण (Natural Environment), सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण (Socio-cultural Environment)

१.२.१.१. प्राकृतिक पर्यावरण

प्राकृतिक पर्यावरण को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है - जैविक पर्यावरण और भौतिक पर्यावरण। जैविक पर्यावरण में पेड़-पौधे, जीव-जंतु आदि आते हैं। इसके अंतर्गत उत्पत्ति, विकास, पोषण और प्रजनन जैसी विभिन्न जैविक क्रियाएँ चलती रहती हैं। भौतिक पर्यावरण के अंतर्गत जल, मृदा, वायु, प्रकाश, खनिज, जलवायु, भूम्याकार आदि तत्व समाहित होते हैं। प्राकृतिक पर्यावरण के विभिन्न तत्वों के माध्यम से समस्त जन-जीवन को पारिस्थितिकी गतिशील बनाती है। इन तत्वों का निर्माण और संचालन प्रकृति द्वारा होता है।

१.२.१.२. सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण

मानवीय क्रियाकलापों की अभिव्यक्ति या मानव द्वारा निर्मित पर्यावरण है- सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण। सामाजिक पर्यावरण का निर्माण समाज, संस्था, परंपराएँ, धर्म, नैतिकता और सामाजिक मूल्य से होता है। विज्ञान, यंत्र, कारखाने, उद्योग एवं प्रौद्योगिकी आदि सांस्कृतिक पर्यावरण के अंतर्गत आते हैं। कला, धर्म, साहित्य, विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से समाज को गतिशील बनाया है।

आज पर्यावरण और पारिस्थितिकी व्यावहारिक विज्ञान है। दिन-प्रतिदिन इसका बहुमुखी विकास हो रहा है। पादप पारिस्थितिकी (Plant ecology), जनसंख्या पारिस्थितिकी (Population ecology), समुदाय पारिस्थितिकी (Community ecology), संरक्षण पारिस्थितिकी (Conservation ecology), भौगोलिक पारिस्थितिकी (Geo ecology) आदि पारिस्थितिकी की प्रमुख शाखाएँ हैं। पृथ्वी हमारी पारिस्थितिकी होने के कारण इसे जीवमण्डल या बयोस्फियर कहते हैं। संक्षिप्त रूप से कहा जाये तो प्रकृति में स्थित सभी प्रकार के ढाँचे और मानव द्वारा संपन्न क्रियाकलापों का वैज्ञानिक अध्ययन पारिस्थितिकी है।

१.३. पारिस्थितिकी एवं मानव

पारिस्थितिकी का मुख्य कारक है मानव। मानव एवं पारिस्थितिकी का संबंध एक दूसरे का पूरक है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व संभव नहीं। मानव और पारिस्थितिकी का अनन्य पारस्परिक संबंध होने के कारण पारिस्थितिकी का प्रभाव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानव पर भी पड़ता है। मानव पारिस्थितिकी संबंधों का स्वरूप समय के साथ-साथ बदल रहा है। बदलते इस संबंधों को समझने के लिए मानव की विकास यात्रा को ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखना होगा। कार्बन-१४ तथा पोटेशियम आर्गन विधि के अनुसार पारिस्थितिकी में लगभग दस लाख वर्ष पूर्व में मानव विकसित हुआ। आज सभ्यता के विकास तथा टेक्नॉलजी की प्रगति के साथ-साथ पारिस्थितिकी का भी थोड़ा बहुत नुक्सान हो रहा है।

१.३.१. प्रागैतिहासिक काल

यह मानव के विकास का प्रारंभिक काल है। इस काल में मनुष्य पूर्णतः पारिस्थितिकी पर निर्भर है। मानव खुली हवा में रहते थे। विकास की प्रारंभिक अवस्था में घुमक्कड़ जीवन यापन कर अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति पारिस्थितिकी में हुई। उस समय के जानवर या जीव-जंतु प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानव का सहयोग करते रहे हैं। जंगली जानवरों ने उसे भोजन और कपड़ा देने में सहायता प्रदान की। भोजन हेतु जंगली जानवरों का शिकार किया गया, लेकिन उनसे वन्य-प्राणियों के अस्तित्व में कोई संकट नहीं आया था। यह मानव और पारिस्थितिकी के सामंजस्य का द्योतक है। धीरे-धीरे वह प्रकृति से कुछ प्राप्त करना सीख लिया। विकास की गति प्रारंभिक काल में धीमी थी।

१.३.२. पशुपालन एवं कृषि काल

मानव विकास-यात्रा के इस काल में पारिस्थितिकी का शोषण प्रारंभ हुआ। घुमक्कड़ जीवन को छोड़कर धीरे-धीरे स्थायी जीवन-यापन करने लगा, जिसका मूल उद्यम कृषि है। मानव की जीवनदायिनी गति है कृषि एवं पशुपालन। धीरे-धीरे लोगों ने अपने आस-पास के पेड़-पौधों को काटना शुरू किया। कृषि भूमि के लिए वनों को साफ करने लगे। मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धीरे-धीरे पारिस्थितिकी को हस्तक्षेप करने लगे। इस काल में मानव पारिस्थितिकी पर स्वच्छंद विहार करने लगे।

१.३.३. आधुनिक काल

आज के पारिस्थितिक असंतुलन से समूचे मानव जाति का जीवन खतरे में है। आज के मानव ने विकास के नाम पर पारिस्थितिकी का दोहन शुरू किया। एक प्रमुख कारण मानव की अपरिमित लालच है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के फलस्वरूप आज के बुद्धि संपन्न मानव अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं के अनुरूप पारिस्थितिकी को भी नियंत्रित करने का प्रयास करने लगे। विकास की

सीमाओं को लाँघता हुआ वह पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ जाने तक पहुँच गया। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी और जैव प्रौद्योगिकी का विकास, जनसंख्या वृद्धि, युद्ध या अणुविस्फोट आदि के कारण आज के समूचे विश्व के पारिस्थितिक संतुलन में व्यवधान पैदा हुआ है। इसका मुख्य कारक मानव है। मानव की निम्नलिखित प्रवृत्तियों से पारिस्थितिकी असंतुलन खतरनाक स्तर पर पहुँच चुका है - हरे-भरे वृक्षों की अंधाधुंध कटाव, भू-उत्खनन, जनसंख्या वृद्धि, नदी, तालाब जैसे अन्य जलाशयों की गति को मोड़ना, समुद्रों में किये जा रहे परमाणु परीक्षण, रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से आविष्कृत नये-नये इलेक्ट्रॉनिक साधनों के उपयोग, नाभिकीय अस्त्रों का प्रयोग, औद्योगिक और प्रौद्योगिक विकास के नाम पर प्रकृति से अधिक छेड़छाड़ एवं प्राकृतिक संसाधनों के अनर्गल शोषण, जंगली जानवरों का शिकार, शोर, वाहनों से निकलनेवाले धुएँ, औद्योगिक, रासायनिक, घरेलू कूड़ा-करकट, ई-वेस्ट और ई-गारबेज आदि से।

आज के उपभोक्तावादी मानव ने पारिस्थितिकी को प्रदूषित करने के साथ-साथ उसके संसाधनों को भी कम किया है। पारिस्थितिकी की सभी क्रियाएँ और समस्त तत्व किसी न किसी रूप में मानव जगत् से जुड़े हुए हैं। ये पारिस्थितिकी तत्व मानवीय गतिविधियों का संचालन करते हैं। आज के मानव पारिस्थितिकी के कण-कण में छिपी शक्ति को अपनी इच्छानुसार मोड़कर दोहन करने के कारण पारिस्थितिक संतुलन दिन-प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा है। मानव-पारिस्थितिकी का संबंध व्यावसायिकता से युक्त होने के कारण इसका भविष्य भयंकर होगा। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी की अंधी दौड़ में मानव को पारिस्थितिकी की असली चेतना को पहचानना आवश्यक है।

१.४. प्रदूषण

पारिस्थितिकी असंतुलन से उत्पन्न हुई घातक विष का नाम है प्रदूषण। यह एक पारिस्थितिक संकट है। आज संपूर्ण जीव-जगत् के अस्तित्व पर प्रदूषण का खतरा मंडरा रहा है। जल, थल, वायु और नभ आदि प्रदूषण के चंगुल में फँसे हैं। मानव अपने स्वार्थ के लिए बेरहमी से प्रकृति का नाश कर रहे हैं। उसी से प्रदूषण

जैसी गंभीर समस्या उत्पन्न हुई। पारिस्थितिक-प्रदूषण से तात्पर्य पारिस्थितिकी की भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक गुणवत्ता में प्राकृतिक अथवा मानवकृत होनेवाले हानिकारक या अवांछित परिवर्तनों से है।

१.४.१. प्रदूषण - अर्थ एवं परिभाषा

हिंदी के दूषण शब्द से प्रदूषण की व्युत्पत्ति हुई। इसका अर्थ है खराब होना। इसको अंग्रेज़ी में Pollution कहते हैं। इस शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के पोल्यूर से हुई है। भारतीय मानक संस्थान (ISI) ने प्रदूषण को इस प्रकार परिभाषित किया है - "प्राकृतिक वातावरण में किसी भी बाहरी पदार्थ का मिश्रण प्रदूषण कहलाता है। यदि वह जैवमण्डल के जीवों और वनस्पतियों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है।"[७] दूसरी एक परिभाषा के अनुसार - "Pollution is the introduction of contaminants into an environment that causes instability, disorder harm or discomfort to the ecosystem ie Physical systems or living organisms."[८]

१.४.२. प्रदूषण के प्रकार

प्रदूषण कई प्रकार के हैं। मानवीय क्रियाकलापों से पारिस्थितिकी के अजैविक संघटकों की गुणवत्ता परिवर्तित हो जाते हैं। भौतिक या अजैविक संघटकों की प्राकृतिक गुणवत्ता ह्रास हो जाने की अवस्था भौतिक प्रदूषण है। इसमें स्थल, जल और वायु प्रदूषण आते हैं। शैक्षिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, दार्शनिक, जातीय एवं सांप्रदायिक दंगा और झगड़ा-फसाद आदि अनेक सामाजिक कारणों से सामाजिक गुणवत्ता का ह्रास हो जाता है तो सामाजिक प्रदूषण होता है। धार्मिक, आर्थिक, नैतिक, जातीय और सांस्कृतिक प्रदूषण इस प्रकार के हैं। आर्थिक प्रदूषण के अंतर्गत प्राकृतिक प्रकोप और गरीबी आते हैं।

औद्योगिक कचरा, घरेलू कचरा और कूड़ा-करकट आदि प्रदूषकों के जमाव से बिंदु प्रदूषण उत्पन्न होता है। रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक आदि अप्रत्यक्ष

कारकों से पारिस्थितिकी प्रदूषित होती है, वह अबिंदु प्रदूषण है। भौगोलिकता के आधार पर स्थानीय प्रदूषण, राष्ट्रीय प्रदूषण (समुद्र, नदी और पर्वत प्रदूषण), अंतर्राष्ट्रीय प्रदूषण (ऊर्जा संकट, खनिज संकट और नाभिकीय प्रदूषण) और ब्रह्माण्ड प्रदूषण (अन्तरीक्ष प्रदूषण) आदि होते हैं। प्रदूषक स्रोतों के आधार पर औद्योगिक, रासायनिक, जनसंख्या, नाभिकीय और प्लास्टिक प्रदूषण आदि कई प्रकार के प्रदूषण हो सकते हैं।

१.५. प्रदूषक

कोई पदार्थ या तत्व पारिस्थितिकी संतुलन में अव्यवस्था पैदा कर प्रदूषण जन्म लेता है, तो ऐसे तत्वों या पदार्थों को प्रदूषक कहते हैं। प्रदूषक में प्राकृतिक व मानव निर्मित प्रदूषक प्रमुख है। पारिस्थितिकी संतुलन को बिगड़नेवाले पारिस्थितिकी कारकों को प्राकृतिक प्रदूषक कहते हैं। इसके अंतर्गत भूस्खलन व ज्वालामुखियों से उत्पन्न धूल, लावा के साथ अन्य ज़हरीले रसायन पदार्थ भी आते हैं। पारिस्थितिकी में उत्पन्न हो जाने के कारण इसमें सुधार आ सकता है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न पारिस्थितिकी तंत्र को असंतुलित करनेवाले प्रदूषक को मानव-निर्मित प्रदूषक कहते हैं। उदा : औद्योगिक एवं रासायनिक अपशिष्ट, घरेलू कचरा और ई-कचरा आदि। फिर औद्योगिक प्रदूषक (एयरोसॉल, अस्बेस्टस, सीसा पार आदि), गैसीय प्रदूषक (कार्बन-डाइ-ऑक्साइड, क्लोरो फ्लूरो कार्बन गैसें आदि), तरल प्रदूषक (तेल, ग्रीज़ और जल में मिला हुआ ठोस पदार्थ आदि) आदि अन्य प्रदूषक हैं।

१.६. जल-संकट

प्रकृति प्रदत्त उपहार जल सृष्टि के आदि तत्व है। आर्थिक, सांस्कृतिक और जैविक दृष्टि से बहुमूल्य प्राकृतिक धरोहार है जल। जल ही जीवन है यानी मानव सहित संपूर्ण जीव-जगत् के अस्तित्व का स्रोत है जल। इसके बिना सृष्टि की कल्पना असंभव है। जल-पारिस्थितिकी संकट की समस्या विकसित और विकासशील राष्ट्रों के समक्ष सबसे भीषण संकट है। आज पीने का पानी भी विषैला हो चुका है। पेयजल आपूर्ति के प्रमुख जलस्रोत आज अपना अस्तित्व खोकर गंदगी का पर्याय बन

चुके हैं। बढ़ती आबादी और पानी की खपत के कारण दिन-प्रतिदिन जल संकट गहराता जा रहा है। कहा जाता है कि तीसरा विश्वयुद्ध पानी पर होगा।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने जल प्रदूषण के बारे में इस प्रकार लिखा है कि- "जब जल में भौतिक या मानवीय कारणों से कोई बाहरी पदार्थ मिलकर जल के स्वाभाविक या नैसर्गिक गुणों में परिवर्तन लाते हैं और जिसका कुप्रभाव जीवों के स्वास्थ्य पर प्रकट होता है तो ऐसे जल को प्रदूषित जल कहा जाता है।"[९] अनावश्यक लवण, कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ, कारखानों से निकलनेवाले औद्योगिक अपशिष्ट, रेडियोधर्मी अपशिष्ट, औद्योगिक इकाइयों तथा अन्य जल संयत्रों से निकले अपशिष्ट, मल-मूत्र, कूडा-करकट, मृत जीव-जंतु और ई-जंक आदि प्रमुख जल प्रदूषक हैं। इन पदार्थों के मिलने जल के प्राकृतिक गुणवत्ता नष्ट हो जाते हैं और पारिस्थितिकी तंत्र बिगड़ जाते हैं।

पानी की हर बूँद कीमती है। आज के मानव की ज़रूरत पूर्ति करने के लिए धरती का सारा पानी नकाफी है। इक्कीसवीं सदी का प्रमुख संकट पानी की समस्या है। यह एक आदमी की समस्या नहीं है। संपूर्ण विश्व की समस्या है। स्वच्छ पानी प्रदान करनेवाले हमारे जलस्रोत आज विषैली होकर लोगों में नये-नये रोग उत्पन्न करने का साधन मात्र बनकर रह गये हैं। स्वच्छ पानी बनाने के लिए क्लोरिन का उपयोग करना पड़ता है, जिसके फलस्वरूप पानी का प्राकृतिक स्वरूप विनष्ट हो जाता है। आज पीने के लिए शुद्ध पानी मिलना कठिन है, भविष्य में इसकी स्थिति भयंकर होगी। "सन् २०३२ तक दुनिया की आधे से ज़्यादा आबादी पानी की अत्यधिक कमीवाले क्षेत्रों में रहने को विवश होगी।"[१०]

विश्व के ८% पानी मानवीय क्रियाकलापों से दिन-ब-दिन प्रदूषित होता जा रहा है। प्रदूषित जल का घातक प्रभाव मानव सहित अन्य जीवों पर पड़ता है। जिसके कारण वैश्विक स्तर के अनेक लोग जल-जनित रोगों से त्रस्त हैं। इन खतरनाक रोगों में प्रमुख हैं - मिनामाता, असबोस्टोसिस, मियादी ज्वर और पैराटाइफाइड आदि। भारत के अधिकांश लोगों में फ्लोराइडयुक्त पानी पीने से फ्लोरोसिस नामक रोग आम तौर पर पाया जाता है। जनसंख्या-वृद्धि, शहरीकरण,

औद्योगिक विकास और हरितक्रांति आदि के कारण पानी की आवश्यकता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। इसके फलस्वरूप शुद्ध पेयजल कम हो रहा है।

बढ़ती आबादी के कारण पानी की उपयोगिता आनेवाले वर्षों में नब्बे प्रतिशत से अधिक हो जायेगी। डिटरजेंट, साबुन, पाउडर आदि अपमार्जकों के उपयोग से जलस्रोत प्रतिदिन प्रदूषित हो रहा है। सीवरेज से जल में हानिकारक कीटाणु प्रवेश कर उनकी स्वच्छता को नष्ट कर रहे हैं। लगातार बढ़ती आबादी और पानी की खपत के कारण आगामी वर्षों में जलीय जीव, जीव-जंतु और वनस्पति का जीवित रहना कठिन हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार सन् २०५० में संसार का हर आदमी पानी की समस्या से त्रस्त होगा। संयुक्त राष्ट्र संघ के आँकडों के अनुसार छह अरब की आबादीवाले विश्व में हर व्यक्ति पेयजलापूर्ति और २.४ अरब के लोग साफ-सफाई की सुविधा से भी वंचित हैं।

१.६.१. नदी की मौत

आज नदियाँ औद्योगिक अपशिष्ट, मृतकों के शव, रसायनिक अपशिष्ट, रेडियोधर्मी अपशिष्ट, कूडा-कचरे और ई-जंक आदि से विश्व का वेस्ट-बॉक्स बन गयी हैं। इससे नदियों के दुर्लभ जलीय जीवों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व समाप्ति की ओर है। २२ मार्च को विश्व जल दिवस घोषित कर १९७७ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्वजल सम्मेलन आयोजित किया। इसमें १९८१ से १९९० तक अंतर्राष्ट्रीय पेयजल दशक मनाया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ की ५८ वें अधिवेशन में "जीवन के लिए जल का अंतर्राष्ट्रीय दशक" की घोषणा की है। फिर भी नई प्रौद्योगिकी एवं दिन-प्रतिदिन बढ़ते जनसंख्या से विश्व की विभिन्न नदियों एवं जलस्रोतों का शोषण चल रहा है। आज की नयी रिपोर्ट के अनुसार हिमालय के ग्लेशियर पिघलने से अगली सदी में नदियाँ लुप्त हो जायेंगी। इससे भारत के धौली और गौरी गंगा नदियों की स्थिति भी खराब है। अधिकाधिक गंदगी के कारण नदियों में ऑक्सिजन डिमांड में वृद्धि हो रही है, इसके साथ ही धीरे-धीरे नदियाँ मृत्यु की ओर अग्रसर हो रही है। भारत के आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं पर्यावरणीय नदी गंगा आज मृत्यु के कगार पर है। दिन-प्रतिदिन सूखते जा रहे गंगा को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए पारिस्थितिकी विभाग

की एक शाखा के रूप में १९८५ जून में गंगा परियोजना निदेशालय की स्थापना की है।

कावेरी, गंगा, पेरियार आदि नदियों में निरंतर बढ़ रहे रेडियो सक्रिय विषाक्त अपशिष्टों से जलीय जीवों एवं वनस्पतियों का अस्तित्व खतरे में है। बाँधों का निर्माण और विस्थापन भी पानी को प्रदूषित कर रहा है। इसका निर्माण पारिस्थितिकी के लिए एक गंभीर खतरा है। इससे पानी स्रोत भी सूख रहे हैं। श्रीशैलम बाँध, भाखड़ा बाँध, टिहरी बाँध और सरदार सरोवर से मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों को थोड़ा-बहुत नुकसान पहुँचाया है। इससे वन विनाश, भूक्षरण, भू-स्खलन, जल-जमाव, कृषि भूमि का ह्रास आदि अनेक संकट पैदा हो रहे हैं। मेधा पड्कर के नेतृत्व में चलायी गयी 'नर्मदा बचाओ आंदोलन' इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय कदम है। आज नदी को लेकर ही झगड़ा चल रहा है। विभिन्न राज्यों के बीच यह युद्ध देख सकते हैं। मुल्लपेरियार डाम के प्रति केरल और तमिलनाडु के बीच आज भी झगड़ा चल रहा है। जल संकट के बारे में जनता को जागरूक बनाना चाहिए, नहीं है तो भविष्य में एक बूँद पानी के लिए हम तरसेंगे।

१.७. वायु-संकट

प्रगत विश्व के सबसे बड़ा अभिशाप है - वायु प्रदूषण। मानव जीवन केलिए अति आवश्यक तत्व है वायु। इसके बिना ज़िंदा नहीं रह सकता। औद्योगिकीकरण, जनसंख्या वृद्धि, थर्मल पवर प्लाण्ड से निकलनेवाली सल्फर डाइ ऑक्साइड, आणविक एवं रासायनिक प्रयोग, डीज़ल इंजिन से निकलनेवाली धुआँ, रेडियोधर्मी विकिरणों से उत्पन्न ज़हरीली गैसें वायु प्रदूषण को बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त ब्लास्टफर्नेस भट्टियों से निकलनेवाली पाली साइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन भी वायु मण्डल को प्रदूषित कर रहे हैं। औद्योगिक रसायनिक अपशिष्ट, कूडा-करकट, इलेक्ट्रॉनिक कचरे आदि को जलने से भी वायु अत्यंत ज़हरीली बन जाती है। वायु मण्डल के इस अवांछनीय परिवर्तन के साथ-साथ उसमें ज़हरीली तत्वों की मात्रा बढ़ने की अवस्था को वायु प्रदूषण कहते हैं। इसका कारण प्राकृतिक और मानव-जनित भी होता है। यह विषाक्तता मानव की साँस में घुलकर श्वास रोग, हृदय

रोग जैसे अनेकानेक लाइलाज बीमारियों का शिकार होता जा रहा है। मानव सहित सभी जीवजंतु एवं वनस्पति पर इसका बुरा प्रभाव पडेगा।

वायु प्रदूषण से अम्ल वर्षा, हरित ग्रह प्रभाव, वैश्विक तापन, ओज़ोन-क्षरण, स्मोग आदि घटनाएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। ऊष्माशोषी गैस बढ़ने के कारण वायु पारिस्थितिकी तंत्र हरित गृह का रूप धारण करता है। इससे हवा में भी ज़हर घुल जाता है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के बल पर मानव के बिना सोचे-समझे क्रियाकलाप ने वायु प्रदूषण को भी बढ़ावा दिया है। वायु प्रदूषण को रोकने के लिए कदम उठाना होगा। वृक्षारोपण पर बल देना है, मोटोरवाहनों, बहुराष्ट्रीय उद्योगों से निकलनेवाली धुएँ को रोकना है, साथ ही पेट्रोल, डीज़ल जैसे ईंधनों को कम से कम उपयोग करना है, एवं जनसंख्या वृद्धि, अनियोजित औद्योगिकीकरण और शहरीकरण को रोकना है। औद्योगिक विकास, विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौड़ में फैल रहे वायु प्रदूषण को रोकना परम आवश्यक है।

१.८. मिट्टी का प्रदूषण

"मेरे देश की माटी सोना उगले,
उगले हीरे मोती।"[११]

यह भारतीय आत्मा की सच्ची आवाज़ है, क्योंकि भारत की मिट्टी चंदन के समान है। मृदा का संकट वनस्पति, जीवजंतु और मानव का भी संकट है। जल, वायु, खनिज तथा जैव पदार्थ का मिश्रण है मृदा। यह एक प्राकृतिक पिंड है। पारिस्थितिकी का चौथा साम्राज्य है मिट्टी। मिट्टी एक बहुमूल्य धरोहर है। उर्वरक, कीटनाशक एवं अन्य धातु लवणों के प्रयोग से मिट्टी दिन-प्रतिदिन प्रदूषित हो रहा है। मिट्टी के भौतिक, रासायनिक, जैविक गुणों को मानव अविवेकपूर्ण तरीके से उपयोग कर भूमि की प्राकृतिक स्वरूप को दिन-प्रतिदिन नष्ट कर रहे हैं। "भूमि के भौतिक, रासायनिक जैविक गुणो में कोई भी अवांछित परिवर्तन, जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े या जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो भू-प्रदूषण कहलाता है।"[१२] नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, बढ़ती हुई जनसंख्या,

रहन-सहन के तरीकों में बदलाव, तकनीकी उपकरणों के प्रयोग, व्यर्थ पदार्थों का उत्पादन, खनन आदि मृदा प्रदूषण के स्रोत हैं।

विभिन्न तरीकों के खेती और कृषीय अपशिष्ट से मिट्टियों की अपक्षयण हो जाता है। अधिक से अधिक अन्न उगाने के लिए डी.डी.टी, हाइड्रोकार्बन और फसलों पर छिड़के जानेवाले पेस्टीसाइडों को अधिक मात्रा में प्रयुक्त हो रहा है। यह मानव के लिए ही नहीं मिट्टी को भी घातक है। वाहित मल जल या खारे जल से कृषि भूमि निरंतर सिंचाई करने से भी मिट्टी की उर्वरता नष्ट हो जायेगा। मृदा प्रदूषण का एक ओर कारण भू-क्षरण है। वृक्षों की लगातार कटाई, समय-समय पर आनेवाली बाढ़, तेज़ हवा आदि इसका प्रमुख कारण है। इससे नष्ट होनेवाली मिट्टी की अनुमान लगाना कठिन है। पर्यावरण विभाग के अनुमान के अनुसार "प्रतिवर्ष छह अरब टन ऊपरी मिट्टी बहकर समुद्र में चली जाती है।"[१३]

ठोस प्रदूषण पदार्थ, काँच की बोतलें, कागज़ और प्लास्टिक से बनी हुई चीज़ें, खाली कनस्तर, थर्मोकॉल, टिन-कन्टेनर जैसे घरेलू अपशिष्ट एवं अन्य कूडा-करकट भी मानव कल्याण के काम में आनेवाली मिट्टी की उपजाऊपन को नष्ट कर रही हैं। औद्योगिकीकरण और नगरीकरण ने वनों को उजाड़कर मृदा को विनष्ट किया। इसके फलस्वरूप धुएँ और रासायनों के कचरे को फैलाया। गैस रिसाव, रासायनिक अणु-परीक्षण से होनेवाले ज़हर, औद्योगिक और रासायनिक अपशिष्ट आदि ने मृदा की संजीवनी शक्ति को नष्ट कर मिट्टी के माध्यम से यह ज़हर व्यक्तियों को रोगग्रस्त, कृषकाय और विकृत अंगवाला बनाता रहता है। उद्योगों द्वारा उत्सर्जित क्रोमियम, कोबाल्ट, ज़िंक, लेड़ जैसे भारी धातुएँ, रेडियो सक्रिय अपशिष्ट और आणविक विस्फोट भी मृदा को प्रदूषित करते हैं। आणविक विस्फोट की प्रतिक्रियाएँ नागसाकी और हिरोशिमा के कृषि क्षेत्रों में आज भी देख सकते हैं।

मृदा संकट के समाधान के रूप में कई कार्य कर सकते हैं। भूमि को कटाव से रोकने के लिए वृक्षारोपण कर वनक्षेत्रों का विकास करना है। कूडा-करकट को समाप्त करने के लिए भस्मक यंत्रों (Incinerators) का उपयोग करना है। कृषि क्षेत्रों में उर्वरकों, डी.डी.टी एवं बी.एच.सी जैसे विषैली पेस्टीसाइडों का प्रयोग

प्रतिबंधित करना है। रेन-वाटर हार्वेस्टिंग एवं जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग सुनिश्चित रूप से किया जाना चाहिए। मृदा की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर योजनाएँ बनाकर साधारण जनता को इस खतरे के प्रति चेतना उत्पन्न करना चाहिए। औद्योगिक, रासायनिक और आणविक विस्फोटों से उत्सर्जित अपशिष्टों को निपटाने के लिए उचित प्रबंध किया जाना चाहिए। मिट्टी एक अति दुर्लभ संसाधन है। इस सीमित संसाधन को पारिस्थितिक संकट से बचाना आवश्यक है।

१.९. ध्वनि प्रदूषण

विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से मानव ने सुख-सुविधा के अनेक साधन जुटा लिए लेकिन उसी प्रकार शोर रूपी पारिस्थितिक संकट धुंध की तरह घातक रूप धारण किया है। किसी भी वस्तु से एक विशिष्ट प्रकार की दाब तरंग से उत्पन्न आवाज़ को हम ध्वनि कहते हैं। "ध्वनि कानों द्वारा ग्रहण की गई तथा मस्तिष्क तक पहुँचाई गयी एक संवेदना है।"[१४] विश्व के अधिकांश महानगरों और औद्योगिक क्षेत्रों में ध्वनि प्रदूषण की मात्रा दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। विश्व के प्रमुख महानगरों में ध्वनि का औसत सत्तर डेसीबल से ऊपर पाया गया है। "अवांछित शोर के कारण मानव वर्ग में उत्पन्न अशांति एवं बेचैनी की दशा को ध्वनि प्रदूषण कहते हैं।"[१५] अर्थात् पारिस्थितिकी को दूषित करने के साथ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं पर हानिकारक प्रभाव उत्पन्न करनेवाले उच्च तीव्रतावाली अदृश्य शोर को ध्वनि प्रदूषण कहते हैं। दिन में ५५ और रात में ४५ डेसीबल ध्वनि मानव को अहानिकारक है। १५०-२०० डेसीबल तीव्रतावाली ध्वनि मानव की प्राणघातक तक होती है। इलेक्ट्रॉनिक संचार व्यवस्था में ध्वनि की तीव्रता प्रतिदिन १०गुना वृद्धि होती जा रही है।

ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख तीन स्रोत हैं। प्राकृतिक स्रोतों से उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण के अंतर्गत उपलवृष्टि, जल-प्रपात, बादलों की गड़गड़ाहट, भूकम्प, उच्च तीव्रतावाली जल वर्षा, तूफानी हवाएँ, ज्वालामुखियों के फटने से उत्पन्न भीषण गड़गड़ाहट आदि आते हैं। इससे उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव प्रायः छिटपुट और अस्थायी होता है। फिर जीवित स्रोत के अंतर्गत मानव सहित विभिन्न वन्य-जीवियों की

आवाज़ें सम्मिलित की जा सकती हैं। कृत्रिम स्रोत या मानव जनित स्रोत भी इसमें है। मशीनीकरण तथा उद्योगों की गड़गड़ाहट, निर्माण कार्य, मोटोरवाहन, रेलगाड़ियाँ और वायुयान जैसे स्थल और वायुपरिवहन के साधन से उत्पन्न शोर, बम तथा डायनामाइट का विस्फोट, पॉप म्यूज़िक और नाईट क्लबों में होनेवाली रॉक एण्ड रौल म्यूज़िक, डिस्कोथेक्स, रेडियो, टेलिविज़न, लाउड स्पीकर जैसे मनोरंजन के साधन तथा सामाजिक क्रियाकलापों से उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण को बढ़ाते हैं।

१.९.१. ध्वनि प्रदूषण और मानव

अत्यधिक शोर मानव के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर डालता है। जीवन की गुणवत्ता को घटानेवाली यह ध्वनि मानव के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध होती है। इसके दुष्परिणाम शारीरिक, व्यावहारिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और श्रवण के स्तर पर भी दिखायी देता है।

आस्ट्रिया के एक शब्दवेत्ता का कथन है कि "शोर मनुष्य को समय से पूर्व बूढा बना देता है।"[१६] यह सत्य है क्योंकि ९० डेसीबल से अधिक की ध्वनि मानसिक तनाव, हमारे विचारों सोचने व स्मरण करने की शक्ति में कमी, क्रोध, चिड़चिड़ापन, रक्तचाप, हृदय रोग, बहरापन, कुंठा, न्यूरोटिक मेंटल डिस-आर्डर जैसी बीमारियाँ उत्पन्न करती हैं। न्यूयॉर्क जैसे अत्यधिक शोर-शराबवाले महानगरों में रहनेवाला व्यक्ति का बहरापन २० से ३० वर्ष की आयु में प्रारंभ हो जाता है। विश्व के अधिकांश औद्योगिक क्षेत्रों में ध्वनि का स्तर १२० डेसीबल से अधिक है। इन क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों की श्रवण शक्ति पूरी तरह नष्ट होकर मानसिक तनाव से ग्रसित है। शांत वातावरण की अपेक्षा शोरगुल में रहनेवाली महिलाओं की नवजात शिशुओं में जन्मजात विकृतियाँ अधिक होती हैं। बम-विस्फोट जैसे अचानक अति उच्च ध्वनि गर्भपात का कारण भी हो सकता है। ५० डेसीबल ध्वनि मानव के श्रवणेंद्रियों को बुरी नहीं लगती है।

मोबाइल टावर से निकलनेवाली ध्वनि प्रदूषण से ब्रेन ट्यूमर, ब्रेन कैंसर, हृदयरोग आदि अनेक जानलेवा बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती है। महानगरों में

मोटोरवाहनों की ध्वनि प्रदूषण से मानव को चलना-फिरना दूभर हो जाता है। ध्वनि प्रदूषण से उत्पन्न संकट मानव के अतिरिक्त वनस्पति, इमारतों, जीव-जंतुओं जैसे सभी पारिस्थितिकी संपदाओं पर भी पड़ता है।

१.९.२. ध्वनि प्रदूषण का नियंत्रण

ध्वनि प्रदूषण रोकने के लिए मोटोर वाहनों, वायुयानों, स्कूटर जैसे छोटे-छोटे वाहनों में साइलेंसर लगाकर ध्वनि की तीव्रता कम करना है। गाड़ियों की उचित देखभाल से ४० प्रतिशत प्रदूषण कम होगा। साथ ही यंत्रों में साउंड एबज़ोरबिंग सिस्टम का उपयोग करना आवश्यक है। तीव्र ध्वनि के क्षेत्रों में रेल की पटरियों के किनारे, कारखानों, घरों के आसपास और सड़कों के किनारे आग, ताड़, नारियल, नीम जैसे पेड़ों का रोपण करना है। धार्मिक-सामाजिक उत्सवों, समारोहों, चुनाव आदि के अवसरों पर लाउड स्पीकर का प्रयोग कम करना है। कारखानों और मोबाइल टावर के जनरेटर सेट आवासीय क्षेत्रों से दूर स्थानों पर स्थापित करना है और ध्वनि प्रदूषण संबंधी कानूनों को पालन करना है।

१.१०. समुद्रीय पारिस्थितिकी

सागर की गहराइयों में से तेल, प्राकृतिक गैस जैसे बहुमूल्य खनिज संपदा उपलब्ध होने के कारण सागर को अपना अपार महत्व है। प्राकृतिक गैस एवं पेट्रोलियम आज के युग का काला सोना है। सागर को ऊर्जा के विपुल भंडार कहते हैं। उसकी लहरों, ज्वार-भाटाओं एवं जलधाराओं में से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। समुद्र जल से प्रतिवर्ष ३२४ मेट्रिक टन रसायनों का उत्पादन करते हैं। इसमें मैगनीशियम, ब्रोमिन, पोटेशियम, युरेनियम, कोबाल्ट, सीसा और जस्ता आदि धातुएँ हैं। यह एक थर्मोस्टेंट भी है। पुराणों में समुद्र मंथन करते समय विष की प्राप्ति हुई थी लेकिन आज उसी समुद्र प्रदूषण जैसे अनेक पारिस्थितिक संकटों से त्रस्त है। विश्व की आर्थिक व्यवस्था का आधार सागरीय संपदा है।

१.१०.१. समुद्र प्रदूषण

विश्व के अधिकांश समुद्र धीरे-धीरे मृत्यु की ओर अग्रसर हो रही है। रेडियो धर्मी प्रदूषक, पोट्रोलियम, हाइड्रोकार्बन, घरेलू कचरा, सीवेज, औद्योगिक मलबा आदि सागर के प्रदूषक हैं। इससे सागर की खाद्य श्रृंखला और प्रवाल पुंज नष्ट हो रहे हैं। इसका प्रभाव मानव सहित सभी जीव-जंतुओं पर पड़ा है। सागरीय प्रदूषक के प्रभाव से समुद्र के पानी का तापमान दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। इसका बुरा प्रभाव शैवालों, सागरीय जीव-जंतुओं और वनस्पतियों पर पडेगा। वर्ल्ड वाच इन्स्टिटट्यूट के डॉ.लिस्टर ब्राउन के अनुसार - "बीसवीं सदी में समुद्र की सतह औसतन २० से ३० सेंटीमीटर बढ़ी है। इस इक्कीसवीं शती के अंत तक समुद्र की सतह एक मीटर तक ऊँची उठ सकती है।"[१७] नाभिकीय विस्फोटों से सागर और वायुमंडल प्रदूषित होते हैं। दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे बहुराष्ट्रीय उद्योगों का विकास और जनसंख्या वृद्धि सागर औऱ सागरीय तटों को प्रदूषित करते हैं। जलवायु के नियंत्रक सागर होने के कारण जलवायु-परिवर्तन का कारण भी सागरीय प्रदूषक है।

१.१०.२. सागर प्रदूषण का नियंत्रण

जनसंख्या वृद्धि को रोकना इसमें सबसे प्रमुख है। घरेलू कचरे, सीवेज, औद्योगिक अपशिष्ट और रेडियोधर्मी व्यर्थ पदार्थ सागर में निष्कासित करने से पहले दोषरहित कर देना। सागर प्रदूषकों को रिसाइक्लिंग करना है। जलस्रोतों में गंदगी नहीं फैलाना क्योंकि प्रदूषक नदियों या अन्य जलस्रोतों से बहाकर सागर से मिलकर सागरीय पानी को भी विषाक्त कर देते हैं। साथ ही वैज्ञानिक एवं इलेक्ट्रॉनिक पद्धतियों से सागरीय संपदाओं का दोहन रोककर पारिस्थितिकी अनुकूल पद्धतियों से करना है।

१.११. पेट्रोलियम और प्रदूषण

औद्योगिकीकरण और जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप पूरे विश्व में पेट्रोलियम की माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। पारिस्थितिकी का अविभाज्य अंग है

समुद्र का जलीय परितंत्र। पारिस्थितिकी संकट का प्रभाव जलीय परितंत्र और जैविक संपदा पर भी देख सकते हैं। सागर प्रदूषण का सबसे बड़ा कारक है पेट्रोलियम। आज विश्व भर में पेट्रोलियम का रिसाव और टैंकरों का दुर्घटनाग्रस्त होना एक आम बात हो गयी। बैरलों में पेट्रोलियम भरकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते समय रिसाव होकर तेल समुद्र में गिरते हैं। इससे सागरीय वनस्पतियों और जीव जंतुओं को सर्वाधिक हानि पहुँच रही है। मत्स्यपालन को भी पेट्रोलियम से उत्पन्न संकट प्रभावित करते हैं। एलिफेटिक एवं एरोमैटिक हाइड्रोकार्बनों का मिश्रण है पेट्रोलियम। इस प्रदूषण का प्रभाव समुद्री तट के एक ही स्थान पर नहीं पडोसी देशों पर भी देख सकते हैं। इसमें सम्मिलित विषाक्त पदार्थ पानी को विषाक्त कर समुद्रीय पारिस्थितिकी को भी हानि पहुँचाते हैं।

विकसित और विकासशील देशों का वैकल्पिक ऊर्जा है पेट्रोलियम। भविष्य में इसको अधिक महंगा होगा। पेट्रोल को जलाने से निकलनेवाली नाइट्रोजन ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड जैसी गैसें हरित ग्रह प्रभाव को उत्पन्न कर वायु-प्रदूषण को बढ़ाती हैं।

१.१२. रेडियोधर्मी प्रदूषण

संपूर्ण विश्व की आर्थिक प्रगति एवं पारिस्थितिकी पर विजय पाने के लिए मानव ने दिन-प्रतिदिन पृथ्वी में अणु, परमाणु, हाइड्रोजन बम और नाभिकीय शस्त्रों का परीक्षण कर रहे हैं। ऊर्जा का आधुनिक स्त्रोत है आणविक ऊर्जा। परमाणु ऊर्जा से विश्व को लाभ भी हो सकता है साथ ही सबसे अधिक घातक एवं अभिशापयुक्त प्रदूषण भी है। रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थों, रेडियो आइसोटोपों आदि से उत्पन्न विकिरण पारिस्थितिकी संतुलन को बिगाड़ते हैं। इससे घटित हिरोशिमा-नागसाकी तथा चेर्नोबिल दुर्घटना हमारे सामने हैं।

यह प्रदूषण जल, थल, वायु आदि को भी गंदा करता है। इसके विस्फोटों का प्रभाव मानव सहित सभी जीव-जंतुओं, वनस्पतियों पर पड़ता है। भूमि की उर्वर शक्ति को दिन-प्रतिदिन नष्ट कर देता है। गर्भस्थ शिशु की मृत्यु, त्वचा एवं

फेफडों का कैंसर, बांझपन, अपंगता आदि अनेक जानलेवा बीमारियाँ इस प्रदूषण के अभिशाप हैं। रेडियोधर्मी विकिरणों से आँखों के लेन्स भी नष्ट हो जाते हैं। आणविक ऊर्जा के परीक्षणों से जल के तापमान में निरंतर वृद्धि होती है। न्यूक्लियर विस्फोटों से अनेक जीव-जंतु महाकाल के ग्रास हो जायेंगे। हाइड्रोजन बम विस्फोटों से आनेवाले वर्षों में वायु-मंडल के साथ बादल भी नष्ट हो जायेगा। समुद्रों में किये जानेवाले परमाणु परीक्षणों से सागरीय जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के अस्तित्व खतरे में है।

हाइड्रोजन बम, परमाणु शस्त्रों एवं नाभिकीय शस्त्रों के उपयोग एवं परीक्षणों को कम कर उसके निर्माणों पर रोक लगाना आवश्यक है। साथ ही रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थों को वांछित प्रदेशों में निष्पादन करना है। जीव जगत् एवं वनस्पति जगत् के लिए घातक नाभिकीय हथियारों के उपयोग पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रोक लगाना चाहिए।

१.१३. औद्योगिकीकरण और पारिस्थितिकी

औद्योगिक विकास ने मानव समाज को समृद्धि का रास्ता खोला। इसके साथ ही प्रकृति से अधिक छेड़छाड़, वन-विनाश, पानी संकट, पारिस्थितिक आपदाएँ जैसी अनेक समस्याओं को जन्म लेकर पारिस्थितिक तंत्र के अस्तित्व पर संकट आनेवाला वैश्विक तापन एवं जलवायु परिवर्तन तक के खतरे को आमंत्रित किया। तीव्र गति से बढ़ते औद्योगिकीकरण पारिस्थितिकी को विषाक्तता का पर्याय बनता जा रहा है। समूचे विश्व का प्राण संकट औद्योगिक विकास में निहित है। औद्योगिकीकरण के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी, परिवहन और बैंकिंग आदि अनेक सुविधाओं का विकास हुआ। शहरीकरण और औद्योगिकीकरण से एक ओर सामाजिक चेतना का विकास हुआ दूसरी ओर खनन और परिवहन आदि अनेक उद्योगों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग कर पारिस्थितिकी को व्यापक रूप से क्षतिग्रस्त किया। तकनीकी विकास और वैज्ञानिक आविष्कारों के फलस्वरूप औद्योगिक विकास का प्रादुर्भाव हुआ। आज के औद्योगिक विकास का प्रारंभ १९ वीं शती की

औद्योगिक क्रांति से माना जाता है। इस विकास के दौड़ में विश्व के विभिन्न देश आगे बढ़ जाने की होड़ में है। विकास के साथ-साथ जल, वायु, मिट्टी आदि सभी पारिस्थितिक श्रृंखलाओं में प्रदूषण फैल रहा है। आज के औद्योगिक युग में मानव सहित सभी जीव-जंतु खतरे में है।

औद्योगिकीकरण ने अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन किया। ज़्यादा से ज़्यादा बहुराष्ट्रीय कंपनियों की स्थापना करने के लिए भूमि उपलब्धता हेतु वन-संसाधनों और जल-संसाधनों का विध्वंस किया। वायु मंडल का ऑक्सिजन चक्र असंतुलित होने के कारण आगामी वर्षों में ऑक्सिजन मास्क लगाकर जीने की स्थिति होगी। उद्योगों से निकलनेवाली रासायनिक, धात्विक और रेडियोधर्मी अपशिष्टों को नदी और सागर में बेखटके छोड़ने से जलस्रोत प्रदूषित हो रहे हैं। इसका प्रभाव मानव सहित सभी जलीय जीवों और वनस्पति पर पड़ता है।

औद्योगिक क्रांति के लिए मूल्यवान उपादान है ऊर्जा। कहा जाता है कि कोयला 'काला हीरा' और तेल 'तरल सोना' है। कोयले और तेल के भंडारों के दहन से ग्रीन हाउस गैसें वायु मंडल में दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हैं। विश्व के अधिकांश बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ समुद्रों या नदियों के तट पर स्थित होने के कारण पृथ्वी और महासागरीय जीवन पर भी इसका दुष्प्रभाव पडेगा। कारखानों में प्रयुक्त ऊर्जा से निकलनेवाली धुआँ से पारिस्थितिकी के कार्बन डाई ऑक्साइड़ की मात्रा में निरंतर वृद्धि हो रही है। यह विश्व के तापक्रम में आये बदलाव पारिस्थितिक तंत्र को भी प्रभावित करेंगे।

औद्योगिक विकास की ही देन है ध्वनि प्रदूषण। बहुराष्ट्रीय कंपनियों से उत्पन्न अनेक साधन आज ध्वनि प्रदूषण का कारक है। औद्योगिक जीवन अपनानेवाले मानव विभिन्न उद्योगों के लिए जंगलों को साफ कर रहे हैं। वन भूमि के उन्मूलन से पारिस्थितिकी चक्र गड़बड़ाता है। जंगल की उपयोगिता बहुमुखी है, क्योंकि जंगल पारिस्थितिकी संतुलन को संभाले रहे हैं। पुनः इसका निर्माण संभव नहीं है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों से विसर्जित दूषित जल एवं अपशिष्ट जलस्रोतों को प्रदूषित करने

के साथ-साथ इसमें निहित रसायन, धातु, विषैली गैस मृदा को भी प्रदूषित कर रहे हैं। व्यापारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पेड़-पौधों को नष्ट करने के कारण मृदा-अपरदन की समस्या दिन-प्रतिदिन तेज़ी से बढ़ रही है।

औद्योगिक विकास के परिणाम स्वरूप विश्व भर के पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ गया है। इसका नियंत्रण इक्कीसवीं सदी की सबसे गंभीर चुनौती है। औद्योगिक प्रगति विकासशील राष्ट्रों के लिए अनिवार्य है। प्रगति के साथ-साथ पारिस्थितिकी सुरक्षा को भी ध्यान में रखना है।

१.१४. जनसंख्या वृद्धि एवं पारिस्थितिकी

विश्व में साल भर जनसंख्या घनत्व में असामान्य वृद्धि हो रही है। जिसके परिणाम स्वरूप मानव ने पारिस्थितिकी में संकट पैदा कर दिया। विश्व की जनसंख्या के ८० प्रतिशत भाग नगरों, महानगरों तथा विकासशील देशों में पाया जाता है। जनसंख्या वृद्धि भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों के सामने एक गंभीर समस्या है। जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ उनकी आवश्यकताओं में वृद्धि होगी। दिन-प्रतिदिन विकासशील देशों के जनसंख्या सांद्रण में वृद्धि होने के कारण वहाँ के नगरों, महानगरों में गंदे नालें, और गंदे बस्तियों का आविर्भाव हुआ। उनके सामने ठहरने के लिए मकान, भोजन एक विकट समस्या है। विश्व के अधिकांश लोग पौष्टिक भोजन और स्वास्थप्रद मकान से वांछित है। शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, ज्ञान-विज्ञान एवं टेक्नॉलजी भी जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख कारण हैं।

बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ज्ञान-विज्ञान एवं टेक्नॉलजी का अत्यधिक प्रयोग हो रहा है। व्यापक स्तर पर इसके प्रयोग ने अनेक पारिस्थितिकी समस्याओं को जन्म दिया है। आज के मानव को पीने के लिए शुद्ध पानी, साँस लेने के लिए शुद्ध वायु और खाने के लिए शुद्ध भोजन मिलना कठिन है। खाद्यान्नों की पूर्ति के लिए आधुनिक मानव खेतों में अनेक रसायनों का प्रयोग कर जल और मिट्टी आदि में प्रदूषण फैलाते हैं। कलकत्ता, दिल्ली जैसे महानगरों में जनसंख्या

बढ़ने के साथ-साथ इकोसिस्टम को भी प्रदूषित कर रहे हैं। छोटे-छोटे गाँवों में भी प्राकृतिक प्रकोप देख सकते हैं।

बढ़ती आबादी के कारण उत्पन्न आर्थिक अभावों की पूर्ति करने के लिए अधिक जनसंख्यावाले विकासशील देश प्राकृतिक संसाधनों को विकसित देशों को बेच देते हैं। इस प्रकार मानव ने अपनी सुख-सुविधाओं की पूर्ति के लिए वन जैसे प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन कर पारिस्थितिकी में असंतुलन पैदा करते हैं। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ बेरोज़गारों की संख्या बढेगी। विश्व में भारी जनसंख्या घनत्व के कारण अधिकांश महानगरों में कारगर परिवहन सेवा उपलब्ध कराना मुश्किल हो गयी। इसके साथ सड़कों में वाहनों की संख्या तेज़ गति से वृद्धि हो रही है। इससे वायु-प्रदूषण का भी सामना करना पड़ता है। आज जनसंख्या वृद्धि में दूसरा स्थान भारत को है, भविष्य में पहला स्थान होगा। आर्थिक विकास के लिए ऊर्जा संसाधनों को भी दोहन किया। प्रगति और विनाश दोनों में सहायक है ऊर्जा। डॉ.राधाकृष्णन इस प्रकार कहते हैं कि - "आज तेल की खपत बढ़ती जा रही है तो दूसरी ओर जनसंख्या की वृद्धि भी।"[१८] बढ़ती जनसंख्या ज़हरीली अपशिष्टों को उत्पन्न कर पारिस्थितिकी में प्रदूषण फैलाते हैं। कृषिभूमि की कमी, वनोन्मूलन, प्रदूषण में अत्यधिक वृद्धि और पेयजल की कमी आदि अनेक पारिस्थितिकी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है।

दिन-प्रतिदिन बढ़ती जनसंख्या से मानव का अपना अस्तित्व संकट में पड़ जायेगा। इसके नियंत्रण हेतु अंतर्राष्ट्रीय प्रयास कर साधारण जनता को शिक्षित करना है। बढ़ती आबादी के कारण पारिस्थितिकी पर पड़नेवाले विपरीत प्रभावों को रोकना है। विश्व में जनसंख्या नियंत्रण आंदोलन आवश्यक है। गाँवों और गंदे बस्तियों में परिवार नियोजन कार्यक्रमों को लागू करना है।

१.१५. प्लास्टिक एवं पारिस्थितिकी

इक्कीसवीं शताब्दी प्लास्टिकमय हो चुकी है। मानवीय सभ्यता के साथी बना हुआ प्लास्टिक आज संकट का पर्याय बन चुका है। सबसे पहले इसका उपयोग

अमरीका में हुआ था। दैनिक कार्यों में विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक का उपयोग कर आज के मानव पारिस्थितिकी को नष्ट कर रहे हैं। घनत्व अधिक होनेवाले प्लास्टिक की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। न सड़ने गलनेवाले और न विघटनशील पदार्थ है प्लास्टिक। "प्लास्टिक सामान्यतः उच्च अणुभारवाले कठोर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन के उच्च बहुलके हैं, जो गर्म करने पर मुलायम हो जाते हैं तथा प्लास्टिक कहलाते हैं।"[१९] विश्व में अमरीका और चीन के बाद प्लास्टिक का अत्यधिक उपयोग करनेवाला तीसरा देश भारत है।

कार्बनिक रसायनों के भौतिकीकरण तथा संघनन की प्रक्रिया से प्लास्टिक की उत्पत्ति होती है। उसमें पाली एथीलीन अर्थात् पॉलिथिन नामक रसायन होते हैं। एथीलीन गैस से बनानेवाले प्लास्टिक के साँचे में पॉलिविनाइल क्लोराइड एवं पॉली यूरेथेन्स भी ढाल सकते हैं। इसमें पायी जानेवाली रसायनों का निपटान असंभव है। प्लास्टिक को ज़मीन के अंदर दबाये तो ज़मीन को नष्ट करने के साथ-साथ उसके अंदर की गर्मी पाकर ज़हरीली गैस पैदा कर गैस विस्फोट भी कर सकता है। यह अतिशीघ्र ज्वलनशील पदार्थ है। इसको जलाने से डाई ऑक्सीन, फास्जीन, कार्बन मोनो ऑक्साइड, क्लोरिन, सलफर डाइ ऑक्साइड तथा नाइट्रोजन डाइ ऑक्साइड जैसे विषैली गैसें उत्सर्जित होती है। इससे ओज़ोन कवच नष्ट होने के साथ-साथ वायु-प्रदूषण भी पैदा होता है। पशुओं के खाने की वस्तुओं के साथ प्लास्टिक भी खाने से ये अपशिष्ट पेट में जमाकर मर जाते हैं। प्लास्टिक की रंगीन वस्तुएँ अधिक घातक हैं। इसके मूल पदार्थ कैडमियम और सीसे हैं। वर्तमान के ठोस अपशिष्टों में प्रमुख है प्लास्टिक का अपशिष्ट।

पॉलिविनाइल प्लास्टिक या पी.वी.सी, पॉलिप्रोपीलीन प्लास्टिक, टेफलॉन प्लास्टिक, सैल्यूलोज थर्मोप्लास्टिक और एमीन-एल्डीहाइड प्लास्टिक आदि मानव जीवन के दैनिक क्रियाकलापों में उपयोगी विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक हैं। आज प्लास्टिक पैकिंग से लेकर संचार क्षेत्र तक के जीवन के सभी क्षेत्रों में क्रियाशील है। गेल, हल्दिया, पेट्रोकेमिकल्स, आर.आइ.एल और आइ.पी.सी.एल आदि कंपनियाँ दिन-प्रतिदिन बढ़ते प्लास्टिक की खपत के अनुसार इसका उत्पादन कर रही है। प्लास्टिक

कचरे के दुष्प्रभावों से बचने के लिए इसका निर्माण करनेवाली कंपनियों पर पाबंदी लगानी है।

प्लास्टिक मानव के लिए अत्यधिक घातक है। इसमें सम्मिलित हाईड्रोकार्बन कैंसरजन्य होता है। प्लास्टिक के घुलनशील अणु एक तरफ पानी के जाम का कारण बन सकता है और वह पानी के माध्यम से मानव शरीर में पहुँचकर हानि पहुँचाता है। इसके निर्माण में प्रयुक्त होनेवाली पॉलिथिलोन ट्रिप्थेलेट और डाइथी लेक्सीलेडिपेट आदि रसायनों विखंडित होकर जल से अभिक्रिया कर कैंसर जैसे जानलेवा बीमारियों का कारण बनता है।

आजकल कचरे, कूडेदान जैसे सभी वस्तुओं को प्लास्टिक की थैलियों में भरकर फेंकते हैं। आज विश्व के चारों ओर प्लास्टिक का ही साम्राज्य है। यह प्लास्टिक ढेर पृथ्वी में इकट्ठा होकर पारिस्थितिकी को दिन-प्रतिदिन प्रदूषित कर रहा है। पृथ्वी में इकट्ठे इस अनुपयुक्त प्लास्टिक प्राकृतिक ढंग से अपघटित नहीं होते हैं। आज के तमाम पर्यटन क्षेत्र प्लास्टिक प्रदूषण से त्रस्त है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) के सर्वेक्षण के अनुसार - "प्लास्टिक कचरे के उत्पादन में चेन्नई सबसे ऊपर तथा उसके ठीक नीचे कोलकत्ता है। इसके बाद मुंबई, बैंगलूर और दिल्ली आते हैं।"[२०]

सागर, नदी-नालों में प्लास्टिक प्रदूषण फैलाने के साथ-साथ उसके बहाव को भी अवरुद्ध करते हैं। गंगा-यमुना जैसे हमारी पवित्र नदियों में प्लास्टिक की भारी मात्रा जम होने के कारण दिन-प्रतिदिन खतरनाक प्रदूषण की तीव्रता बढ़ रही है। इसका अत्यंत घातक प्रभाव जल की गहराई में उगनेवाली सागरीय वनस्पतियों और अनेक जलीय जीवों पर पड़ता है। दक्षिण अफ्रीका के सी बड़े प्लास्टिक प्रदूषण से प्रभावित होकर आज मौत के कगार पर है। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के स्थायित्व पर इसका प्रभाव पड़ता है। प्लास्टिक या पॉलिथिन संस्कृति का प्रसार पारिस्थितिकी के लिए अत्यंत घातक सिद्ध हो रहे हैं। इसके कारण प्रतिदिन अनेक संकट उत्पन्न हो रहे हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण से बचने के लिए प्लास्टिक से निर्मित उपयोगी वस्तुओं को वर्जित किया जाना चाहिए। इसको यथासंभव नष्ट करने की व्यवस्था करना है। घरों, ऑफिस, कारखानों तथा प्रयोगशालाओं में इसके प्रयोग को रोकना है। प्लास्टिक की थैलियों का निर्माण, बिक्री और उपयोग को धीरे-धीरे पूर्ण रूप से बंद करना है। पारिस्थितिकी संकट के अंतर्गत प्लास्टिक की समस्या एक विश्वव्यापी चुनौती बनकर खड़ा है।

१.१६. कचरे और पारिस्थितिकी

आज संपूर्ण विश्व कचरे का डंपिंग ग्राउंड है। विकसित और विकासशील देश के विकराल समस्या है - औद्योगिक, रासायनिक कूडा-करकट, घरेलू कचरे, ई वेस्ट, ई-गारबेज या ई-जंक या इलेक्ट्रॉनिक कबाड़ का निपटान। अमरीका, चीन, ब्राजील, आस्ट्रेलिया, जर्मनी और ब्रिटेन आदि प्रमुख राष्ट्र औद्योगिक, रासायनिक और ई-कचरे को भारत के सामुद्रिक प्रांतों में जहाज़ों से भरकर बेच रहे हैं। यह कचरा किसी न किसी रूप में पारिस्थितिकी संकट बढाने में सहायक होता है।

औद्योगिकीकरण से उत्पन्न सीसे और ज़िंक आदि ज़हरीले कचरे पारिस्थितिकी को प्रदूषित करते हैं। यह मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए हानिकारक है। अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण संगठन ग्रीन पीस के अनुसार - "दो वर्षों के दौरान कलकत्ता, मुंबई और चेन्नई बंदरगाहों से ६०-६० हज़ार टन जस्ता और सीसा की राख डंप की गई। इस ज़हरीले कचरे को देश की १५० से भी अधिक निजी फर्मों ने लगभग ५० देशों से आयात किया।"[२१]

बहुराष्ट्रीय कंपनियों से निकलते ज़हरीले कचरे के अतिरिक्त घरेलू-कचरा भी प्रदूषण प्रसारक है। घरों में स्वच्छता के लिए इस्तेमाल किये जानेवाला एसिड़, विभिन्न प्रकार के ब्रश चूना, सिन्थेटिक डिटरजेंट पाउडर और प्लास्टिक थैलियाँ आदि घरेलू कचरा है। घरेलू कचरे से पारिस्थितिक विनाश के साथ-साथ मानव को अनेक बीमारियों का सामना करना पड़ता है। ये कचरे अपघटकों द्वारा एकत्रित कर खाद में रूपांतर करते हैं।

आज नये-नये इलेक्ट्रॉनिक साधनों से घर और बाज़ार भर रहे हैं। इससे ई-कचरे की समस्या का आरंभ होता है। ई-कचरे संबंधी कानून अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 'बेसल कंर्वेशन' के अंतर्गत है। विकासशील देशों में ई-कचरे से अनेक पारिस्थितिकी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। कम्प्यूटर, मोबाइल जैसे अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में प्लास्टिक और कई तरह की धातु सम्मिलित है। नये-नये आविष्कार करनेवाला इलेक्ट्रॉनिक साधनों को माँगने के लिए पुराने इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को हम कबाड़ में बेच देते हैं। इससे भी ई-कचरे की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। इस कचरे को आग में जलाकर इससे उत्पन्न आवश्यक धातुओं को विकासशील देश उपयोग करते हैं। जलाते समय निकलनेवाला ज़हरीला धुआँ पारिस्थितिकी और मानव के लिए काफी घातक है। सी.आर.टी जैसे ई-कचरे को रिसाइकिल करना मुश्किल है। ई-कचरे में ३८ अलग प्रकार के रासायनिक तत्व सम्मिलित है। यह पारिस्थितिकी के लिए काफी नुकसान होता है। भारत में इस कचरे को निपटाने का प्रमुख केंद्र दिल्ली और बंगलूरु है। अमरीका ८० प्रतिशत ई-कचरे चीन, भारत तथा अन्य विकासशील देशों में भेज देते हैं। इस कचरे के डंपिंग क्षेत्रों से निकलनेवाली लैंडफिल गैसों का प्रस्फुटन पारिस्थितिकी के लिए खतरे की घंटी है। कचरे से उत्पन्न त्रासदियों से बचने के लिए पहले कचरे के व्यापार को रोकना चाहिए। कचरे को उचित व्यवस्था द्वारा वांछित प्रदेशों में निपटना है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ई-कचरे को निपटाने का प्रयास करना चाहिए साथ ही निपटान के लिए कानून बनाना है।

१.१७. पारिस्थितिक प्रकोप

प्राकृतिक या मानव-जनित घटना से उत्पन्न खतरा है प्रकोप। अंग्रेज़ी में इसे डिज़ास्टर कहते हैं। आज पारिस्थितिकी आपदाएँ उत्पन्न होने का प्रमुख कारण मानवीय क्रियाकलाप है। प्रो.सविंद्रसिंह के अनुसार - "प्राकृतिक प्रकोप अंतर्जात तथा बहिर्जात प्रक्रमों द्वारा उत्पन्न होते हैं एवं मानव समाज को आर्थिक एवं शारीरिक दृष्टियों से भारी क्षति पहुँचाते हैं।"[२२] जैविक एवं अजैविक संघटकों में होनेवाले परिवर्तनों से उत्पन्न विध्वंसकारी घटना को पारिस्थितिक प्रकोप कहते हैं। प्रमुख पारिस्थितिक आपदाएँ निम्नलिखित हैं -

१.१७.१. भूस्खलन

वन-विनाश, बाढ़, अतिवृष्टि एवं मानवीय क्रियाओं से होनेवाली प्राकृतिक विपदा है भूस्खलन। पर्वतीय प्रदेशों में इसकी संभावना बढ़ जाती है। इससे प्रतिवर्ष दो से तीन करोड़ रूपये की क्षति और सैकडों लोग मर रहे हैं। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं वनस्पतियों पर हानि पहुँचाता ही है।

१.१७.२. सूखा

विश्व में बढ़ते तापमान, अल-नीनो का प्रभाव, मनसून का कमज़ोर आदि सूखे का प्रमुख कारक हो सकते हैं। १९८४, १९८७, २००२ और २००४ आदि सूखे का साल रहा है। बार-बार आनेवाले सूखे से त्रस्त भारत और दक्षिण अफ्रीका के सैकड़ों लोग मरते हैं। पचास वर्षों के अंतर्गत चौदह बार भारत सूखे की विभीषिका झेल चुके हैं। हरे-भरे खेत, वनस्पतियाँ, जीव-जंतु, मानव आदि भी इस प्राकृतिक प्रकोप की अग्नि में झुलस रहे हैं। इसलिए इस खतरे को रोकना है।

१.१७.३. बाढ़

भूमि-कटाव एवं वनविनाश बाढ़ का प्रमुख कारण है। विश्व में एक स्थान सूखे से त्रस्त है तो दूसरे स्थान में बाढ़ आ रहा है। अधिकांश लोग इस अकाल की चपेट में है। विश्व में ७४ लाख से अधिक हेक्टेयर भूमि, १६ लाख व्यक्ति एवं ३०,००,००० जीवजंतु प्रतिवर्ष बाढ़ से प्रभावित होते हैं।

१.१७.४. सुनामी

सागर के अंदर के भूकंपों द्वारा उत्पन्न प्रलयंकारी सागरीय लहरों को सुनामी कहते हैं। इसका प्रमुख कारण सागरीय जल-परिवर्तन और सागरीय कोल्डोरा का निर्माण है। १८७९ में जापान, १८८३ में क्राकटोआ, १७७५ में पुर्तगाल, २००४ में भारत के दक्षिण पूर्व एशिया आदि विश्व के अनेक राज्यों में सुनामी घटित हुई।

सुमात्रा द्वीप के निकट से उत्पन्न इस वीभत्स त्रासदी से तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, उडीसा, केरल और अंडमान निकोबार द्वीप समूह बुरी तरह प्रभावित हुए।

१.१७.५. अलनीनो व लानिनो

धरती के तापक्रम बढ़ने से आनेवाली प्राकृतिक घटना है अलनीनो। चक्रवातीय तूफान, भूकम्प, बाढ़ आदि की भीषण परिस्थितियों से उत्पन्न अलनीनो धरती के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। यह घटना महासागरीय प्रदेशों को सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। सुपर अलनीनो जैसी मौसमी घटनाएँ आने से पृथ्वी के तापमान में रिकोर्ड वृद्धि होगा। पेरु के तट पर दिसंबर-जनवरी में शुरू होकर मार्च में खत्म होनेवाली गर्म जल की संकरी धारा है अलनीनो। इंडोनेशिया और आस्ट्रेलिया में भी इसका प्रभाव देख सकते हैं।अलनीनो के विपरीत प्रक्रिया है लानिनो। इससे मौसम के बुरी प्रभाव के साथ-साथ मूसलाधार वृष्टि एवं बाढ़ भी देख सकते हैं।

१.१७. ६. भूकम्प

मानव जन्य एवं प्राकृतिक कारणों से बार-बार आनेवाली घटना है भूकम्प। इसका प्रमुख कारण पृथ्वी का प्लेट विवर्तन माना जाता है। हेयती, भारत, चीन, जापान आदि विध्वंसकारी भूकम्प से प्रभावित क्षेत्र हैं।

चक्रवातीय तूफान, भू-अपरदन, ज्वालामुखी आदि घटनाएँ भी पारिस्थितिकी प्रकोप के अंतर्गत आते हैं। इसे रोकने के लिए सबसे पहले पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखना है।

१.१८. तेजाबी वर्षा

अम्लवर्षा का प्रमुख कारण वायु मंडल में होनेवाली मानवीय क्रियाकलाप है। सल्फर डाइ ऑक्साइड, नाइट्रिक ऑक्साइड और कार्बन डाई ऑक्साइड वायु मण्डल के जल बाष्प से मिलकर विशेषतः सल्फ्यूरिक अम्ल, कार्बनिक

अम्ल और नाइट्रिक अम्ल के रूप में बदलते हैं। बाद में अम्ल वर्षा के साथ पृथ्वी पर गिरते हैं। इसे अम्ल वर्षा या तेजाबी वर्षा कहते हैं। जिसका पी.एच ५.५ से भी कम होता है। यह मिट्टी, नदी,झील और तालाब को प्रदूषित करता है। इसमें पनपनेवाले जीवों व वनस्पतियों के अस्तित्व पर नुकसान पहुँचाती है। इसके अप्रत्यक्ष प्रभाव मानव के अस्तित्व पर संकट पैदा होता है। यह ऐतिहासिक इमारतों, बड़े-बड़े भवन, स्मारकों में स्टोन-लिपर्सी का कारण बनती है। ब्रिटीश का संसद भवन, इंग्लैंड के प्रख्यात सेंट पॉल गिरिजाघर और भारत के ताजमहल का क्षरण अम्लीय वर्षा के कारण हैं। अम्लीय वर्षा के प्रभाव से आज कानडा के झीलों में जलीय जीव नहीं है। इसके दुष्प्रभावों से बचने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियों से निकलनेवाली गैसों व प्रदूषणकारी तत्वों के उत्सर्जन को कम करना है।

१.१९. वैश्विक तापन

इक्कीसवीं शताब्दी में विश्व की सबसे गंभीर पारिस्थितिक समस्या बन चुकी है - ग्लोबल वार्मिंग यानी वैश्विक तापन। इस समस्या का प्रारंभ औद्योगिक क्रांति के साथ हुआ। बढ़ती हुई अर्थ व्यवस्था एवं विकास, विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के दुष्परिणाम आदि के फलस्वरूप वायु मंडल में काफी घातक बदलाव आ चुका है। यह बदलाव इक्कीसवीं शताब्दी में विकराल रूप धारण करेंगी। सी.एफ.सी प्लांटस, रसायनों एवं ईंधनों जलने से उत्पन्न गैसें, विभिन्न उद्योगों से निकलनेवाली कार्बन डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, क्लोरो फ्लूरो कार्बन, नाइट्रोजन ऑक्साइड, सलफर डाई ऑक्साइड एवं मीथेन जैसे ग्रीन हाउस गैसें ओज़ोन परत को नष्ट करने का काम करती है। इस ओज़ोन छिद्र से अल्ट्रावायलेट किरण सीधे धरती पर पहुँचकर उसे लगातार गर्म बना रही है। पृथ्वी के तापमान बढ़ने की इस अवस्था को ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं। मानव जनित कारणों से उत्पन्न वैश्विक तापन पारिस्थितिकी के घोर विनाश के लिए सबसे बड़ा कारण बन सकते हैं। ग्रीन हाउस गैसों के साथ पराबैंगनी विकिरणों के अवशोषण दिन-प्रतिदिन वायु मंडल को ज़हरीला बना रही है।

वैश्विक तापन से पृथ्वी का तापमान बढ़ने के साथ-साथ ग्लेशियरों की बर्फ पिघलकर समुद्रों का जलस्तर बढ़ जायेगा। ग्लोशियर सिकुड़ने से बंग्लादेश, मालद्वीप, डेनमार्क जैसे देशों, विश्व के अनेक द्वीप व भारत के तटीय प्रदेश जलमग्न हो जायेंगे। लगभग २०३५ तक अनेक ग्लेशियरें सिकुड़कर लुप्त हो सकती हैं। बढ़ती ग्लेशियरें सूखने से नदियाँ सूखकर जलसंकट उत्पन्न होगा। बढ़ती गर्मी से भीषण-बाढ़, भूस्खलन व समुद्री तूफान जैसी विध्वंसकारी घटनाएँ बढेंगी।

तापमान की इस वृद्धि से अनेक जीव-जंतु विलुप्त हो जायेंगे। इससे जैव-विविधता में घातक बदलाव आने के कारण जीव-जंतुओं की अनेक प्रजातियों का अस्तित्व संकट में है। पशु-पक्षियों एवं वनस्पतियों पर भी इसका बुरा प्रभाव देख सकते हैं। बढ़ते तापक्रम के कारण वृक्ष एवं वनस्पतियाँ सूखकर समाप्त हो जायेंगे। वर्षा-वन के अस्तित्व को भी खतरा है। इससे दुनिया में खाद्य संकट उत्पन्न हो जायेगा। वर्षा-वन, वृक्ष, वनस्पतियाँ एवं जीव-जंतुएँ नष्ट होने से साल भर करोड़ों रूपये की हानि हो रही है। समस्त जैव-संपदाएँ जलकर जलप्लावन हो जायेंगी।

वैश्विक तापन मानव जीवन के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिह्न लगानेवाला है। इससे कुछ सांक्रमण रोगों की वृद्धि के साथ-साथ अनेक जानलेवा बीमारियाँ व कई महामारियाँ फैल जायेंगी। नवीनतम शोध के अनुसार भविष्य में पैदा होनेवाले बच्चों में बालकों की संख्या बढ़ सकती है, क्योंकि y क्रोमोसोम में गर्मी की सहन करने की क्षमता है, x क्रोमोसोम इतना अधिक गर्मी को नहीं सहन कर पाता है। आनेवाले भावी पीढ़ी वैश्विक तापन से उत्पन्न प्राकृतिक आपदाओं का शिकार हो जायेगी।

इक्कीसवीं शताब्दी में पृथ्वी का तापमान १.१. से ६.४ तक डिग्री सेंटिग्रेड़ बढ़ जायेगा। आज के नानो टेक्नॉलजी के युग के ग्लोबल वर्ल्ड के पारिस्थितिक तंत्र को ग्लोबल वार्मिंग से बचाने के लिए सबसे पहले कार्बन-फुटप्रिंट और ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कटौती करना है। इसके साथ जैव-विविधता का विकास करना है। विश्वयुद्ध से भी सबसे बड़ा खतरा है ग्लोबल वार्मिंग। इसे

निपटने के लिए आज राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रयास किया जा रहा है।

१.२०. जलवायु परिवर्तन

मानव जीवन में जलवायु को महत्वपूर्ण स्थान है। प्राकृतिक और मानव जन्य जैसे ग्लोबल वार्मिंग, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, वनोन्मूलन आदि कारणों से जलवायु में भी लगातार परिवर्तन हो रहा है। इसका प्रभाव जैविक एवं अजैविक तत्वों पर पडेगा। इसके फलस्वरूप खाद्यान्न में संकट, भूमिगत जल, पेय जल आदि अनेक प्राकृतिक संसाधनों में संकट एवं जैव-विविधता में ह्रास आयेगा। इसके साथ-साथ सुनामी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, शोलों की वर्षा, बर्फबारी आदि अनेक प्राकृतिक आपदाएँ जलवायु परिवर्तन की देन है। इससे पृथ्वी गर्म होकर, ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र के जलस्तर बढ़कर विश्व का बड़ा हिस्सा डूब जायेगा। समुद्र का जलस्तर बढ़ने से कई शहरों और तटीय इलाकों का नामोनिशान मिट जायेगा। इससे अपार धन संपदा का नुकसान होगा। कार्बन डाई ऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, मीथेन जैसे ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से जलवायु चक्र में लगातार परिवर्तन होते हैं। यह हमारी आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित कर विभिन्न देशों के बीच युद्ध की हालत को पैदा करेंगे। इसमें आये बदलाव से भविष्य में ज़िंदा रहने के लिए ज़रूरी चीज़ें भी अधिक महंगा हो जायेगी। मानव का उपभोक्तावादी व्यवहार भी जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारणों में से एक है। इससे महंगाई और भूखमरी जैसी अनेक समस्याओं को भी मानव को सामना करना पड़ता है। इससे एंजाइटी बढ़ने की संभावना अधिक है। साथ ही भारत, आफ्रिकी देशों में मक्के के उत्पादन में भी गिरावट आ सकती है। इसका हानिकारक प्रभाव वनस्पतियों और जीव-जंतुओं पर भी पड़ेगा। इससे पारिस्थितिक तंत्र असंतुलित हो जाती है।

जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कटौती कर ग्लोबल वार्मिंग को नियंत्रित करना होगा। औद्योगिक, रसायनिक एवं ई-कचरे को कम करना होगा। सी.एफ.एल बल्बों का उपयोग करना, जैव-विविधता

का विकास करना, बाँधों के निर्माण को रोकना, वृक्षारोपण को बढ़ावा देना आदि कुछ उपाय हैं।

१.२१. पारिस्थितिक संकट - इतिहास की सबक

भूमण्डलीकरण एवं बाज़ारीकरण के इस दौर में विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के बल पर मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर अनेक सुख-सुविधाएँ आर्जित की है। प्राकृतिक संपदाओं के दोहन से पारिस्थितिक संतुलन में संकट आ गया। प्राकृतिक क्रियाकलापों और मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न पारिस्थितिक संकटों को दिन-ब-दिन मानव को सामना करना पड़ता है। इससे होनेवाले विश्व प्रसिद्ध प्रमुख घटनाएँ निम्नलिखित हैं -

१.२१.१. हिरोशिमा-नागसाकी

हिरोशिमा और नागसाकी की परमाणु भट्ठियों से घटित अणु-विस्फोट जल, वायु और भूमि को प्रदूषित कर हमारे पारिस्थितिकी के लिए गंभीर समस्या पैदा कर दी। यह १९४६ में घटित अणु-विस्फोट है। इससे निकटवर्ती प्रदेशों के ९० प्रतिशत लोगों की मृत्यु हुई। बचे लोग और उनके संतानें अपंग हो गये थे। बम-विस्फोट से निकलते गैस और धुआँ वायु मंडल को भी प्रदूषित किया। विध्वंसकारी इस बम-वर्षा से अनेक जानलेवा बीमारियाँ पैदा हुई। वहाँ पैदा होनेवाले बच्चों में भी अनेक विकृतियाँ आज भी देख सकते हैं। यह दो नगर की विध्वंस त्रासदी की कहानी है।

१.२१.२. चेर्नोबिल दुर्घटना

रूस की प्रसिद्ध आणविक भट्ठि युक्रेनियम गणराज्य की राजधानी कीव से १३० कि.मी दूर चेर्नोबिल में स्थित है। २६ अप्रैल १९८६ में हुई अचानक रेडियोसक्रिय गैस रिसाव से सैकड़ों लोगों की मृत्यु हो गयी। रेडियोधर्मिता के इस भयंकर त्रासदी से वहाँ के मानव सहित सभी जीव-जंतु, जल, थल, वायु, आदि भी

दूषित हो गयी। इस अणु विसर्जन का प्रभाव रूस की सीमाओं को लाँघकर यूरोपिय देशों तक फैल गयी। इस भयानक त्रासदी का प्रभाव आज भी देख सकते हैं और आनेवाले पीढ़ी में भी होगा। १९७९ में अमरीका में घटित "थी माइल आइलैंट" भी रेडियो सक्रिय रिसाव से अचानक हुए भयंकर विस्फोट है।

१.२१.३. भोपाल गैस त्रासदी

२-३ दिसंबर १९८४ की मध्यरात्रि में भोपाल में स्थित अमरीका का बहुराष्ट्रीय कंपनी यूनियन कार्बइड की फैक्ट्री में घटित गैस रिसाव विश्व के सबसे भयंकर और विध्वंसकारी दुर्घटना थी। आज यह त्रासदी भोपाल गैस त्रासदी नाम से जाना जाता है। इस कारखाने से रिसी गैसों के मिश्रण से सैकड़ों लोगों की मृत्यु हुई। इस गैस रिसाव से उत्पन्न मिथाइल आइसो साइनाइड, हाइड्रो साइनाइड, मोनो मिथाइल, कार्बन मोनो ऑक्साइड जैसे २० अन्य रसायनों का ४० टन ज़हरीला मिश्रण घने बादलों की तरह पूरे पारिस्थितिकी को विध्वंस किया। यह ज़हरीली पदार्थ ज़मीन के अंदर पहुँचकर वहाँ के निकटवर्ती प्रदेशों और उसके भूगर्भीय जल भूमि को आज भी प्रदूषित कर रहे हैं। इससे प्रभावित लोग आज भी किसी न किसी जानलेवा बीमारियों से त्रस्त है।

४ दिसंबर १९८५ में पश्चिमी दिल्ली में स्थित श्रीराम केमिकल्स फैक्टरी से ओलियम गैस रिसाव की त्रासदी ने हज़ारों लोगों को देखते ही देखते मौत के मुँह में धकेल दिया है। इसका दुष्प्रभाव गर्भस्थ शिशुओं पर भी पड़ा। इस प्रकार नोएडा में भी गैस रिसाव से अनेक लोग प्रभावित हुए। इन गैसों की विषाक्तता मानव एवं पारिस्थितिकी के लिए घातक है।

१.२१.४. मिनिमाता त्रासदी

यह १९५९ में जापान के मिनेमिटा खाड़ी में पारद प्रदूषण से घटित दुर्घटना है। एसिटलडिहाइड तथा बिनाइल क्लोराइड बनानेवाली फैक्टरी के पारदयुक्त अपशिष्ट मिनिमाता की खाडी में फेंक दिया। इससे मछलियों की कई जातियाँ समाप्त

हुई। खाडी की पानी प्रदूषित होने के साथ-साथ मिट्टी भी प्रदूषित हुई। इस विषाक्त मछलियों को खाने से हज़ारों लोग मर गए। वहाँ के लोग जानलेवा बीमारियों से आज भी पीड़ित है।

१.२२. वन, वन्यजीव एवं पारिस्थितिकी

वन एवं वन्य जीव पारिस्थितिकी संतुलन एवं सुधार कर सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है। राष्ट्र के बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है वन। लेकिन आज वन एवं वन्यजीवियों का विनाश कर हम भी स्वयं अपना विनाश कर रहे हैं। अन्य प्राकृतिक संसाधनों की तरह वन्य जीव भी एक प्राकृतिक संपदा है। वनों की अंधाधुंध कटाई से ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु-परिवर्तन, गरीबी, अकाल एवं प्रलय आदि अनेक पारिस्थितिकी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। पं.जवहरलाल नेहरू ने वन संरक्षण पर बल देते हुए इस प्रकार कहा है कि “पेड़ काटनेवालों को जेल में डाल देना चाहिए जिससे उनकी आँखें हरियाली के लिए जीवन पर्यंत तरसती रहें और वे पेड़ों के महत्व को समझ सकें।”[२३] वैश्विक स्तर पर वन विनाश को रोकने के लिए १९७० के दशक में उत्तरप्रदेश में सुंदरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में चलायी गयी चिपको आंदोलन महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। कर्नाटक में इस आंदोलन को अपिको कहते हैं। वनोन्मूलन, वायु-व-जल पारिस्थितिक संकट से लगभग तीन हज़ार चिड़ियाँ, ३० हज़ार प्रजातियाँ, तरह-तरह की कीट एवं उभयचर आज मृत्यु के कगार पर है। सर्वाधिक आय प्राप्त करनेवाले प्रकृतिदत्त उपहार है वन। इसलिए मानव अपनी बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वनों को लगातार काटते जा रहे हैं।

आज अनेक वन्य जीवों का अस्तित्व भी खतरे में है। पृथ्वी के सभी जीव और प्रजातियाँ विलुप्त होने के साथ-साथ पारिस्थितक संतुलन भी बिगडेगा। वनों की अंधाधुंध कटाई से जंगलों को साफ करने के साथ-साथ अनेक जंगली जीवजंतुओं का आवास भी नष्ट हो रहा है। इससे बाघ, हिरण, मोर जैसे जंगली जीव जंतुओं का अस्तित्व खतरे में है। केरल में दुर्लभ अनेक जीवजंतुएँ आज सदा के लिए विलुप्त हो गये हैं। पारिस्थितिकी संकट के कारण साइबेरियन सारस, हंस, गैलियायी जैसे अनेक पशु-पक्षियाँ भी विलुप्त हो रही हैं। दिन-प्रतिदिन दूषित हो रहे पारिस्थितिकी को

संतुलित बनाने में वन एवं वन्य जीव-जंतुओं की सुरक्षा करना है। भविष्य में शुद्ध वायु प्रदान करने के लिए वृक्षारोपण को बढावा देना है।

१.२३. पारिस्थितिकी : भारतीय संदर्भ में

भारत में पारिस्थितिकी संरक्षण की एक सुदीर्घ परंपरा है। भारत के पारिस्थितिकी दृष्टि को कवि टेगोर इस प्रकार व्यक्त करते हैं - "वन और प्राकृतिक जीवन मानव जीवन को एक निश्चित दिशा देते थे। मानव प्राकृतिक जीवन की वृद्धि के साथ निरंतर संपर्क में था। वह अपनी चेतन का विकास आसपास की भूमि से करता था। उसने विश्व की आत्मा तथा मानव की आत्मा के बीच के संबंध को महसूस किया।"[२४] इस पारिस्थितिकी में मानवीय हस्तक्षेप के कारण पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़कर विश्व के लिए एक भयावह स्थिति उत्पन्न हो चुकी है।

१.२३.१. भारतीय संस्कृति एवं पर्यावरण

भारतीय संस्कृति में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश जैसे सृष्टि के पंचमहाभूतों की उपासना करते आ रहे हैं। इसमें भौगोलिक, खगोलीय, प्राकृतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक पारिस्थितिक चिंतन को विशेष महत्व दिया है। पृथ्वी को माता के रूप में प्रतिष्ठित किया है -

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या"[२५]

प्राचीन संस्कृति आरण्यक संस्कृति होने के कारण वहाँ के जलवायु, वातावरण, मिट्टी, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, पशु-पक्षियों में समन्वयात्मकता होती है। वेद, धर्म, पुराण आदि सभी में पारिस्थितिकी संरक्षण को महत्व दिया है। मानव जाति की अदूरदर्शी प्रगति प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ रही है। आज के मानव तत्कालीन स्वार्थ लाभ में अंधे होकर भविष्य को घोर अंधकारमय बना रहा है।

हमारी वैदिक संस्कृति के थाती रूप वेदों - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद की ऋचाओं ने पारिस्थितिकी संरक्षण के अनेक निर्देश दिया है। पानी

का संकट हमारे सामने एक महंगी समस्या बन चुकी है। आज अधिकांश नदियाँ औद्योगिक अपशिष्ट, कूडा-कचरा आदि से ज़हरीला है। ऋग्वेद में मानव के दुष्कृत्यों के प्रति क्षमा माँगने की प्रवृत्ति देख सकते हैं - "हे जल देवो हम याजकों ने ज्ञानवश जो दुष्कृत्य किये हों, जान-बूझकर किसी से द्रोह किया हो, सत्पुरुषों पर आक्रोश किया हो या असत्य आचरण किया हो तथा इस प्रकार के हमारे जो भी दोष हों, उन सबको बहाकर दूर करें।"[२६] आज के ध्वनि प्रदूषण को ध्यान में रखते हुए अथर्व वेद में इस प्रकार लिखा है -

"मा भ्रात भ्रातंर द्विक्षन्मा स्वासारमुतस्वसा।
सम्यञ्च सव्रता भूखा वाचं वदन भद्रया।।"[२७]

इस प्रकार हमारे वैदिक मुनियों ने वायु को देव के रूप में मानते हैं। इसे प्रदूषित करना पाप है। वैदिक ऋषियों ने यज्ञयोग, वृक्षारोपण, वन-संरक्षण, जल संरक्षण एवं वन्य जीवों की सुरक्षा पर बल देते हुए पारिस्थितिक चेतना जगाने का प्रयास किया है।

भारत में विभिन्न धर्म एवं संप्रदाय हैं। इन सभी धर्मों, पुराणों, उपनिषदों, कुरान एवं बाइबिल आदि में भी पारिस्थितिकी संरक्षण का भाव देख सकते हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने प्रकृति को अष्टकोणी बताकर उसमें पंचतत्वों के साथ मन, बुद्धि और अहंकार को भी सम्मिलित किया है -

"सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृति यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम्।।"[२८]

वृक्ष की पूजा पौराणिक ग्रंथों में देख सकते हैं। इन ग्रंथों में वृक्षों का काटना महापाप मानते हैं। वन-संरक्षण पर बल देते हुए महाभारत के आदिपर्व में इस प्रकार कहते हैं -

"एकवृक्षोहि यो ग्रामे भवेत पर्णफलान्वितः।
चैत्यो भवति निर्ज्ञातिरचनीय सुपूजितः।।"[२९]

आज की अपसंस्कृति के प्रसारण से मानव और पारिस्थितिकी अपना अस्तित्व खो रही है। भारतीय दर्शनों, जैन-धर्म और बौद्ध-धर्म आदि में भी

पारिस्थितिकी संरक्षण को महत्व दिया गया। जैन धर्म में प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग एवं नष्ट करने के प्रति सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक नियम स्थापित किया है। महावीर ने 'जियो और जीने दो', 'परस्परोपग्रहो जीवनाम' आदि सिद्धांतों को प्रचार किया। जल की स्वच्छता के बारे में मनुस्मृति में इस प्रकार लिखते हैं -

"नात्सु मूत्रं पुरिषं वाष्टोवनं समुत्सृजेत्।
अमेहयलिप्तमन्यद्वा लोहितां वा विषाणि वा।।"[३०]

आज के हमारे विषैले सोच समस्त पारिस्थितिक तंत्र को प्रदूषित कर विश्व के अस्तित्व को खतरे में डाल दिया। 'आत्मवत सर्वभूतेषु' के भाव को आत्मसात कर हज़ारों वर्ष के पूर्व के वेदों, संस्कृतियों, पुराणों, दर्शनों, उपनिषदों एवं धर्मों के पारिस्थितिक नियमों को पालन कर प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करना होगा। इसमें संपूर्ण विश्व के कल्याण निहित है।

१.२४. पारिस्थितिकी : विश्व संदर्भ में

पारिस्थितिकी संकट एक देश की समस्या नहीं है, पूरे विश्व की है। अंतर्राष्ट्रीय भौगोलिक सीमाओं को लाँघकर जीवन को चुनौती दे रही पारिस्थितिकी संकट को निपटाने के लिए वैश्विक स्तर पर अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। इसमें स्टोकहोम सम्मेलन, रियो-डि-जेनेरो, क्वालालंपूर सम्मेलन, क्योटो तापसंधि, कोपनहेगन सम्मेलन आदि प्रमुख हैं।

१९७२ में स्टोकहोम में मानव पर्यावरण पर विश्व कांफ्रेंस हुआ। इस विश्व पृथ्वी सम्मेलन में ११० से अधिक राष्ट्रों की प्रतिनिधि उपस्थित हुई। यह विश्व स्तर पर किये गये पहला सम्मेलन है। 'हमारा सबका भविष्य' इस सम्मेलन का मूलमंत्र है। इस सम्मेलन विश्व को चुनौती : सफलताएँ एवं असफलताएँ, प्रजातियाँ और पारिस्थितिक तत्वः विकास के लिए संसाधन, विकास और पर्यावरण आदि अनेक पारिस्थितिक सिद्धांतों का प्रतिपादन कर पारिस्थितिक प्रगति के लिए अनेक सुझाव दिये गये हैं।

पारिस्थितिक संकट को लेकर विश्व चेतना जाग्रत करने के लिए 'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास सम्मेलन' ब्राजिल की राजधानी रियो-डि-जेनेरा में आयोजित किया था। तीन जून को आरंभित यह सम्मेलन चौदह जून में समाप्त हुई। बारह दिनों के इस विश्व प्रसिद्ध सम्मेलन में १७८ राज्यों ने भाग लिया। बिगड़ते पारिस्थितिक संतुलन के साथ मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्रदूषणों की विध्वंस त्रासदी से त्रस्त जल-थल-वायु पर विचार विमर्श किया। इस सम्मेलन की घोषणा है - "प्रदूषण फैलानेवाले देश ही दंड के भागी हों, तभी हम विश्व पर्यावरण को विनाश से रोक सकेंगे।"[३१] इस सम्मेलन में जलवायु-परिवर्तन संधि को भी प्रावधान किया गया।

भारत के पर्यावरण मंत्रि श्री कमलनाथ के नेतृत्व में १९९२ अप्रैल २० से २९ तक विकासशील राष्ट्रों के मंत्रियों का सम्मेलन आयोजित किया था। इसके बारे में कमलनाथ ने कहा है कि - "इस सम्मेलन में होनेवाले निर्णय वास्तव में धरती के भविष्य का निर्धारण करेंगे।"[३२] इसमें पारिस्थितिक संकट दूर करने हेतु कुछ विचार-विमर्श प्रस्तुत किया।

जलवायु परिवर्तन पर पहला वैश्विक सम्मेलन १९९७ में जापान के क्योटो शहर में हुई। इस सम्मेलन में कार्बन, मीथेन जैसी खतरनाक हरित ग्रह गैसों का उत्सर्जन और उससे पारिस्थितिकी पर होनेवाले विध्वंस त्रासदी पर चर्चा की। इस सम्मेलन के रिपोर्ट के अनुसार औद्योगिक देशों को अपना कार्बन उत्सर्जन कम करना है। अमरीका जैसे विकसित देशों के ज़िद्दीपन के कारण क्योटो ताप संधि १२९ देशों में १६ फरवरी २००५ को लागू हो पाया। सन् २०१२ में इस प्रोटोकोल की अवधि खत्म हो रही है।

जलवायु-परिवर्तन पर दूसरा वैश्विक सम्मेलन २००९ दिसंबर में कोपेनहेगन में आयोजित हुई। इस सम्मेलन में १९२ देश की प्रतिनिधियों ने भाग लिया। 'जलवायु-परिवर्तन : समस्या और समाधान' इस सम्मेलन का प्रमुख विषय है। विकसित और विकासशील देशों के कार्बन उत्सर्जन की सूची रखकर ग्रीन हाउस गैसों को कैसे कमी की जाये इसके बारे में चर्चा की। कार्बन उत्सर्जन का प्रमुख

कारण वैश्विक परिवहन है। इसका ७५ प्रतिशत उत्सर्जन विकसित देशों में होता है। इस सम्मेलन में कार्बन उत्सर्जन को कम करने की घोषणा की है।

मालदीव की सरकार समुद्र के भीतर और नेपाल की सरकार हिमालय के तल में पारिस्थितिकी सम्मेलन आयोजित कर जलवायु-परिवर्तन और अपने खत्म होते अस्तित्व पर विचार-विमर्श प्रस्तुत किया।

आणविक अस्त्रों के परीक्षणों के निषेध की संधि, आणविक अस्त्रों के प्रसार की संधि आदि भी पारिस्थितिकी को संतुलित रखने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लागू की गयी संधियाँ हैं। वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फंड, युनेस्को आदि भी पारिस्थितिक सुरक्षा हेतु कार्य कर रहे विश्व के संगठन है। भारत के प्रधानमंत्री इंदिरागाँधी और राजीवगाँधी ने पारिस्थितिकी संकट दूर करने के लिए अनेक प्रयास किये थे।

१.२५. पारिस्थितिकी और मीडिया

बाज़ारीकरण के इस दौर में मीडिया की भूमिका बहुआयामी है। आज जनसंचार माध्यम सूचनाएँ प्रसारित करने के साथ-साथ जनमानस में पारिस्थितिक चेतना जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। आज प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पारिस्थितिकी संबंधी कार्यक्रमों को प्रसारित कर उसके संकट को समझाने एवं हल करने का सुझाव भी दिया है।

इस दिशा में विज्ञापन भी प्रभावपूर्ण भूमिका निभा सकता है। मलबार गोल्ड के विज्ञापन में उपभोक्ततावादी संस्कृति के प्रभाव एवं कूडे-कचरे जैसे औद्योगिक अपशिष्टों के कारण दिन-प्रतिदिन प्रदूषित होती धरती को दिखा रहे हैं। दैनिक जीवन में हस्तक्षेप करनेवाले इन विज्ञापनों के माध्यम से आम लोग पारिस्थितिकी पर पड़नेवाले संकटों के बारे में आसानी से समझ सकते हैं। मलबार गोल्ड के विज्ञापन के ज़रिए वर्तमान एवं भावी पीढ़ी में पारिस्थितिक संकट के प्रति चेतना जागृत करने का संदेश भी मिलते हैं। आइडिया के विज्ञापन में भी पेड़ न काटने का संदेश है।

विकसित और विकासशील राष्ट्रों में पारिस्थितिक संकट जैसे विश्वव्यापी मुद्दों को आम लोगों तक पहुँचाने में फिल्मों और वृत्तचित्रों ने अहम भूमिका निभायी है। आज के युग में पानी एक उपभोक्ता वस्तु है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने पहाडों, जंगलों और नदियों का दिन-प्रतिदिन शोषण कर रहे हैं। संजय काक की फिल्म 'बड्स ऑन वाटर', अली काजमी की फिल्म 'नर्मदा : अ वैली राइजिज' और आनंद पटवर्द्धन की फिल्म 'अ नर्मदा डायरी' में नर्मदा नदी के नाश एवं सरोवर बाँध के प्रति होनेवाले जनसंघर्षों को प्रस्तुत किया है। अमरीका द्वारा किये गये आणविक विस्फोट के विध्वंसकारी नतीजों को झेलनेवाले मार्शल द्वीपवासियों के संघर्षों को डेनिस ओ रूरके ने 'हाफ लाइफ' नामक फिल्म में प्रस्तुत किया है। अलगोर के 'एन इनकन्वीनिएंट ट्रूथ' नामक वृत्तचित्र में ग्लोबल वार्मिंग से होनेवाली पारिस्थितिक खतरे के प्रति जागृत करने का संदेश मिलता है। 'अर्थवॉम', कंपनी मेन तथा 'नियमगिरी' नामक वृत्तचित्रों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के धात्विक प्रदूषण से उत्पन्न दुष्प्रभावों को प्रस्तुत किया है। पूँजीवाद द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के विनाश की गंभीर खतरा सुरेंद्रमनन की 'काली बेईं', होबेअर अरीको के 'रेड़-जोन' नामक फिल्म प्रस्तुत करती है। भोपाल गैस त्रासदी पर बनायी वृत्तचित्र है बी.बी.सी के 'वन नाइट इन भोपाल'। इस अंतर्राष्ट्रीय फिल्मों ने बराबर ज़ोर दिया है कि विकास हमेशा पारिस्थितिकी की दृष्टि से अनुकूल होना चाहिए।

हिंदु, नवभारत-टाइम्स, इंडियन एक्सप्रेस और मातृभूमि आदि दैनिक समाचार पत्रों ने पारिस्थितिकी के सामने मौजूद विनाश के खतरे के बारे में लेख छपाकर जनता में जागरूकता एवं उनके प्रति संवेदनशीलता पैदा करती है। इन लेखों के ज़रिए पर्यावरणविदों, वैज्ञानिकों एवं आंदोलनकर्मियों के विचारों को भी परिचित कराती है। विश्व के पूरे पारिस्थितिकी का विवरण 'अनिमल प्लानेट' एवं 'डिस्कवरी चैनल' में प्रसारित कार्यक्रमों से हमको मिलते हैं।

पारिस्थितिकी के सामने मौजूद खतरे को वैश्विक स्तर पर प्रस्तुत कर संपूर्ण विश्व को इसके प्रति जागरूक करने में जनसंचार माध्यमों का योगदान उल्लेखनीय है। कोपेनहेगन जैसे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, उसके विचार विमर्श, अचानक घटित पारिस्थितिक विध्वंस त्रासदियाँ भी हम मीडिया के माध्यम से समझ सकते हैं।

१.२६. पारिस्थितिकी और साहित्य

साहित्य और पारिस्थितिकी का अटूट संबंध है। साहित्य में प्रकृति को सदैव सम्मान दिया गया है। आज से लगभग ३५०० वर्ष पूर्व वैदिक साहित्य, पुराण, धार्मिक ग्रंथों में भी पारिस्थितिकी का महत्व देख सकते हैं। उसमें वृक्ष, हवा, पानी, जंगल, पर्वत, पत्थर, सूर्य, वायु और पृथ्वी आदि को संस्कृति से जोड़कर प्रदूषण से बचाकर उसकी आराधना भी करते हैं। उस समय पारिस्थितिकी नियमों का कोई भी अतिक्रमण नहीं किया है। इसलिए पारिस्थितिकी और मानव ने पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर लिया। १८६९ में 'डीप इकोलजी' के प्रवर्तक हीकेल ने पारिस्थितिकी का वैज्ञानिक विवेचन कर संपूर्ण पारिस्थितिकी को इको-सिस्टम के रूप में बदल दिया। इसके बाद पारिस्थितिकी संबंधी वैज्ञानिक ग्रंथों का विकास हुआ। 'द मेसेज ऑफ इकोलजी' में सी.जे क्रेब्स पारिस्थितिक घटकों एवं उनके वातावरणों का विवेचन करते हैं। 'ग्लोबल इकोलजी', 'जलवायु परिवर्तन से सामना : अविभाजित विश्व में मानव एकता' आदि इस प्रकार के पारिस्थितिकी संकट संबंधी ग्रंथ हैं।

उन्नीसवीं सदी के औद्योगिकीकरण एवं उपनिवेशीकरण से पारिस्थितिकी में संकट आ गया। इस युग के साहित्यकारों ने मनोरंजन एवं सामाजिक, सांस्कृतिक विकास के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के शोषण की सूचना दी। साहित्य के लिए पारिस्थितिकी एक विराट सर्जना है। जीवन के विविध आयामों और मूल्यों को पारिस्थितिकी घटकों के साथ टिप्पणी करता है। पहले साहित्य में पारिस्थितिकी घटकों को प्रतीकों, बिंबों, रूपकों, मिथकों और मुहावरों के रूप में चित्रित किया। उस समय चित्रित करने के लिए साहित्यकारों के सामने कोई भी पारिस्थितिक संकट या विध्वंस त्रासदी नहीं है।

आज के मानव के अत्यधिक स्वार्थ ने पारिस्थितिकी को मृत्यु के कगार पर खडा दिया है। औद्योगिकीकरण, विभिन्न देशों के बीच के युद्ध, प्राकृतिक घटनाएँ, प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी से होनेवाले दुष्प्रभाव आदि से दिन-प्रतिदिन विषाक्त होकर पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ता जा रहा है। इस प्रकार दिन-प्रतिदिन होनेवाले पारिस्थितिक बदलाव को साहित्यकार अपनी

रचनाओं के माध्यम से व्यक्त कर जनता में पारिस्थितिक चेतना जागृत करने का सफल प्रयास किया है। चाहे वह कविता हो या उपन्यास, नाटक, कहानी हो। युग प्रवाह के अनुरूप साहित्य में पारिस्थितिकी कथ्य और रूप बदलती है। उदाहरण के लिए भोपाल गैस त्रासदी के बारे में रमेश उपाध्याय ने अपनी कहानी 'त्रासदी ...... माइ फुट !' में प्रतिपादित करते हैं। ज्ञानेंद्रपति , एकांत श्रीवास्तव, अभिमन्यु अनंत, अमृतलाल वेगड़ आदि अनेक साहित्यकारों ने युगानुरूप उपभोक्तावाद, पूँजीवाद, बहुराष्ट्रीय निगमों एवं नवउपनिवेशवाद से उत्पन्न पारिस्थितिक प्रदूषणों एवं संघर्षों को अपने साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त कर जनता को जागरूक बनाने का सफल प्रयास किया गया है। बढ़ती हुई जनसंख्या प्रदूषण के मौलिक प्रदूषण स्रोतों के बारे में जनता को जाग्रत करने में साहित्य की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका है। आज के वसुधैव कुटुम्बकम् का सपना साहित्य और मीडिया के माध्यम से साकार हो रहा है। इस वसुधैव कुटुम्बकम् के महत्वपूर्ण पहलू है पारिस्थितिक संकट को दूर करना।

पारिस्थितिकी के अनुरूप विकास पर साहित्य ने बल दिया है। पारिस्थितिक चेतना की एक जीता-जागता मिसाल आज साहित्य के माध्यम से जनता को मिल रहा है। लोगों को जागरूक कर पारिस्थितिकी कल्याण की दिशा में बढ़ाने में साहित्य की अहं भूमिका है।

१.२७. इको-क्रिटिसिज़्म

इको-क्रिटिसिज़्म को हिंदी में पारिस्थितिक-विमर्श कहते हैं। इस पर आज अनेक चर्चाएँ चल रही हैं। इको-क्रिटिसिज़्म में पारिस्थितिक तत्वों का पुनर्मूल्यांकन करते हैं। विलियम रुकर्टस (William Rueckert's) ने अपने १९७८ में प्रकाशित निबंध 'लिटरेचर एण्ड इकोलजी : एन इक्सपिरिमेंट इन इको-क्रिटिसिज़्म' में सबसे पहले इको-क्रिटिसिज़्म शब्द का प्रयोग किया है। इसमें उन्होंने साहित्य में प्रयुक्त पारिस्थितिक सिद्धांतों एवं विचारों के बारे में प्रतिपादित किया है। इसके बाद शेराइल ग्लोटफेल्टी, हेरॉल्ड फ्रॉम (Cheryll Glotfelty, Harold Fromm) आदि विभिन्न आलोचकों ने इको-क्रिटिसिज़्म के बारे में अनेक विचार-विमर्श प्रस्तुत किये हैं।

सिमोन एस्टोक ने 'ए रिपोर्ट कार्ड ऑन इको-क्रिटिसिज़्म' में इको-क्रिटिसिज़्म के बारे में इस प्रकार बताया है - "Eco criticism has distinguished itself, debates not with standing. Firstly by the ethical stand it takes, its commitment to the natural world as an important thing rather than simply as an object of thematic study and secondly, by its commitment to making connections."[३३]

पर्यावरणीय चेतना के विकास का आरंभ विश्व के प्रमुख देशों में उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ। मानव ने आज जितना विकास प्राप्त किया है उतना आज पृथ्वी क्षतिग्रस्त हुई है। किसी न किसी रूप में संकटग्रस्त पृथ्वी को आसन्न विनाश से बचाना आज के पारिस्थितिक आलोचकों का लक्ष्य है। प्रकृति एवं संस्कृति का अंतर्संबंध भी इको-क्रिटिसिज़्म सिद्धांत के अंतर्गत आता है। साथ ही पारिस्थितिक मूल्यों को प्रतिपादित कर उसके अंतर्गत आनेवाले तत्वों की चर्चा की जाती है। पारिस्थितिक इतिहास, पारिस्थितिक बदलाव, वर्तमान पर्यावरणीय समस्याएँ आदि इसके प्रमुख मुद्दे हैं। प्रकृति और संस्कृति के द्वंद्व की चर्चा भी इको-क्रिटिसिज़्म के अंतर्गत आती है। पश्चिमी देशों के समान भारत में भी आज इको-क्रिटिसिज़्म महत्वपूर्ण चर्चा का विषय बन गया है। पर्यावरण संबंधी अध्ययन एवं शोध केलिए पश्चिमी राज्यों के समान भारत में भी कई केंद्र खुले हैं। 'राष्ट्रीय इन्स्टिटट्यूट ऑफ इकोलजी', 'इंडियन ट्रोपिकल इकोलजी सोसाइटी' आदि प्रमुख हैं।

१.२८. पारिस्थितिकी - शिक्षा

आज के हाइटेक युग के दौड़ में पारिस्थितिकी के बारे में मानवीयता को बोध करानेवाली शिक्षा है पारिस्थितिकी शिक्षा। दिन-प्रतिदिन होनेवाले चर्चाओं, सम्मेलनों द्वारा पारिस्थितिकी संकट के बारे में गंभीर चिंता व्यक्त की जा रही है। छात्रों को एल.के.जी से लेकर पारिस्थितिकी एवं मानव के पारस्परिक संबंधों के बारे में अवबोधन कर इसमें अभिरुचियाँ पैदा कर दें। इससे वे वैश्विक स्तर पर पारिस्थितिक संरक्षण के कार्य कर सकें।

पारिस्थितिकी शिक्षा के कई उद्देश्य हैं। प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध शोषण से उत्पन्न पारिस्थितिक संकट ज्ञान कराकर उसके संरक्षण हेतु पूरे विश्व में चेतना जागृत करना इसमें प्रमुख है। जल, थल, वायु, ध्वनि प्रदूषण के बारे में अवगत कराना तथा पारिस्थितिकी संतुलन बिगाड़नेवाले मानवीय कारकों एवं प्राकृतिक कारकों को पहचान करना महत्वपूर्ण है। छात्रों को पारिस्थितिकी नियमों को समझने योग्य बनाना चाहिए। औपचारिक शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर इसको पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाना है। पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने की जागरूकता पैदा करना भी आवश्यक है। पारिस्थितिकी शिक्षा से पारिस्थितिक-संकट प्रविधियों पर परियोजना एवं अनुसंधान कार्यों को प्रोत्साहित करना काफी लाभदायक होगा। पारिस्थितिकी के प्रति सचेत रखने केलिए उसकी शिक्षा बच्चों को अपने घर से ही देनी चाहिए।

१९८८-८९ से पारिस्थितिकी शिक्षा की शुरुआत हुई। वर्तमान में पारिस्थितिकी विज्ञान एक शाखा के रूप में विकसित हुई। पारिस्थितिकी खतरों पर आज अनुसंधान भी हो रहा है। वर्तमान एवं भावी पीढ़ी में पारिस्थितिकी समस्याओं के प्रति चेतना जागृत करने के लिए आज पारिस्थितिकी शिक्षा प्रासंगिक है।

१.२९. पारिस्थितिकी : संवैधानिक संदर्भ

आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकी संकट बचाव संबंधी नियम व कानून व्यवस्था स्थापित की है। आज भारत में पारिस्थितिक सुरक्षा हेतु २०० से अधिक अधिनियम है। भारतीय दंड संहिता की धारा २८८ से लेकर धारा २९१ तक पारिस्थितिकी सुरक्षा नियम दिये गये हैं। केरल के हाइकोर्ट ने पारिस्थितिकी संकट को दूर करने हेतु वैधानिक एवं प्रशासनिक सुधार करने के लिए 'ग्रीन बैंच' की स्थापना की है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने के लिए भारत-सरकार ने क्रियान्वित प्रमुख अधिनियम निम्नलिखित हैं -

क) भारतीय वन अधिनियम - १९२७

ख) वाटर (प्रिवेन्टसन ऑफ कन्ट्रोल ऑफ पौलुशन) ऐक्ट - १९७४

ग) ऐयर (प्रिवेन्टसन ऑफ कन्ट्रोल ऑफ एयर) ऐक्ट - १९८१

घ) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम - १९८६

ङ) द वाइल्ड लाइफ (प्रोटेक्शन) ऐक्ट - १९७२

च) द प्रिवेंशन आफ फुड़ एडल्टरेशन ऐक्ट - १९५४

छ) मोटोर वेहिकल अधिनियम - १९३८

ज) द इंडियन फॉरस्ट ऐक्ट - १९२७

झ) प्रिवेंशन ऑफ क्यूलेरी टी एनिमल ऐक्ट - १९६०

ञ) रेडियोधर्मी प्रदूषण अधिनियम - १९७१

ट) द इंडस्ट्रीज़ डेवलपमेंट एंड रेगुलेशन ऐक्ट - १९५१

ठ) एटमिक-एनर्जी ऐक्ट - १९६२

इसके अतिरिक्त सभी राज्य सरकारों ने पारिस्थितिकी सुरक्षा एवं प्रदूषण से बचने के लिए अनेक प्रकार के कानूनों का निर्माण किया। उपर्युक्त अधिनियम संबंधी कानूनों को पालन न करनेवाले व्यक्तियों को पाँच वर्ष का कारावास एवं एक लाख रूपये का दण्ड भोगना पड़ता है।

१.३०. निष्कर्ष

इक्कीसवीं सदी के मानव समाज के समक्ष चयन की अनेक सुविधाएँ हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ज़रिए आज के मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली। इस प्रौद्योगिकी, उन्नति एवं पूँजीवाद ने पारिस्थितिकी पर संकट पैदा कर दिया। चाँद पर कदम रखनेवाले मानव को आज धरती पर जीना और साँस लेना भी दूभर हो रहा है। पारिस्थितिक संकट इक्कीसवीं शताब्दी के सामने एक विश्वव्यापी चुनौती बनकर खड़ा है। विकास की पूँजीवादी प्रक्रिया में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ज़रिए प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन पर बल दिया जा रहा है। सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक अवमूल्यन बाज़ारीकरण एवं उपभोक्तावाद की बढ़ती हुई आवश्यकताएँ, मॉल-संस्कृति और बहुमंज़िली इमारतें पारिस्थितिक संकट को ओर भी उकसा रही है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिक संकट दूर करने के लिए कोपेनहेगन में जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, क्योटो-प्रोटोकोल आदि अनेक सम्मेलन एवं संधियाँ हो चुकी हैं। आज पूरा विश्व इसके प्रति काफी जागरूक है।

मीडिया के माध्यम से पारिस्थितिकी के प्रति संवेदनशीलता विकसित कर इसके समाधान खोजना आवश्यक हैं।

आज पारिस्थितिकी पर चलनेवाले विश्वव्यापी सम्मेलन एवं बहस विज्ञान, प्रौद्योगिकी विकास एवं पारिस्थितिकी संकट की दुविधाओं के इर्द-गिर्द घूम रहे हैं। आज इस संकट के प्रति दिन-प्रतिदिन अनेक आंदोलन हो रहा है, बल्कि विकास के बहाने पारिस्थितिकी संरक्षण को नज़र अंदाज़ कर सकते हैं। इससे धरती का अस्तित्व भी खतरे में है। पारिस्थितिकी संरक्षण से मानव समाज का विकास एवं पूरे विश्व का अस्तित्व संभव है। बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा किये गये शोषणों से मुक्त होकर पारिस्थितिकी को एक नया मॉडल बनाना है, नहीं है तो इक्कीसवीं शताब्दी में ज़हरीला पानी, बोतलों में ज़हरीला वायु, विषैली गैस, विकृत भूमि के अतिरिक्त कुछ नहीं बचेगा। इसीलिए साहित्यकारों ने पारिस्थितिक चेतना को आजकल एक महत्वपूर्ण विषय बनाया है। पारिस्थितिक जागरूकता पैदा करने में ऐसे लेखन की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है।

संदर्भ-सूची

१. प्रियरंजन त्रिवेदी - इन्टरनैशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ इकोलजी एण्ड एनवायोनमेंट,
भाग-१, पृ.१

२. http://en.wikipedia.org

३. विज्ञान गरिमा सिन्धु - वर्ष १९९९, अंक ३०, पृ.४१

४. द न्यू एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका वोल्यम ४, पृ.३५४

५. http://paryavaran.digest.blogspot.com

६. निशान्त सिंह - पर्यावरण और जलप्रदूषण, पृ.१३

७. वही, पृ.३५

८. http://en.wikipedia.org

९. शिवानंद नौटियाल - पर्यावरण : समस्या और समाधान, पृ.६९

१०. नया ज्ञानोदय, मार्च २००४, पृ.२७२

११. दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास - आधुनिक जीवन और पर्यावरण, पृ.७६

१२. http://paryavaran.digest.blogspot.com

१३. शिवगोपाल मिश्र, दिनेश मणी - मृदा-प्रदूषण, पृ.२५-२६

१४. डी.डी.ओझा - ध्वनि प्रदूषण, पृ.११

१५. शिवानंद नौटियाल - पर्यावरण : समस्या और समाधान, पृ.१५२

१६. डी.डी.ओझा - ध्वनि प्रदूषण, पृ.३९

१७. राजभाषा भारती, अक्तूबर-दिसंबर २००८, पृ.३२

१८. हरिश्चंद्र व्यास - जनसंख्या प्रदूषण और पर्यावरण, पृ.५७

१९. http://paryavaran.digest.blogspot.com

२०. निशान्त सिंह - पर्यावरण और जलप्रदूषण, पृ.१११

२१. विज्ञान गरिमा सिन्धु, अंक ३१, पृ.५५

२२. ज्ञान-विज्ञान, मई २००९, पृ.४

२३. हरिश्चंद्र व्यास - जनसंख्या प्रदूषण और पर्यावरण, पृ.१४५

२४. दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास - आधुनिक जीवन और पर्यावरण, पृ.२८३

२५. आजकल, जून २००९, पृ.१४

२६. संस्कृति, जनवरी-जून २००९, पृ.६६

२७. आजकल, जून २००९, पृ.१८

२८. पुष्पेंद्र सिंह, डॉ.दुर्गासिंह - धर्म ग्रंथों ने कहा पर्यावरण के बारे में, पृ.३९

२९. शिवानंद नौटियाल - पर्यावरण : समस्या और समाधान, पृ.३३७

३०. वही, पृ,३४६

३१. वही, पृ,३६९

३२. वही, पृ,३८५

३३. http://wikipedia, the free encyclopedia.com

Sinchu A. “Ecological consciousness in contemporary Hindi poetry (with special reference to post 1990), Thesis. Department of Hindi, University of Calicut, 2016.

अध्याय २

पारिस्थितिक चेतना : हिंदी कविता में एक पूर्वपीठिका

इक्कीसवीं सदी में विश्व भर में गहरे चिंतन का विषय रहा है - पारिस्थितिक चेतना। दिन-प्रतिदिन बिगड़ते पारिस्थितिकी में भविष्य के जीवन की कल्पना लगभग असंभव है। क्योंकि जीवों के अस्तित्व का मूल घटक प्रकृति है। आदिम युग से ही हमारे जीवन का आधार और आज भी हर पल साथ रहनेवाली एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है प्रकृति। मानव एवं प्रकृति का संबंध चिर पुरातन है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों में भी बदलाव आया। जीवों के उत्पत्ति एवं विकास का महत्वपूर्ण कारक है पर्यावरण। आज के औद्योगिक, रासायनिक एवं वैज्ञानिक क्रियाकलापों ने मानवीय सभ्यता को विकसित करने के साथ ही मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर रख दिया है। मुनाफे पर आधारित नव-उपनिवेशवादी एवं पूँजीवादी सभ्यता प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर उसके संतुलन को बिगाड़ती है। विकास के नाम पर प्रकृति का काफी नुकसान हो रहा है। मानव सहित सभी जैविक एवं अजैविक तत्व सम्मिलित पारिस्थितिक तंत्र का संरक्षण वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के लिए अनिवार्य है। मानव एवं पर्यावरण के संबंधों को दृढ़ बनाकर उसके संरक्षण की चिंता हिंदी कविता में द्रष्टव्य है। आदिकाल से लेकर समकालीन कविता तक की कविताओं में मानव एवं पर्यावरण का परिवर्तनशील संबंध दिखाई पड़ता है। पुराने समय में प्रकृति का कोरा वर्णन अधिक रहा तो समय के परिवर्तन के अनुरूप पर्यावरण समस्याओं की ओर कवियों की दृष्टि पड़ी।

२.१. आदिकाल

आदिकालीन साहित्य आश्रयदाताओं के वर्णनों से संपन्न है। वीर और श्रृंगार चित्रण में संलग्न कवियों के सामने पारिस्थितिक स्वरूप को परखकर विषय बनाने के लिए समय और अवकाश नहीं है। फिर भी इस काल के काव्य में गौण रूप से पारिस्थितिक वर्णन देख सकते हैं। जैन-बौद्ध धर्म साहित्य में भी पारिस्थितिकी की सुरक्षा का विचार किसी न किसी रूप में विद्यमान है। उन तीर्थंकरों के लिए वनस्पति, पशु-पक्षी, वृक्ष आदि सभी तत्व संसार की अभय वाटिका है। जैन-बौद्ध साहित्य पर्यावरण संरक्षण के संदेश का संवाहक है।

२.१.१. अब्दुल रहमान

सृष्टि के पंच तत्व - धरती, आकाश, जल, वायु और अग्नि - के बिना मानव का अस्तित्व असंभव है। इसलिए इन सभी तत्वों को देव-तुल्य मानते हैं। 'संदेश रासक' में अब्दुल रहमान ने इस प्रकार कहा है कि, लोगो, समुद्र, पृथ्वी, नक्षत्र, आकाश, पर्वत और वृक्ष जैसे सभी तत्वों का नमन करो, वह तुम्हें कल्याण देगा। अब्दुल रहमान ने पारिस्थितिक प्रदूषण को दूर करने के लिए सभी पर्यावरणीय तत्वों को आदर देने का आह्वान किया है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"रयणायर धर गिरितरुवराइँ गयणंगणांमि रिक्खाइँ।
जेणऽज्ज सयल सिरियं सो बहुयण वो सिवं देउ।।"[1]

इस काल के कवियों ने षड्ऋतु एवं बारहमासा वर्णन में पारिस्थितिक तत्वों की चर्चा की है। इस काल के कवियों के लिए प्रकृति मुख्यतया ऋतु वर्णन का साधन मात्र है। सूर्य के प्रचण्ड किरणों के ताप से भूमि-तल, वन-तृण जैसे सभी जैविक एवं अजैविक तत्व त्रस्त हैं। धरती भी तड़-तड़ कर फटने लगती है। क्योंकि उस सूर्य ताप से धरती भी थकी हुई है। जलस्रोतों में पानी नहीं है, इसके बिना सभी जीव-जंतु तड़पते हैं। उस काल में ये समस्याएँ ग्रीष्म ऋतु में मात्र ही देख सकते हैं। प्रदूषण ने संपूर्ण विश्व की पर्यावरणीय संतुलन को बिगाड़ दिया है। इसके कारण ये संकट आज भी हमारे सामने हैं। अब्दुल रहमान के शब्दों में -

"जम जीहह जिम चंचलु णहयलु लहलहइ,
तड़तड़यडि धर तिडइ ण तेयह भरु सहइ।"[2]

२.१.२. चंदबरदाई

चंदबरदाई कृत पृथ्वीराज रासो में युद्धों में प्रयुक्त अस्त्र-शस्त्रों से उत्पन्न सेना विनाश एवं युद्ध में हुए नरसंहार से सारी धरती रक्त से प्रदूषित होने का संकेत देख सकते हैं। रक्त के कीटाणु जल में मिलाकर मिट्टी, पानी को भी प्रदूषित कर रहे हैं। यह मानव सहित जीव-जंतुओं के लिए घातक रोगों का कारण बन सकता है। इसके साथ ही कवि ने ध्वनि-प्रदूषण से उत्पन्न दुष्प्रभावों का संकेत भी दिया है। ३०

डेसीबल से अधिक ध्वनि मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए हानिकारक है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ ध्वनि प्रदूषण भी दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। कवि कहते हैं कि युद्ध में अस्त्र-शस्त्रों की खनखनाहट एवं गुरजों की खड़खड़ाहट से सिर फूट रहे हैं ; नगाड़ों की ध्वनि से हाथी भी चौंकाते हैं –

"पृथु आउध फुट्टहिं गुरज्ज, वज्जिय गुरज पर।
जनु पषांन बूंद रूंद चन्द, लग्गिय दुज्जन घन।।"[३]

२.१.३. विद्यापति

विद्यापति का काव्य पारिस्थितिक सौंदर्य की विविध विशेषताओं से आपूरित है। उन्होंने प्रकृति की सारे उपादानों को अपनी काव्य का साधन बनाया है। जल वृष्टि, झंझा और प्रलय आदि घटनाओं को कवि ने विरह दुःख में लय कर दिया है। मानव जीवन को प्रेरणा प्रदान करनेवाली शक्ति है - प्रकृति। इसलिए पर्यावरण के प्रति जागरूकता उनके काव्य में देख सकते हैं। आज के औद्योगिक एवं मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्रदूषण से पारिस्थितिकी अपनी चरम-बिंदु पर पहुँच चुकी है। विद्यापति ने अधिकांश पदों में गंगा-यमुना जैसे नदियों को देवी रूप में माना है। स्वच्छ एवं निर्मल जल बहानेवाली गंगा आज अनेक प्रदूषणों से त्रस्त है। गंगा के महत्व को संकेत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"बड सुख सार पाओल तुअ तीरे
छाडइते निकट नयन बह नीरे।"[४]

कवि ने अपने काव्य के माध्यम से मानव एवं प्रकृति का तादात्म्य संबंध स्थापित करने का प्रयास किया है। यहाँ सही इको-सिस्टम की ओर संकेत है। विद्यापति एक दरबारी कवि थे। फिर भी उनका साहित्य सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय महत्व को रेखांकित करने के लिए पर्याप्त है।

२.२. मध्यकाल

इस काल के अंतर्गत भक्तिकाल और रीतिकाल आते हैं। भक्ति-धर्म प्रचार-प्रसार, रीति निरूपण आदि इस काल के कवियों का प्रमुख विषय है। फिर भी उनकी कविता या दोहों में प्रकृति भी एक प्रमुख केंद्रबिंदु बन गया है।

२.२.१. भक्तिकाल

भक्तिकाल के कवियों ने मानव व पर्यावरणीय संबंधों को भक्ति-भाव एवं सामाजिक भाव के साथ जोड़कर पारिस्थितिक संरक्षण पर बल दिया है। पारिस्थितिकी के सच्चे उपासक हैं - भक्तिकालीन कवि। उन्होंने मानव एवं पर्यावरण के चिर-पुरातन संबंधों को अपने काव्य में पर्याप्त प्रकाश डाला है। आज के पारिस्थितिक संकट की पूर्वपीठिका हज़ारों वर्ष के पूर्व के भक्तिकालीन साहित्य में भी देख सकते हैं।

२.२.१.१. कबीरदास

कबीर के लिए पारिस्थितिकी एक ब्रह्माण्ड है। जिसमें समुद्र, धरती, आकाश, नक्षत्र, पशु-पक्षी, पहाड़ एवं मानव आदि सभी जैविक और अजैविक तत्व सम्मिलित हैं। इन सभी तत्व परस्पर एक दूसरे से संबद्ध है। इससे पारिस्थितिक तंत्र सदैव क्रियाशील रहता है। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में जैविक एवं अजैविक घटकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया द्वारा हरे पौधे भोजन बनाते हैं। पर्यावरणीय चक्र संपूर्ण जीव-जगत् को नियंत्रित या संचालित करता है। प्राकृतिक नियमों के अंतर्गत आनेवाले किसी एक तत्व में असंतुलन पैदा हो जाये इसका दुष्प्रभाव संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र पर भी पड़ता है। बकरी और पौधे के माध्यम से इसका संकेत कबीर ने कई साल पहले हमें दिया है। हरे पौधे एवं घास को बकरी भोजन के लिए उपयोग करते हैं, मानव उस बकरी को मारकर खाते हैं। यहाँ पारिस्थितिक चक्र का परोक्ष संकेत है। कबीर के मत में पर्यावरण संतुलन आवश्यक है। कबीर के शब्दों में -

"बकरी पाती खात है, ताकि काढी खाल।
जो नर बकरी खात है, तिनको कौन हवाल।"[5]

कबीर की राय में ब्रह्माण्ड के सभी तत्वों में चेतना का प्रसार है। मानवीय सभ्यता के विकास के साथ-साथ पर्यावरणीयचक्र में भी बदलाव आया। आज संपूर्ण पारिस्थितिकी प्रदूषण के चंगुल में फँस गयी है। आज का रेगिस्तान प्राचीन काल में हरे-भरे तपोवन था। इस तपोवन के घास, कुश, फूल, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, जीव-जंतु आदि को अपना अपना महत्व है। संत कवि कबीर इन सभी तत्वों के संरक्षण पर सचेत हैं। आज के मानव दिन-प्रतिदिन असंख्य पेड़-पौधों को काट रहे हैं। इस वनस्पति विनाश से ऑक्सिजन एवं कार्बनडाइ ऑक्साइड के संतुलन में बदलाव आते हैं। यह मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए अत्यंत घातक बन जाते हैं।

हरे-भरे वनस्पति हमारे पर्यावरण के प्राण हैं। उपभोक्ता संस्कृति से प्रभावित आज के मानव औषधीय वनस्पति को उखाड़कर बाज़ार में बेचते हैं। कबीर कहते हैं कि दौना, वन तुलसी, चंपा आदि वनस्पतियाँ करोडों जीवों के तुल्य हैं। इसलिए वे दौना एवं मरुआ की पत्तियों, चंपा के पुष्पों एवं घास, कुश आदि को तोड़ना पाप मानते हैं। अचानक आनेवाले वनस्पति की कमी पर्यावरण के अन्य तत्वों में असंतुलन का कारण बन जाते हैं। क्योंकि जीव-जंतुओं का सह-अस्तित्व इकोसिस्टम के विभिन्न क्रियाकलापों से जुडा है। इसके अंतर्गत आनेवाले सभी तत्व एक दूसरे पर निर्भर हैं। वनस्पति छोटे-छोटे प्राणियों एवं कीट, पतंग आदि का आवास स्थान भी है। इसको उखाड़ते समय करोडों जीवों की हत्या कर रहे हैं। यह पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ने का कारण बन जाता है। घास-कुश आदि पृथ्वी के रोम को उखाड़ने से होनेवाली पीड़ा को संकेत करते हुए कबीर ने इस प्रकार लिखा है -

"दौना मरुआ चंपा कै फूल, मनहुँ जीव कोटि सम तूला।
औ प्रिथिमी के रोम उचारै, देखत जन्म आपने हारै।"[6]

कबीर कहते हैं कि जिस प्रकार महासमुद्र का निर्माण जलबिंदुओं से होता है, उसी प्रकार प्रकृति का निर्माण तन्मात्राओं एवं परमाणुओं से होता है। सृष्टि

के विकास के लिए पृथ्वी, जल, पावक, गगन एवं समीर जैसे पंच महाभूतों का संरक्षण अनिवार्य है। कबीर ने अनेक पदों या दोहों में इस सृष्टि सत्य को प्रतिपादित किया है। कबीर के लिए संपूर्ण सृष्टि ओंकारमय या महानाद है। धरती पर जीव-जंतुओं की उत्पत्ति एवं विकास प्राकृतिक नियमों के अनुकूल है। कबीर की राय में सृष्टि का मूल तत्व निरंजन है। परमात्मा का रूप है प्रकृति। इसमें चेतना का विकास ही कबीर के लिए राम है। वृक्ष हमारे पर्यावरण को स्वच्छ एवं पवित्र बनाते हैं। आज दिन-प्रतिदिन हो रहे वृक्षों का कटाव ने पर्यावरण को ही बिगाड़ दिया। वृक्षों के बिना पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व असंभव है। कबीर ने अपनी वाणी द्वारा वृक्षारोपण द्वारा वन-सृष्टि के संवर्द्धन का उपदेश दिया है। वृक्ष पर्यावरण की महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं। समस्त जीवों का हित उसमें निहित है। कबीर के शब्दों में वृक्ष दाता हैं। छोटे-छोटे पक्षियों का आवास स्थान भी हैं। पेड़-पक्षी एवं मानव को फल देकर जीवन-भर परोपकार करते हैं। कबीर कहते हैं कि वृक्ष के कटाव की पीड़ा धरती माता को असहनीय है। जाने-अनजाने आज के मानव ने दिन-प्रतिदिन वृक्षों को काटकर धरती माता को नंगा बनाते हैं। वर्तमान दुर्दशा के बारे में कई साल पहले ही संत कवि कबीर चिंतित है। वृक्ष वायु मंडल को परिशुद्ध कर समस्त जीव सृष्टि के लिए ऑक्सिजन प्रदान करते हैं। कबीर लिखते हैं -

"दाता तरवर दया फल, उपगारी जीवंत।
पंखी चले दिसावराँ, बिरषा सुफल फलंत।।"[७]

आज नदी, तालाब जैसे सभी जलस्रोत प्रदूषण से त्रस्त हैं। जीवन के लिए नितांत आवश्यक तत्व है पानी। सभी जीवों के शरीर में पानी की मात्रा अधिक होती है। भारत की पवित्र नदी है गंगा। जो आज अनेक प्रदूषणों से त्रस्त है। इसका कारण भी कबीर बताते हैं। मछलियों, कछुओं, घडियालों आदि अनेक जलीय जीव-जंतुओं का आवास स्थान भी है नदी। उनके क्रियाकलापों से ही जल अशुद्ध हो जाती हैं। साथ ही धर्म के नाम पर मृत मानव एवं मृत पशुओं को उसमें फेंकते हैं। उसमें से सड़नेवाले जीवाणु जल में मिलकर जल को प्रदूषित करते हैं। कबीर कहते हैं कि जिस जल को तुम पवित्र समझते हैं वो मृत-शरीरों की हड्ड़ी से झडकर एवं गूदे से गलकर नरक तुल्य अशुद्ध है। भारतीयों के लिए गंगा के जल अमृत की तरह अमूल्य है। कबीर ने कई साल पहले सरोवर में आग लगाकर सूखने की बात कह दी है।

लेकिन आज मानवीय क्रियाकलापों से नदी, तालाब एवं सरोवर जैसे जलस्त्रोत सूखकर धूल में बदल गया है। संसार की संपूर्ण सृष्टि जल पर भी निर्भर है।

औद्योगिक क्रांति ने मानव को भौतिक सुख देने के साथ साथ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व को संकट में डाल दिया। आज के मानव को पीने के लिए स्वच्छ पानी मिलना बहुत कठिन हो गया है। विभिन्न औद्योगिक अपशिष्टों ने विश्व के अधिकांश जलस्त्रोतों को प्रदूषित कर दिया है। इन सबका दुष्प्रभाव मानव सहित जलीय जीवों एवं वनस्पति पर पड़ता है। कबीर कहते हैं कि विषैले जल में पड़कर अनेक जीव मर गये हैं। मानव स्वास्थ्य के लिए भी यह अहितकर है। यह दूषित पानी अनेक घातक बीमारियों का कारण बन जाता है। ताज़ा पानी प्राणों की रक्षा के लिए कल्याणकारी है। इसका संकेत करते हुए कबीर ने इस प्रकार कहा है -

"सद पानी पाताल का, काढि कबीरा पीव।
बासी पावस पडि मुए, विषै बिलंबे जीव।।"[८]

कबीर ने अपने दोहों एवं पदों के माध्यम से नदी, तालाब, कुएँ जैसे जलस्त्रोतों को संरक्षित करने का आह्वान दिया है। नदी, भूमि एवं वायु प्रदूषण की तरह आज ध्वनि प्रदूषण भी विकराल रूप धारण कर चुका है। कबीर के समय में यह संकट उतना भयावह न था। फिर भी क्रौंच पक्षी के रुदन के माध्यम से कबीर ने इसका संकेत दिया है। मानव के कान को २५ से ३० डेसीबल तक की आवाज़ को सहन करने की क्षमता है। ३० डेसीबल से अधिक आवाज़ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के लिए अत्यंत घातक बन जाती है। बादलों की गड़गड़ाहट, उच्च वेगवाली वायु, भूकम्प एवं ज्वालामुखियों की ध्वनि एवं अपलवृष्टि आदि ध्वनि प्रदूषण का प्राकृतिक स्त्रोत है। कबीर के समय में उसका प्रभाव बहुत कम था। लेकिन आज औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण के फलस्वरूप आये मानव जनित स्त्रोतों से उत्पन्न शोर से इस प्रदूषण की तीव्रता में निरंतर वृद्धि हुई। कबीर कहते हैं कि क्रौंच पक्षी की विरह-वेदनामयी रुदन आकाश, नदी एवं तालाब की पानी को भी प्रतिस्पंदित कर रहे हैं। अन्य जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के लिए उनका यह रुदन या चीख-पुकार असहनीय बन जाता है। कबीर के शब्दों में -

"अम्बर कुजाँ कुरलियाँ, गरजि भरे सब ताल।
जिन ते गोविंद बीछुटे, तिनकौ कौन हवाल।।"[९]

यहाँ क्रौंच पक्षी की विरह वेदना को प्रस्तुत करने के साथ-साथ ध्वनि प्रदूषण के प्रति हमें जागरूक बनाने की भी प्रेरणा दी है। कबीर की दृष्टि में संपूर्ण पारिस्थितिकी एक ही परिवार है। इस परिवार के मानव, पशु-पक्षी, पेड़ एवं वनस्पति आदि सब में एक ही प्राण चेतना विद्यमान है। समूचे ब्रह्माण्ड में समानता का भाव उनकी रचनाओं में निहित है।

२.२.१.२. तुलसीदास

मानव और प्रकृति का संबंध अन्योन्याश्रित है। पारिस्थितिकी का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। जिसमें पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मानव, पृथ्वी, आकाश, जल, वायु एवं अग्नि आदि सब तत्व निहित हैं। प्रकृति के सच्चे उपासक हैं तुलसीदास। उनके लिए प्रकृति नीति और उपदेश देने की शक्ति है। सृष्टि तत्व है जल। कहा जाता है कि जल ही जीवन है। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के लिए आवश्यक प्रमुख तत्व है जल। जल को अमृत कहा गया है। पुराने समय में कुएँ, तालाब, नदी जैसे जलस्रोत पवित्र एवं निर्मल जल से भरे थे। तुलसीदास की राय में जलस्रोत सद्‌गुणों का अथाह भंडार है। पारिस्थितिकी के संतुलन को बनाये रखने में जल की भूमिका अतुलनीय है। जल के बिना जीना दूभर है। पशु-पक्षी, पेड़-पौधे एवं मानव आदि सभी जीव-सृष्टि पानी के बिना बेहाल हो जाते हैं। शुद्ध पानी एवं भोजन के बिना प्रतिवर्ष कई लोग मर जाते हैं। पानी के अभाव में खेती सूख जाती है। सूखते हुए खेतों की दशा को देखकर तुलसीदास श्रीरामचंद्र से वर्षा द्वारा उन खेतों को सींचने का निवेदन करते हैं -

"आप सहित न आपनो कोउ बाप कठिन कुभाँति।
स्यामघन सींचिए तुलसी सालि सफल सुखाति।।"[१०]

कवि को विश्वास है कि वर्षा से सूखते हुए खेत पुनः पल्लवित होगा। साथ ही इस प्राकृतिक वर्षा से अंतरीक्ष की शुद्धि होती है। चक्रवाती वर्षा के

फलस्वरूप उत्पन्न ओलवृष्टि जैसी प्राकृतिक घटना खेती का नाश करती है। इसका विनाशकारी परिणाम आज भी देखने को मिलता है। इसका संकेत तुलसीदास के काव्य में देख सकते हैं।

वर्तमान युग की प्रमुख त्रासदी है - ध्वनि प्रदूषण। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न शोर वातावरण को भी प्रदूषित करते हैं। विकास की होड़ में लगे मानव आज इस संकट को नज़र अंदाज़ कर रहे हैं। यह प्रदूषण मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों में मानसिक एवं शारीरिक समस्याएँ पैदा कर देती हैं। तुलसीदास कहते हैं कि युद्ध भूमि के भीषण शोर शत्रु की मानसिक शक्ति को भी नष्ट कर देता है। इस शोर से सूर्य छिप गये, पृथ्वी भी व्याकुल हुई। प्रलयकाल के बादल गरजने के समान है उस समय के युद्ध भूमि की शोर। इस शोर से समस्त पारिस्थितिकी त्रस्त है। १२० डेसीबल से अधिक तीव्रता की ध्वनि गर्भस्थ स्त्रियों में गर्भपात का कारण बन जाते हैं। इसका संकेत रामचरितमानस में देख सकते हैं -

"चलत महाधुनि गर्जेउ भारी। गर्भ स्त्रवउ सुनि निसिचरनारी।।"[११]

तुलसीदास कहते हैं कि उस समय के बहुत भारी गर्जन अनेक राक्षस स्त्रियों के गर्भपात का कारण बने थे। बादलों की गड़गड़ाहट, भूकम्प, ज्वालामुखी जैसी प्राकृतिक घटनाओं की आवाज़ भी अधिक तीव्र है। यह तीव्र ध्वनियाँ पर्यावरण को प्रदूषित करती हैं। मृदा और जल प्रकृति के अमूल्य धरोहर हैं। कहा जाता है कि हमारे देश की मिट्टी सोने के समान है। आज की मृदा विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से संकटग्रस्त है। इसका दुष्प्रभाव वनस्पति, जीव-जंतु एवं मानव पर पड़ता है। आज का ज़मीन एक वेस्ट बॉक्स जैसा है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न यह मृदा प्रदूषण पारिस्थितिक संतुलन को बिगाड़ता है। रासायनिक अपशिष्ट, कूडा-कचरे, डी.डी.टी जैसे कीटनाशक आदि उपजाऊ मिट्टी को खराब करते हैं। तुलसीदास ने मिट्टी को अमूल्य धरोहर मानकर अपने काव्य के माध्यम से उसके संरक्षण पर बल दिया गया है। उस समय में प्लेग जैसे महामारियों से पीड़ित काशी की दुर्दशा अत्यंत भयावह थी। लाशों से गंगा नदी एवं काशी की भूमि पटी हुई थी। यह कीटाणु नदी को प्रदूषित करने के साथ-साथ मिट्टी के जैविक नियंत्रण चक्र को भी बिगाड़ देते। कवि कहते हैं कि युद्ध के समय मरते योद्धाओं के रीछ को पृथ्वी में गाड़कर बालू से तोप

देते थे। इस मृत शरीर में फैले हुए अत्यंत हानिकारक कीड़े-मकोड़े पानी के साथ बहकर जल एवं मिट्टी में ज़हर फैलाते हैं। मरते योद्धाओं का लाश दाह संस्कार किये बिना पृथ्वी में गाड़ना पर्यावरण के लिए अत्यंत घातक बन जाता है -

"निशिचर भट महि डारहिं भालू। ऊपर डारि देहिं बहु बालू।।"[१२]

सागर प्राकृतिक संपदाओं का अथाह भंडार है। पारिस्थतिकी के संतुलन एवं जलवायु को नियंत्रित करने में उसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। उसकी गहराई में कई बहुमूल्य चीज़ें हैं। हमारे विश्व की प्राण-चेतना सागर एवं महासागर में है। सागरीय जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों को अपना अलग महत्व है। लेकिन आज यह सागर एवं महासागर कूड़ा-कचरा, नाभिकीय अस्त्रों के परीक्षण, गैस-रिसाव आदि अनेक कारणों से दिन-प्रतिदिन प्रदूषित होता जा रहे हैं। यह प्रदूषण मानव सहित सभी जीव-जंतुओं, शैवालों एवं वनस्पतियों के लिए अत्यंत घातक सिद्ध होता है। हिंद महासागर के वायुमंडल के ऊपर के ज़हरीले धुंध की खतरा आज भी हमारे सामने हैं। पुराने ज़माने में सुरों-असुरों के समुद्र मंथन से विष की प्राप्ति हुई थी, लेकिन औद्योगिकीकरण, नगरीकरण एवं मानवीय क्रियाकलापों के फलस्वरूप आये समुद्री जैव-संपदा के लिए विषतुल्य प्रदूषण आज हमारे सामने हैं। आगामी सालों में सागर एवं महासागर मृत हो जायेंगे। 'रामचरितमानस' में रामचंद्र जी ने समुद्र से रास्ता माँगते समय सबसे पहले प्रार्थना का ही मार्ग चुन लिया। उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर उस समय सोने थाल में मणियों को भरकर समुद्र देव आया। क्योंकि श्रीरामचंद्रजी एवं समुद्र देव को मालूम हैं कि सृष्टि के विकास या अस्तित्व के लिए समुद्र एवं समुद्रीय जीवों की रक्षा अनिवार्य है। इसका संकेत करते हुए तुलसीदास ने इस प्रकार लिखा है -

"मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने।"[१३]

इसमें समस्त सागरीय जीवों की रक्षा का भाव निहित है। आज के मानव को यही चिंता है तो सागर को प्रदूषण से मुक्ति मिलेगी।

आज हम युद्ध की भयंकर विनाशकारी प्रतिक्रिया दिन-प्रतिदिन देख सकते हैं। विभिन्न राष्ट्रों के बीच युद्ध पारिस्थितिकी असंतुलन पैदा करते हैं। युद्धों से

उत्पन्न प्रदूषण अत्यंत हानिकारक एवं अभिशाप-युक्त है। पुराने ज़माने में युद्ध बाणों के माध्यम से ही हुआ था। लेकिन आज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के माध्यम से निर्मित अस्त्र-शस्त्रों से ही है। आर्थिक विकास के लिए विकासशील देश इन अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण भी कर रहे हैं। युद्धों में प्रयुक्त ये हथियार मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पति जगत् के लिए अत्यंत घातक बन जाते हैं। तुलसीदास की राय में युद्ध से समस्त ब्रह्माण्ड महाकाल के ग्रास हो जायेंगे। एक विश्वयुद्ध हुआ तो पृथ्वी पर जीव-जंतु बचना मुश्किल हो जायेगा। तुलसीदास कहते हैं कि संपूर्ण जीव सृष्टि का नाश करनेवाला काल है महाकाल। इसको प्राचीनकाल के लोग भी डरते हैं। तुलसीदास के शब्दों में -

"जाकै डर अतिकाल डराई। जो सुर असुर चराचर खाई।।"[१४]

न्यूक्लियर युद्ध पारिस्थितिकी के अस्तित्व को ही मिटाता है। महाकाल के विनाशकारी परिणामों का संकेत तुलसीदास ने हमें कई साल पहले ही दिया है। पृथ्वी, पर्वत, सूर्य, पवन एवं बादल आदि पर होनेवाले मानवीय अत्याचारों से उत्पन्न भीषण परिणामों की प्रतिक्रिया भी तुलसीदास ने अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। मानव कल्याण के लिए सभी प्राकृतिक तत्वों का विकास एवं संरक्षण अनिवार्य है। तुलसीदास कहते हैं कि फुलवारी, बाग और वन बहुतेरे पक्षियों का आवास स्थान है। ये नगर के चारों ओर शोभा प्रदान करने के साथ-साथ पारिस्थितिकी को भी संतुलित बनाये रखते हैं। अतिवृष्टि, अनावृष्टि जैसे प्राकृतिक प्रकोपों की विनाशकारी परिणामों का संकेत भी उनके काव्य में देख सकते हैं।

२.२.१.३. सूरदास

सूर के काव्य कृष्ण-लीला की रंगभूमि है। फिर भी उनके काव्य में पारिस्थितिकी की स्वच्छंद परिवेश का विशेष महत्व है। क्योंकि कृष्ण की सभी लीलाएँ जमुना के प्रकृति के किनारे एवं वृंदावन के प्रकृति की गोद में हुई है। उस समय की सामंती रूढियों से मानव मन को मुक्ति करनेवाला माध्यम है - कृष्णलीला एवं वृंदावन की प्राकृतिक शोभा। उनकी लीला भी पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करने वाली प्रमुख शक्ति है। पारिस्थितिक प्रकोप एवं कृपा को व्रज के लोग सहजभाव से स्वीकार करते

हैं। प्रलयकाल की भयंकरता का यथार्थपरक चित्रण सूर के पदों में देख सकते हैं। घनघोर घटाएँ व्रज के आकाश में उमड़-घुमड़ कर अतिभयानक जल-वर्षण कर रही हैं। सूरदास कहते हैं कि गोकुल के चारों ओर अंधकार ही अंधकार है। यह देखकर सब व्रजवासी डरते हैं। उस समय के प्रलय का प्रमुख कारण प्राकृतिक जन्य प्रतिक्रियाएँ हैं, लेकिन आज के प्रलय का प्रमुख कारण मानवीय क्रियाकलाप बन गया है। सूर की राय में बिना प्रकृति रहित जीवन शून्य है। प्राचीनकाल में घटित दावानल में वन, आकाश, धरती, फल-फूल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व त्रस्त हो गये हैं। इसकी भयानक स्वरूप को संकेत करते हुए सूर ने इस प्रकार लिखा है -

"भहरात झहरात दावानल आयो
धेरि चहुँ ओर करि सोर अन्दोर वन धरनि आकास चहूँ पास छायो।।
बरत बन-बाँस, थरहरात कुस काँस, जरि उड़त है भाँस अति प्रबल धायौ।
झपटि झपटत लपट, फूल-फल चट-चटकि, फटत, लटलटकि द्रुम-द्रुमनवायौ।।"[१५]

प्राचीन काल की प्रकृतिजन्य घटना दावानल ने विकराल रूप धारण कर व्रज की समस्त पारिस्थितिकी को भी प्रदूषित कर दिया है। मानव का पूरा जीवन प्रकृति पर निर्भर है। उनकी सुख-दुःख की सहचरी होती है प्रकृति। इसका स्पष्ट संकेत भी सूर के काव्य में देखने को मिलता है।

२.२.१.४. मलिक मुहम्मद जायसी

आज के हाइटेक युग में पारिस्थितिकी की पुकार भी बुलंद है। रहस्यात्मक एवं आध्यात्मिक तत्वों के माध्यम से प्रेम निरूपण करना सूफी काव्य की एक प्रमुख प्रवृत्ति है। मानवीय सभ्यता के विकासात्मक इतिहास के साथ-साथ पर्यावरणीय बदलाव का इतिहास भी जुडा हुआ है। सूफी कवियों ने अपने काव्यों के कथानक के अंतर्गत प्रकृति के स्वरूप एवं उसकी महत्ता को भी प्रस्तुत किया है। जायसी के लिए प्रकृति एक दिव्य ज्योति है। उस दिव्य ज्योति में सभी जैविक एवं अजैविक तत्व समाहित है। उनके पद्मावत जैसे महाकाव्य में निरूपित प्रकृति मानव के सुख-दुःख में भी सहभागी है। भूचाल, प्रलय, आँधी, उपल-वर्षण एवं जल-वर्षण

जैसी पारिस्थितिक घटनाओं का संकेत उनके काव्य में देख सकते हैं। उस समय प्रलय, आँधी एवं भूकम्प जैसे पारिस्थितिक प्रकोप को ईश्वर कोप मानते हैं। 'आखिरी कलाम' में प्रस्तुत प्रलय भी ईश्वर की आज्ञा से घटित है। चालीस दिन तक के प्रलय में सारी सृष्टि जलकर पशु-पक्षी, पेड़-पौधे एवं मानव सहित सभी जीव-जंतु मर गया है। उस प्रलय से सारी धरती जल-मग्न हो गयी।

जलवायु परिवर्तन के परिणाम स्वरूप विश्व के प्रत्येक क्षेत्रों में प्रलय का प्रकोप आज भी हम देख रहे हैं। आज इस प्रकोप का प्रमुख कारण मानवीय एवं प्राकृतिक क्रियाकलाप बन गया है। आज विज्ञान ने प्रकृति को अपना दासी बनाया है। इसके परिणाम स्वरूप आज के मानव को अनेक पारिस्थितिक प्रकोपों को सामना करना पड़ता है। भूमण्डल के गुरुत्वाकर्षण में होनेवाले असंतुलन की दशा है - भूकम्प या भूचाल। जायसी कहते हैं कि इससे धरती का जीवन चक्र भी बदल गया। संपूर्ण जगत् इससे आकुलाता है। पारिस्थितिकी को त्रस्त एवं आतंकित करनेवाले भूचाल के बारे में जायसी ने इस प्रकार लिखा है -

"आवत उधत-चार बिधि ठाना। भा भूकम्प जगत अकुलाना।।
धरती दीन्ह चक्र बिधिलाई। फिरै अकास रहंट कै नाई।।
गिरि-पहार मेदिनी तस हाला। जस चाला चलनी भरि चाला।।"[१६]

प्राचीन काल के सूर्यताप आज के वैश्विक तापन की तरह है। जायसी अपने काव्य में कहते हैं कि सूर्यताप के कारण लोग पानी और अन्न के लिए तड़पते हैं। इसके प्रभाव से हरे-भरे धरती भी सूख गयी। आज के वैश्विक तापन के दुष्परिणामों का संकेत जायसी ने हमें कई साल पहले ही सूर्यताप के माध्यम से दिया है। कवि ने मानसरोवरों की आवश्यकता एवं उसके महत्व के बारे में भी अपने काव्य में प्रतिपादित किया है। दिन-प्रतिदिन प्रदूषित हो रहे समुद्रों का संरक्षण आज पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में अनिवार्य हो गया है। जलवायु की गतिविधियों का संबंध समुद्र से है। इसका संकेत भी उनके काव्य में देख सकते हैं।

२.२.२. रीतिकाल

रीतिकाल में प्रकृति की अपेक्षा श्रृंगार वर्णन एवं सामंती व्यवस्था को अधिक महत्व दिया है। आश्रयदाताओं की संतुष्टि के लिए श्रृंगारपरक काव्य रचना करना रीतिकालीन कवियों का लक्ष्य है। फिर भी उनके काव्य में पर्यावरणीय स्वरूप को बहुत कम रूप से व्यंजित किया गया है। प्रकृति उनके लिए चमत्कार का एक साधन मात्र है।

२.२.२.१. रहीम

सांस्कृतिक एवं पारिस्थितिक संकटों से उत्पन्न ज्ञानात्मक संवेदना रहीम के दोहों में देख सकते हैं। प्रकृति ने हमें अनेक संसाधन दिया है। फिर भी मानव ने अपने हितों के लिए पूरे देश के पर्यावरण को पलटने में व्यस्त है। पत्ते, फल, पेड़ जैसे पारिस्थितिक तत्वों को भी दिन-प्रतिदिन हत्या कर रहे हैं। रहीम के शब्दों में -

“आप न काहू काम के, डर पात फल मूल।
औरन को रोकत फिरै, रहिमन पेड बबूल।।”[१७]

आज की विश्व व्यापी समस्या है जल समस्या। कहा जाता है कि आनेवाले युद्ध जल युद्ध होगा। हमारे चारों ओर के अनंत जलराशि आज प्रदूषण से त्रस्त है। विकास के नाम पर होनेवाले अत्याचारों ने नदी, तालाब, झील जैसे जलस्त्रोतों को रेगिस्तान बनाया है। पानी के बिना एक ही पल में जीना मुश्किल है। इसका संकेत भी रहीम के दोहों में देख सकते हैं। पानी के बिना सरोवर, पेड़-पौधे आदि सब जीव-सृष्टि सूख जाते हैं। आज के मानव सृष्टि-नियमों के विरुद्ध कार्य करने में तत्पर हैं। भविष्य में होनेवाले पानी युद्ध को ध्यान में रखते हुए रहीम कहते हैं -

“रहिमन पानी राखिए, बिनु पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरे, मोती मानुस चून।।”[१८]

कवि कहते हैं कि पानी के बिना सब सूना हो जाता है, क्योंकि पानी जीव एवं वनस्पति जगत् का जीवन स्रोत है। इस अमूल्य संसाधन का संरक्षण करना अनिवार्य है। सांस्कृतिक, आर्थिक, जैविक दृष्टि से महत्वपूर्ण संसाधन है पानी। पानी के संदर्भ में रहीम के ये दोहे भविष्य में भी प्रासंगिक होगा।

जलवायु को नियंत्रित करने में सागर की भूमिका महत्वपूर्ण है। सागर के बिना जीवन का अस्तित्व कल्पनातीत है। नाभिकीय परीक्षण, परमाणु भट्टियों के अपशिष्ट पदार्थों का निष्पादन एवं गैस रिसाव आदि से आज सागर भी प्रदूषण से त्रस्त है। जीव की उत्पत्ति एवं विकास के लिए सागर एवं महासागरों का संरक्षण करना अनिवार्य है। रहीम कहते हैं कि सागरीय संपदाओं का दोहन पारिस्थितिकी की अनुकूल पद्धतियों से होना चाहिए, नहीं है तो हमें विष रूपी प्रदूषण प्राप्त होगा -

“मान-सहित विष खायके, संभु भए जगदीस।
बिना मान अमृत पिये, राहु कटायो सीस।।”[१९]

प्राचीन काल में समुद्र मंथन का संग्राम देव और दानवों के बीच में है। आज के वैज्ञानिक विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से समुद्र की अपार संपदाओं को खोजकर उसे दिन-ब-दिन शोषण करने में आतुर है। कवि ने अपने दोहे के माध्यम से सागरों एवं महासागरों के संरक्षण पर बल दिया है। जिस प्रकार भगवान शिव ने समुद्र मंथन से उत्पन्न विष को पीकर जगत् की रक्षा की है। उसी प्रकार प्रदूषण रूपी विष को मुक्त कर समुद्रीय पर्यावरण की रक्षा करना है।

२.२.२.२. वृंद

भारत कृषि प्रदान देश है। प्राचीन काल में देश की अर्थ व्यवस्था कृषि पर भी निर्भर है। रीतिकाल में कृषि की दशा पूर्णतः दयनीय है क्योंकि राजा लोग केवल सुख-सुविधा पर ही बल देते हैं। यह सुख लोलुपता उस समय के कृषि विनाश का एक और प्रमुख कारण बन गया। उस समय कृषि की सिंचाई पूर्णतः वर्षा पर भी निर्भर है। कभी-कभी वर्षा न होने पर भी पानी के अभाव में खेती सूख जाती है। खेती सूख जाने से कई लोग भूख से मरता है। आज की तरह उस समय में भी जंगली

जानवर फसलों को नष्ट करते हैं। कृषि-विनाश का संकेत करते कवि वृंद ने इस प्रकार लिखा है -

> "दीवो अवसर को भलो जासौं सुधरे काम।
> खेती सूखे बरसिबो धन को कौने काम।।"[२०]

कवि वृंद कहते हैं कि आनेवाले वर्षों में कृषि विनाश की समस्या एक प्रमुख समस्या बन जायेगा। आज की विभिन्न कृषि प्रणालियाँ मिट्टी, पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों को प्रदूषित करते हैं। क्योंकि कृषि में अपनाये जानेवाले तौर-तरीके पर्यावरण संतुलन को बिगाड़ते हैं। आज के कृषि विनाश का प्रमुख कारण जलवायु परिवर्तन है। कवि ने विभिन्न दोहों में भविष्य में होनेवाले कृषि समस्या की चर्चा की है। इसके अतिरिक्त मतिराम, केशवदास जैसे अनेक कवियों ने मनुष्य और प्रकृति के घनिष्ठ संबंध को प्रतिपादित किया है। अन्य अनेक सामाजिक समस्याओं के साथ-साथ पर्यावरणीय चेतना भी किसी न किसी रूप में रीतिकालीन काव्य में प्रतिबिंबित है।

२.३. आधुनिक काल

आधुनिककालीन साहित्य का प्रमुख विषय जीवन की समसामयिक समस्याएँ हैं। इस काल में नये-नये प्रस्थानों का आविर्भाव हुआ। इसका सीधा प्रभाव साहित्य, समाज और संस्कृति पर भी पड़ा है। साथ ही आधुनिक युगीन कवि पर्यावरण के प्रति अधिक सतर्क हो गया।

२.३.१. भारतेंदु युग

वैज्ञानिक प्रगति एवं सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक नवजागरण का युग है भारतेंदु युग। इस युग के कवियों ने हिंदी कविता को नयी दिशा एवं गति प्रदान की है। साथ ही उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से औपनिवेशिक शोषण एवं औद्योगिकीकरण से उत्पन्न पर्यावरणीय विनाश का संकेत दिया है। बढ़ते प्रदूषण ने पारिस्थितिक तंत्र की प्रक्रियाओं को गड़बड़ कर दिया है। भारतेंदु युगीन कविताओं में प्रकृति के महत्व को देख सकते हैं। अपने देश की प्रकृति

वैभव के प्रति कवि चिंतित हैं। इसका स्पष्ट प्रमाण है - भारतेंदु की 'प्रातः समीरन' नामक कविता। इसमें कवि ने प्राकृतिक वैभव को प्रस्तुत करने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर बल दिया है। प्राकृतिक संसाधनों के शोषण से उत्पन्न अकाल, महामारी एवं आर्थिक संकट की सूचना भारतेंदु ने कई साल से पहले हमें दिया है।

अंग्रेज़ी शासकों ने हमारे यहाँ की प्राकृतिक संपत्ति का भी शोषण किया। औद्योगिक क्रांति ने मानव समाज को समृद्धि की रास्ता खोला, साथ ही परंपरागत खेती व्यवसाय को भी नष्ट किया। औद्योगिक विकास एक ओर वरदान है दूसरी ओर अभिशाप भी है। इसके फलस्वरूप आये प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध शोषण भी भारतेंदु-युगीन कविताओं में देख सकते हैं। उस युग के कवियों ने प्राकृतिक संसाधनों के शोषण के खिलाफ लोगों के मन में चेतना जगाने का प्रयास किया है। अंग्रेज़ी शासन काल में अंग्रेज़ों ने अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए प्राकृतिक संपत्ति को देश-विदेश में भेज दिया। उपभोक्तावाद से उत्पन्न पर्यावरणीय आर्थिक शोषण के अतिरिक्त प्राकृतिक प्रकोप से उत्पन्न विनाश को भी भारतेंदु युगीन कवि अपनी कविताओं में विभिन्न ढंग से प्रतिपादित करते हैं। अतिवृष्टि एवं अनावृष्टि से फसल नष्ट हो जाते हैं। इससे जहरीली दवा पीकर अनेक किसान आत्महत्या कर रहे हैं। खेतीविनाश की यह समस्या आज भी देख सकते हैं। कवि राधाकृष्णदास के शब्दों में -

"कर कर आस किसानों ने जी जान लगा कर बोए थे,
सहकर धूप जेठ की चिल्ला बीज पास के खोए थे।
सहै आप दुःख पेट जरावे जिमीदार का पोत भरैं,
तिस पर मारी जाय फसिल तो कहो क्यों न बेमौत भरैं।"[२१]

आज विश्व के सभी क्षेत्रों में बाढ़ जैसे पारिस्थितिक प्रकोप देखने को मिलता है। तेज़ी से पिघलता ग्लेशियर, मूसलाधार वर्षा आदि अनेक कारणों से बाढ़ आ जाती है। ठाकुर जगमोहन सिंह ने छत्तीसगढ़ के महानदी की बाढ़ से उत्पन्न विनाश को 'प्रलय' नामक काव्य में प्रस्तुत किया है। आज यही हालत उत्तर भारत की कई नदियों में हम देख सकते हैं।

भारत की पवित्र नदी है गंगा। लेकिन आज गंगा विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से त्रस्त है। गंगा के बिना भारत का अस्तित्व कल्पनातीत है। भारतेंदु के लिए गंगा की जलधारा हीरक हार है। कहा जाता है कि भारतीयों के लिए गंगा माता है। गंगा की संरक्षण के प्रति सचेत कवि हैं भारतेंदु। इसका स्पष्ट संकेत उनके गंगा वर्णन में मिलता है।

२.३.२. द्विवेदी युग

जातीय, सांस्कृतिक एवं धार्मिक नवजागरण का युग है - द्विवेदी युग। भारतेंदु युग में अंकुरित हुई सामयिक प्रवृत्तियों का विकास इस युग में हुआ। प्रकृति और मानव का संबंध चिर पुरातन है। इस युग के कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से भारत के प्राकृतिक वैभव को प्रस्तुत किया है।

२.३.२.१. श्रीधर पाठक

प्रकृति के सच्चे उपासक कवि हैं श्रीधर पाठक। उनकी प्रकृति संबंधी रचनाओं में प्रमुख है 'कश्मीर सुषमा'। प्रकृति के नैसर्गिक रूप उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है। नदी-नाले, वन-पर्वत आदि वैभवों से सुंदर एवं सुदृश प्रदेश है भारत। 'वनाष्टक' एवं 'सांध्य अटन' में भी भारत का प्राकृतिक वैभव द्रष्टव्य है। विंध्य पर्वत के वन्य विभाग में एक सरोवर कवि के लिए स्वच्छ सुहावना है। 'वनाष्टक' में पर्यावरण के सौंदर्य को चार चाँद लगानेवाले हरे भरे वनों की महत्ता भी देख सकते हैं। लेकिन आज के मानव दिन-प्रतिदिन हज़ारों वनों को अंधाधुंध कटाई कर रहे हैं। यह हरे-भरे वन हमारे जीवन का महत्वपूर्ण अंग हैं। कवि अपनी कविता के माध्यम से इसके संरक्षण के प्रति हमें चेतावनी देते हैं।

कृषि प्रधान देश भारत में खेती वर्षा पर आधारित है। आज विश्व में सबसे चर्चित विषय जलवायु परिवर्तन का संकेत कई साल पहले कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से दिया है। वृष्टिहीन भारत की संकटग्रस्त दशा को देखकर श्रीधर पाठक निराला के समान मेघों से निवेदन करते हैं -

“हे घन ! किन देशन में छाये वर्षा बीति गई,
फिरहु कहाँ भरमाये क्या यह रीति नई,
सावन परम सुहावन, पावन शोभा जोय,
सो बन तुम्हारे आवन, रह्यो भयावन होय।”[२२]

वैदिक काल के कवियों के समान कवि कल्याण कामना के लिए सूर्य, मेघ जैसे सभी प्राकृतिक तत्वों से प्रार्थना करते हैं। श्रीधर पाठक के सभी काव्य संग्रह पारिस्थितिक चेतना से ओतप्रोत हैं।

२.३.२.२. नाथूरामशर्मा ‘शंकर’

श्रीधर पाठक के समान नाथूराम शर्मा ‘शंकर’ ने भी अपनी कविता में अवर्षा की समस्या को प्रस्तुत किया है। वर्षा न मिलने से पानी के अभाव में खेती सूख जाती है, पेड़-पौधों में न हरियाली है। मानव सहित सभी जीव-जंतु इस संकट से त्रस्त है। कवि के शब्दों में -

“सूख गये सब खेत सुखा दी सारी हरियाली,
गहरी तीत निचोड़ मेदिनी रूखी कर डाली,
धूल वैशाख उड़ाता है।”[२३]

१९ वीं शती के समय में पृथ्वी के अधिकांश भाग औपनिवेशिक शक्ति के चंगुल में है। औपनिवेशिक शक्तियों ने अर्थ लोलुप की लालच से हमारे यहाँ के प्राकृतिक वैभव को भी गड़बड़ा कर दिया। प्राकृतिक एवं मानव जनित कारणों से उत्पन्न अकाल, भूखमरी एवं महामारी का जो ताण्डव नृत्य का चित्रण नाथूराम शर्मा शंकर की ‘सम्वत् १९५३-५४’ नामक कविता में देख सकते हैं।

२.३.२.३. सियारामशरण गुप्त

सियारामशरण गुप्त की अधिकांश कविताएँ धरती से संबंधित हैं। आज जल, वायु, मृदा जैसे सभी पारिस्थितिक तत्व प्रदूषित हैं। एक अमूल्य प्राकृतिक

धरोहर है मिट्टी। कवि के लिए मिट्टी कंचन है, धरती माता है। 'घृणमयी' में संकलित कविताओं के माध्यम से उन्होंने मिट्टी की महत्ता को प्रस्तुत किया है। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में प्रकृति और मानव का संबंध अटूट एवं भावनात्मक होना चाहिए। इसका संकेत 'दुर्वादल' में संकलित 'आत्मोत्सर्ग' नामक कविता में देख सकते हैं। पर्यावरणीय एवं मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्राकृतिक प्रकोप है बाढ़। आज जलवायु-परिवर्तन से उत्पन्न एक प्रमुख समस्या बन गयी है बाढ़ एवं सूखा। बाढ़ की विनाशलीला को सियारामशरण गुप्त ने 'बाढ़' नामक लंबी कविता में प्रस्तुत किया है। आज की प्रलयंकारी बम-वर्षा ने हिरोशिमा और नागसाकी को तहस-नहस कर दिया। दैनिकी में संकलित कविताओं के माध्यम से कवि पूछते हैं कि इस प्रकार के परमाणु बम वर्षा कितने नगर को ध्वस्त कर दिया है। इस बम वर्षा से मिट्टी, जल एवं वायु आदि सभी पारिस्थितिक तत्व प्रदूषित हो गये थे। आज के मानव ने विज्ञान के माध्यम से प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों को दुरुपयोग कर रहे हैं। इसका संकेत निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है-

> "किस अग्निसुरा से मनुज आज मदमाता
> इस कलहकाण्ड का छोर जला सा जाता
> छोड़ूँगा अंचल नहीं धरा का तब भी
> इसकी माटी निर्ज्वलन सिन्धु रुस्नाता!"[२४]

कवि सियारामशरण गुप्त ने अपनी कविताओं में धरती की महिमा का गुणगान किया है। प्रकृति की अंतरात्मा को अपनी इच्छानुसार बदलने में भी आज के मानव सफल हैं। इससे उत्पन्न पर्यावरणीय असंतुलन मानव सहित सभी जीवजंतुओं के लिए खतरनाक है।

२.३.२.४. रामचंद्र शुक्ल

कवि रामचंद्र शुक्ल के लिए प्रकृति माता है। आज के अर्थलोलुप मानव ने प्रकृति पर जो प्रहार दिया है, शुक्ल ने उसके प्रति क्षुब्ध होकर उस संहारपूर्ण कर्मों की निंदा की है। प्रकृति माता के सामने मानव सहित सभी जीवजंतु एक जैसा है।

कवि शुक्ल कहते हैं कि उस प्रकृति माता पवन, जल, धूप आदि सबको समान रूप से देती हैं। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

“सुख के या रुचि के विरुद्ध एक जीव के ही,
होने से न माता कृपा अपनी हटाती है।
देती है पवन जल धूप सबको समान,
आम औ बबूल में न भेद-भाव लाती है।”[२५]

२.३.२.५. अयोध्यासिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’

ग्रीष्म की प्रचण्ड दावाग्नि मानव सहित सभी जीवजंतुओं के लिए अहितकर है। इसका संकेत अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध जी के काव्य में देख सकते हैं। कवि की राय में प्रकृति और मानव का संबंध अटूट होना चाहिए। ‘वैदेही वनवास’ में सीता अपने पुत्र लव-कुश से कहती हैं कि - प्रकृति से शिक्षा दीक्षा ग्रहण करेंगे तो आपका जीवन सफल बनेगा। कवि के शब्दों में -

“प्रकृति-पाठ को पठन करो शुचि-चित्त से।
पत्ते-पत्ते में है प्रिय शिक्षा भरी।।
सोचो समझो मनन करो खोलो नयन।
जीवन जल में ठीक चलेगी कृति-तरी।।”[२६]

कवि कहते हैं कि जिस प्रकार दावाग्नि जैसे पारिस्थितिक प्रकोप से कृष्ण वन के समस्त प्राणियों की रक्षा की है, उसी प्रकार आज के पर्यावरणीय संकट जैसे विपत्ति से सब प्राणियों की रक्षा करना मानव का सर्वप्रधान धर्म है।

२.३.२.६. मैथिलीशरण गुप्त

मैथिलीशरण गुप्त की अधिकांश रचनाएँ इतिवृत्तात्मक हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में प्राकृतिक वैभव का संकेत देकर उसके माध्यम से नैतिक उपदेश देने का प्रयास किया है। ‘गंगा की विदा’ नामक काव्य में उन्होंने आज दिन-प्रतिदिन प्रदूषित

हो रहे गंगा की महत्ता पर प्रकाश डाला है। पारिस्थितिक तंत्र को संतुलित बनाये रखने में नदी, पहाड़ आदि का योगदान अमूल्य है। भारतीयों की अमूल्य संपदा है गंगा। उनका महत्व सांस्कृतिक, धार्मिक एवं पर्यावरणीय भी है। 'साकेत' में गंगा को देखकर सीता कहती हैं -

"जय गंगे, आनंदतरंगे, कलरवे
अमल अंचले, पुण्यजले, दिवसम्भवे
सरस रहे यह भारत-भूमि तुमसे सदा,
हम सबकी तुम एक चलाचल सम्पदा।"[२७]

उर्मिला के लिए पशु-पक्षी मात्र ही नहीं संपूर्ण प्रकृति सहभागी बन जाते हैं। निराला के समान गुप्त भी मेघ से बरसने का आह्वान करते हैं। समयानुसार जलवृष्टि न होने के कारण मानव सहित सभी जीव-जंतु त्रस्त हैं। चारा एवं घास सूखकर संपूर्ण प्रकृति या भू-भाग ठूँठ बन चुके हैं। इसका संकेत उनकी कविताओं में देख सकते हैं।

२.३.३. छायावाद

प्राकृतिक संसाधनों को सर्वाधिक दोहन करने की प्रक्रिया औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रांति के अंतर्गत निहित है। इससे उत्पन्न क्रांतिकारी बदलाव एवं पारिस्थितिक संघर्ष छायावादी काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य है। इसमें प्रकृति का मानवीकरण के साथ-साथ मानव एवं पर्यावरण के अन्योन्याश्रित संबंधों में आये बदलाव भी देख सकते हैं।

२.३.३.१. जयशंकर प्रसाद

कवि प्रसाद के लिए प्रकृति एक मूक शिक्षक है। 'प्रेम पथिक' में कवि प्रकृति में भी प्रेम दर्शन की स्थापना की है। इसमें कवि कहते हैं कि विश्व प्रेम के अंतर्गत प्रकृति प्रेम को भी मिलाना है। इसमें कवि संसार, प्रकृति एवं मानव के अन्योन्याश्रित संबंधों की व्याख्या करते हैं। 'कानन कुसुम' में कवि के लिए प्रकृति

एक पाठशाला है। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं को प्रेरणा प्रदान करनेवाले प्रमुख शक्ति है प्रकृति। 'आँसू' एक वेदना प्रधान विरह काव्य है। उनके विरह में प्रकृति की समस्त चराचर साथ रहती है। इसमें प्रकृति मानवीय व्यवहारों की संवाहिका है। मानव भी प्रकृति का अभिन्न अंग है। मानवीय क्रियाकलापों से सूखे वसुधा की करुण कहानी का संकेत भी कवि ने इसमें दिया है। 'करुणालय' में रोहिताश्व प्रकृति के सहारे आगे बढ़ता है। उसके प्रकृति के साम्राज्य में संघर्ष नहीं है, शांति मात्र ही है। प्रकृति की गतिशीलता कवि को नये-नये संदेश दे रहा है। इसका संकेत भी 'करुणालय' में मिलता है।

प्रसाद जी ने 'कामायनी' की चिंता सर्ग में प्रलय जैसी पारिस्थितिक प्रकोप की विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। यह प्रलय भोग लालसा से उत्पन्न है। इससे सभी प्राकृतिक वैभव नष्ट होकर धरती श्मशान की तरह बन गयी है। साथ ही ज्वालामुखी, प्रचण्ड झंझावत आदि आपदाओं से उत्पन्न संकट भी इस काव्य में देख सकते हैं। पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में सागर एवं महासागरों का योगदान अमूल्य है। अनेक खनिज संपदाओं का स्रोत है समुद्र। सृष्टि के अस्तित्व एवं विकास के लिए सागरों का संरक्षण अनिवार्य है। सागरीय प्रदूषण आज हमें सृष्टि के अंत की सूचना दे रहा है। सागरीय प्रदूषण से उत्पन्न विभीषिकाओं से कवि चिंतित है। कवि बताते हैं कि जलप्लावन से उत्पन्न प्रलयकारिणी वृष्टि समुद्र को भी प्रदूषित किया है। इसने समुद्री जीवों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर खड़ा कर दिया है। आणविक शक्तियों के प्रयोग एवं परीक्षणों से उत्पन्न प्रदूषण से त्रस्त सामुद्रिक जैव संपदा को आज भी हम देख सकते हैं -

"जलनिधि के तलवासी जलचर विकल निकलते उतराते,
हुआ विलोडित गृह तब प्राणी कौन ! कहाँ ! कब ! सुख पाते ?"[२८]

कवि प्रसाद कहते हैं कि जलनिधि के सारा जल विषमय हो गया है। सभी जलीय जीव-जंतु व्याकुल होकर इधर-उधर भटकते हैं। कवि ने यहाँ सागर संरक्षण की आवश्यकता का संकेत दिया है।

भूमण्डलीकरण एवं सूचना-प्रौद्योगिकी ने संपूर्ण विश्व को एक ग्लोबल गाँव बना दिया है। इस गाँव की पूँजीवादी, नव उपनिवेशवादी एवं प्रौद्योगिकी शक्तियों ने प्रकृति पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया है। इस टेक्नॉलजिकल क्रांति में संपूर्ण पारिस्थितिक विनाश के कीटाणु अंतर्निहित हैं। उपभोक्तावादी समाज से प्रभावित आज के मानव प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में लग्न है। इससे उत्पन्न संकट भी प्रसाद ने कामायनी में प्रस्तुत किया है। भूमण्डलीकरण एवं बाज़ारीकरण के अंधाधुंध विस्तार ने मानव को अर्थ-पिशाच बनाकर पर्यावरण को भी विनाश करने की प्रेरणा दी है। तूफान, भूकम्प जैसी पारिस्थितिक आपदाओं से प्रभावित है सारस्वत प्रदेश। इस नगर की रानी अपनी सुख-समृद्धि केलिए मनु से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का उपयोग कर प्राकृतिक संपदाओं को दोहन करने का आह्वान कर रहे हैं। कवि बताते हैं कि सारस्वत प्रदेश के पारिस्थितिक संघर्ष का प्रमुख कारण विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी है। प्राकृतिक रहस्यों को उद्घाटित करने की वैज्ञानिक शक्ति क्षोभित होकर उस समय ध्वंसकारिणी बन गयी। वैज्ञानिक तकनीकी यंत्रों के अतिशय प्रयोगों ने पर्यावरणीय तत्वों की शक्ति को नष्ट कर पर्यावरणीय संतुलन एवं मानव जीवन को जर्जर कर दिया। कवि प्रसाद के शब्दों में -

"प्रकृति शक्ति तुमने यंत्रों से सबकी छीनी !
शोषण कर जीवनी बना दी जर्जर झीनी !"[२९]

प्राकृतिक दोहन सांस्कृतिक विनाश का भी कारण बन जाते हैं। कवि कहते हैं प्रकृति केवल जड़ एवं उपभोग की वस्तु मात्र नहीं है। उसमें संपूर्ण सृष्टि को नियंत्रित करने की एक चेतन सत्ता निहित है। कवि पेड़-पौधे, जीव-जंतु, मानव, नदी, सागर जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों के विनाश के प्रति चिंतित है। आज के मानव ने हिमालय के प्राकृतिक वैभव को भी नष्ट कर दिया है। यह दोहन ने हिमालय के विभिन्न प्रजातियों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर खड़ा कर दिया है। पारिस्थितिक असंतुलन पृथ्वी को सागर, सागर को मरुभूमि, बर्फ को नदी बन देता है। आज के हिमग्लेशियरों का संकट भी कामायनी में देख सकते हैं। प्रकृति में होनेवाली परिवर्तन उसकी गतिशीलता का द्योतक है। आखेट-विहार, पशु-बलि आदि का भी कवि विरोध करते हैं। यह पर्यावरणीय तत्वों में होनेवाले क्रम को गड़बड़ाकर

संपूर्ण जीव जगत् के संतुलन को बिगाड़ते हैं। संघर्ष सर्ग में कवि बताते हैं कि पर्यावरण से निडर होकर संघर्ष करने के लिए आतुर है आज के मानव। पारिस्थितिकी में होनेवाले नित्य व्यतिक्रम विश्व की संहार शक्ति का द्योतन करते हैं। विश्व को संहार करने के लिए भविष्य में पंचभूतों का तांडव नृत्य भी होगा। प्रसाद जी ने यहाँ संपूर्ण विश्व की पारिस्थितिकी को बचाने का प्रयास किया है। वैज्ञानिक एवं बाज़ारी संस्कृति से आज के मानव को प्रकृति से संघर्ष करने की प्रेरणा मिली है।

आज के विकसित और विकासशील देश अपनी आर्थिक प्रगति के लिए नित्य नये-नये आणविक शस्त्रास्त्रों का आविष्कार कर रहे हैं। भीषण शस्त्रास्त्रों का प्रयोग पारिस्थितिक तत्वों के व्यतिक्रम में सहायक है। यह महानाश का कारण बन सकते हैं। भीषण शस्त्रास्त्रों के प्रयोग से होनेवाले दुष्परिणामों का संकेत कवि ने मनु के माध्यम से संघर्ष सर्ग में दिया है। कवि बताते हैं कि इसके प्रयोग से पारिस्थितिकी के अंतर्गत आनेवाली पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि जैसे प्रत्येक परमाणु व्याकुल है। सूर्य, चंद्र, तारे भी चौंककर जाते हैं। यहाँ पुनः प्रलय आने की संभावना भी देख सकते हैं। मानव की मंगलकारिणी प्रकृति क्षण-प्रतिक्षण काँप रही है। इस अस्त्रशस्त्रों के प्रयोग से भूमि में रक्त नदी की बाढ़ फैलने की आशंका भी कवि ने व्यक्त की है। क्योंकि -

"धूमकेतु-सा चला रुद्र-नाराच भयंकर,
लिये पूँछ में ज्वाला अपनी अति प्रलयंकर।"[३०]

इस पारिस्थितिक संघर्ष से नानाविध शस्त्रास्त्रों को बनाने व बेचने के युद्ध व्यापार की महादांभिकता से होनेवाले भीषण जनसंहार एवं पारिस्थितिक विनाश के कारणों का परिचय मिलता है। इडा को यह अस्त्रशस्त्रों ने प्रकृति से संघर्ष करने की कला सिखायी है। इसका संकेत भी संघर्ष सर्ग में द्रष्टव्य है। यंत्रों का अतिशय प्रयोग ने प्रकृति को धराशयी कर दिया। पर्यावरण एवं उसके पुतलों का संघर्ष कवि ने स्वप्न सर्ग में प्रतिपादित किया है। पारिस्थितिकी के साथ सामूहिक अतिचार कर विजय प्राप्त करनेवाले आज के मानव को अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ सामना करना पड़ता है। इससे संपूर्ण सृष्टि भी नष्ट होगी। आज प्रकृति से तादात्म्य न होकर संघर्ष की स्थिति बनी हुई है। इसका प्रमुख कारण प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन है।

प्राकृतिक संसाधनों को किस सीमा तक उपयोग करना है, इसके बारे में श्रद्धा कहती है -

"एक तुम, यह विस्तृत भू-खंड प्रकृति वैभव से भरा अमंद,
कर्म का भोग, भोग का कर्म, यही जड़ का चेतन आनंद।"[३१]

कवि प्रसाद कहते हैं कि प्रकृति को समृद्ध बनाकर उसका भोग करना है। सृष्टि के विकास के लिए संपन्न प्रकृति अनिवार्य है। प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन से घटित प्राकृतिक प्रकोपों से त्रस्त भारत जैसे विकासशील देशों के लिए श्रद्धा की योजना आज के इक्कीसवीं सदी में प्रासंगिक है, भविष्य में भी होगा। प्रसाद ने 'कामायनी' में पर्यावरण की महत्ता, मानव की अत्याचारों से उसमें होनेवाले विभीषिकाओं एवं उसके समाधान को प्रस्तुत किया है।

२.३.३.२. सुमित्रानंदन पंत

प्रकृति के लाडले कवि पंत के लिए प्रकृति वास्तविक जीवन की सहचरी है। पृथ्वी की संरचना ब्रह्माण्डीय संतुलन के आधार पर है। विकास की अंधी दौड़ में विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी ने प्रकृति के सारे रहस्यों का उद्घाटन किया है। इसका दुष्परिणाम है - पर्यावरण प्रदूषण। पारिस्थितिक तत्वों में आनेवाले असंतुलन अनेक प्राकृतिक दुर्घटनाओं का कारण बन जाते हैं। आज के मानव की प्रदूषित मनोवृत्ति ने पर्यावरणीय तत्वों को विषैला बना दिया है। इन तत्व में आये असंतुलन के परिणाम स्वरूप विश्व में भूकम्प, ज्वालामुखी, बाढ़, ज्वार-भाट आदि प्राकृतिक आपदाएँ दिन-प्रतिदिन घटित हो रही है। आज के अधिकांश प्राकृतिक आपदाएँ मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न है। कवि पंत कहते हैं कि ये प्राकृतिक घटनाएँ शस्य श्यामला धरती को पददलित करते हैं। यह कवि को असहनीय है। इन प्राकृतिक घटनाओं से संपूर्ण पारिस्थितिक संपदाएँ विनष्ट होकर देश भी लुप्त हो जाते हैं। इसका प्रभाव अत्यधिक भयानक है। प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त इस विश्व में जीना कवि के लिए मुश्किल है -

"वह्नि, बाढ, उल्का, झंझा की भीषण भू पर
कैसे रह सकता है कोमल मनुज कलेवर ?
निष्ठूर है जड़ प्रकृति, सहज भंगुर जीवित जन।"[३२]

कवि कहते हैं कि प्रकृति चिर-परिवर्तनशील है। लेकिन आज की पारिस्थितिक परिवर्तन से भयंकर खतरा पैदा हो गया है।

द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद के औद्योगिक क्रांति ने संपूर्ण विश्व में कल कारखानों का जाल बिछा दिया है। औद्योगिक विकास से आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक जैसे सभी क्षेत्रों में प्रगति हुई। साथ ही इस क्रांति ने मानव एवं प्रकृति के अंतरसंबंधों को बदल कर रख दिया है। यह विकास शहरों पर केंद्रित होने के कारण लोग गाँव से निकलकर महानगरों में बस गये हैं। महानगरों की अधिकांश आबादी फैलता प्रदूषण खतरे का कारण बन गया। कवि 'सौवर्ण' में कहते हैं कि आज के लोग गंदी बस्तियों, झुग्गी झोंपडियों के प्रदूषित वातावरण में जीवन यापन करने को अभिशप्त है। विश्व क्रांति के प्रलय बलाहक है - औद्योगिक क्रांति। औद्योगिक केंद्रों ने क्षण भर घनी बस्तियाँ उगलती हैं। इस औद्योगिकीकरण ने अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए प्राकृतिक नियमों का अतिक्रमण किया है। इस अंधाधुंध दोहन के फलस्वरूप पारिस्थितिकी में असंतुलन की खतरा पैदा हो गयी है। गंदी बस्ती एवं कारखानों के धुआँ से प्रदूषित वातावरण में रहनेवाले लोगों को स्वच्छ पानी, शुद्ध वायु एवं भोजन मिलना दूभर हो गया है। इसका संकेत भी पंत की कविताओं में देख सकते हैं। कवि की राय में गंदी बस्ती एवं कारखाना औद्योगिक क्रांति का अभिशाप है। मानव की सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए औद्योगिकीकरण आवश्यक है। उनकी समृद्धि का मार्ग प्राकृतिक नियमों के अनुकूल होना चाहिए। औद्योगिक विकास ने वायु, जल, मिट्टी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को प्रदूषित कर दिया है।

आज की विकरालतम समस्याओं में से एक है - जनसंख्या वृद्धि। लगातार बढ़ रही जनसंख्या के कारण विश्व में एक तिहाई आबादी महानगरों के गंदी बस्तियों में पशुओं के समान प्रदूषित परिवेश में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। दिन-प्रतिदिन बढ़ रही जनसंख्या वृद्धि से इको-सिस्टम का अस्तित्व भी संकट में है। कवि

कहते हैं कि कृमियों की तरह बढ़ रही है जन संतति। इसके कारण भू का भार क्षण-प्रतिक्षण बढ़ रही है। जनसंख्या वृद्धि को कम करने के लिए परिवार नियोजन पर ज़ोर देते हुए 'गीत-अगीत' में कवि ने लिखा है -

"सन्तति निग्रह करो,
न बोझ बढे जन-भू पर
पशुओं से मत बनो,
न भू-जीवन पथ दुष्कर।"[३३]

आणविक एवं नाभिकीय अस्त्र-शस्त्रों ने संपूर्ण विश्व के पारिस्थितिकी को महाकाल के कगार पर खड़ा कर दिया है। हिरोशिमा और नागसाकी में हुए अणु-बम का विस्फोट पारिस्थितिक संकट पैदा कर दिया है। इसका संकेत उनकी कविताओं में देख सकते हैं। सुन्दरपुर गाँव नष्ट होने का प्रमुख कारण भी अकस्मात् हुए अणु-बम विस्फोट है। बम-विस्फोट से उत्पन्न हानिकारक एवं अभिशापयुक्त प्रदूषण का खतरा वहाँ आज भी देख सकते हैं। हिरोशिमा, नागसाकी और सुन्दरपुर के आणविक बम-विस्फोटों का संकेत करते हुए कवि आज के मानव से परमाणु परीक्षण एवं विस्फोटों को विरोध करने का आह्वान करते हैं। परमाणु शक्ति के खतरनाक प्रयोगों से पृथ्वी पर जीवन का नामोनिशान भी मिट जायेगा। कवि पंत बताते हैं कि अणु-विकिरणों से प्रभावित भू-भाग एक विध्वंस स्तूप बन जायेगा -

"अणु किरणों से होता विकीर्ण
भू-भाग-उधर विध्वंस स्तूप।"[३४]

आज संपूर्ण विश्व में दिन-प्रतिदिन किसी न किसी प्रकार का अणु-बम युद्ध हो रहा है। यदि तृतीय विश्व युद्ध हुआ तो रेडियो धर्मी प्रदूषण से पारिस्थितिकी पर जीव-जंतु बचने मुश्किल हो जायेंगे। पृथ्वी पर विनाश की लीला होगी। इसका संकेत 'कवींद्र रवींद्र के प्रति' नामक कविता में मिलता है। कवि कहते हैं कि न्यूक्लियर विस्फोटों से उत्पन्न रेडियो एक्टीव कण पारिस्थितिकी को भी दूषित करते हैं। आणविक अपशिष्टों को निपटान करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। ये रेडियो एक्टीव कण जहाँ-जहाँ पहुँचते हैं वहाँ के जीव-जंतुओं के महानाश के कारण बन जायेगा।

कवि की राय में वर्तमान सभ्यता के दारुण उपहार है न्यूक्लियर बम एवं अस्त्र-शस्त्र। इसमें महामारी के कीटाणु एवं महानाश के तत्व भी सम्मिलित हैं -

"महानाश के निर्मम तत्व हुए हैं बंदी,
शत प्रलयों का ध्वंस, कोटि कुलिशों का पावक
जिनमें पूँजीभूत कीटाणु महामारी के !!"[३५]

भौतिक-रासायनिक उपहार विद्युत कण मानव-जाति एवं धरा के लिए विध्वंसकारी बन जाते हैं। विज्ञान एवं टेक्नॉलजी प्राकृतिक संसाधनों को विध्वंस कर पारिस्थितिकी में असंतुलन पैदा कर देता है। 'फूलों का देश' में कवि ने इस प्रकार कहा है कि आज के वैज्ञानिक शक्ति लोक-विनाश एवं भू-श्मशान का साधक बन गया है। यह पारिस्थितिकी को विध्वंस कर उसके संतुलन एवं सौंदर्य को भी नष्ट कर रहे हैं। 'गीत हंस' में कवि बताते हैं कि भूघातक मानव के वैज्ञानिक अत्याचारों से भविष्य में चंद्र तक त्रस्त हो जायेगा। साथ ही सभी जीव-जंतु महाकाल के ग्रास हो जायेंगे। भविष्य में पारिस्थितिकी की दशा कैसी होगी ? इसका संकेत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"निश्चय घोर भयंकर दुःस्थिति आ सकती -
शुभ निशुंभुओं की रचना कर मनुज ब्रह्म तब
ध्वंस धरा पर दा सकता - स्वार्थों से प्रेरित !"[३६]

पंत की कविताएँ परिस्थिति का संदेश वाहक हैं। उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से विज्ञान एवं तकनीकी आविष्कारों से उत्पन्न पारिस्थितिक संघर्षों का बोध कराया है। औद्योगिक संकट, जनसंख्या वृद्धि एवं आणविक विस्फोटों से उत्पन्न पारिस्थितिक संघर्षों की सही अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में मिलती है। साथ ही कवि प्रकृति की ओर वापसी का नारा बुलंद करते हैं।

२.३.३.३. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

यांत्रिक जीवन बितानेवाले मानव को आज धरती के बारे में सोचने के लिए समय नहीं है। 'तुलसीदास' में प्रकृति तुलसी से कहते हैं - राम ने किस प्रकार

अहल्या का उद्धार किया है उसी प्रकार तुम हमारा उद्धार भी करो। नहीं हैं तो पृथ्वी पर अंधकार फैलाकर कंटक, पंकिल मात्र ही रह जायेंगे। साथ ही मानव एवं प्रकृति का रिश्ता भी टूट जायेगा। इसका प्रमुख कारण वैज्ञानिक एवं औद्योगिक परिवर्तन है। कवि बताते हैं कि मानव प्रकृति से निकट संबंध स्थापित करना है, नहीं हैं तो भविष्य में पारिस्थितिक असंतुलन की भयंकर परिणामों को सामना करना पड़ता है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"लो चढ़ा तार-लो चढ़ा तार,
पाषाण खण्ड से ये, करो हार,
दे स्पर्श अहल्योद्धार-सार उस जग का ;
अन्यथा यहाँ क्या ? अन्धकार,
बन्धुर पथ पंकिल सरि कगार,
झरने झाडी कंटक ; विहार पशु खग का !"[३७]

'कुत्ता भौंकने लगा' नामक कविता में निराला ने किसानों की वर्तमान स्थिति को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि ओलावृष्टि एवं पाला के कारण अरहर की खड़ी फसलें नष्ट हो चुकी है। तेज़ हवा बचे हुए फसलों में भी पानी फेर रही है। ओलवृष्टि से विनाशकारी परिणाम आज भी देखने को मिलता है। यह खेती विनाश किसान की आत्महत्या के कारण बन जाते हैं। वैश्विक स्तर पर मल्टी नैशनल कंपनियों ने पृथ्वी को रेगिस्तान बनाया है। इसका संकेत भी निराला के 'नये पत्ते' में देखने को मिलता है। विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से आज के मानव ने चंद्रमा को भी अपना अधीनस्थ बना लिया है। विकास की इस दौड़ में मानव ने पर्यावरण की आधार भूत तत्वों को भूल गया है। आज के जंगल में पेड़-पौधे, जीव-जंतु, कीट-पतंगे नहीं हैं वहाँ उनके स्थान पर कारखाने मात्र ही हैं।

'बादलराग-१' नामक कविता में कवि ने सारे विश्व को हलचल मचा देनेवाली बादल की घनघोर गर्जना एवं मूसलाधार वर्षा से उत्पन्न पारिस्थितिक बदलाव को प्रस्तुत किया है। कवि कहते हैं कि बादल की गर्जन एवं वर्षा से सारी पृथ्वी सिहर उठती है। उनकी राय में अटूट पर छूट-टूट पड़नेवाले उन्माद है बादल। सबको आतंकित करनेवाले ये प्रचण्ड बादल गर्जन पारिस्थितिक वैभव एवं सौंदर्य को नष्ट-

भ्रष्ट करते हैं। इससे सारे जीव-जंतु मृत्यु के कगार पर है। उनके गर्जन के डर से संपूर्ण पारिस्थितिकी त्रस्त हैं। इसका संकेत करते हुए कवि ने 'बादलराग-२' में इस प्रकार लिखा है -

"ऐ अटूट पर छूट टूट पड़नेवाले उन्माद !
विश्व-विभव को लूट-लूट लड़नेवाले अपवाद !
श्री बिखेर, मुख फेर कली के निष्ठूर पीड़न !
छिन्न भिन्न कर पत्र-पुष्प-पादप,वन-उपवन,
वज्र घोष से ऐ प्रचण्ड !
आतंक जमानेवाले !"[३८]

बादलों का गर्जन एवं वर्षा परिवर्तन के संकेत हैं। कृषक बादल को आशा के साथ बुलाते हैं। कवि ने यहाँ बादल एवं मानव के अन्योन्याश्रित संबंधों को व्यक्त किया है। बादलों का गर्जन पहाडों को भी क्षत-विक्षत कर डालते हैं। कवि ने 'वन-बेला' नामक कविता में समस्त विश्व को भस्मीभूत करनेवाले प्रलय एवं लू की विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। सृष्टि का विकास प्राकृतिक संतुलन का परिणाम है। आज के मानवीय क्रियाकलापों ने इस संतुलन को बिगाड़ दिया है। इस असंतुलन का परिणाम है दिन-प्रतिदिन हो रहे प्राकृतिक दुर्घटनाएँ। आज के मानव ने राक्षस के समान धरती में दिन-प्रतिदिन अत्याचार कर रहे हैं। युद्ध से भी धरती त्रस्त है। निराला के शब्दों में -

"लौटे युगदल ! राक्षस-पदतल पृथ्वी टलमल।"[३९]

कवि ने पौराणिक घटनाओं के माध्यम से पर्यावरण को संरक्षित करने का आह्वान किया है।

२.३.३.४. महादेवी वर्मा

आजकल एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहे हैं तो दूसरी ओर पर्यावरण का प्रदूषण अपने चरम बिंदु पर पहुँच चुका है। इस प्रदूषण के अंतर्गत समस्त पर्यावरणीय तत्व फँस जायेंगे। प्रदूषित वातावरण में मानव सहित विभिन्न जीव-जंतुओं का जीवित रहना आज असंभव सा हो गया है। आज के मानव ने अपने निजी

स्वार्थ के लिए कई तरह से पर्यावरणीय तत्वों को प्रदूषित कर रहे हैं। कुछ साल जीने के लिए मानव पर्यावरण से निरंतर संघर्ष कर रहे हैं। महादेवी ने अपने काव्य में मानव एवं पर्यावरण के घनिष्ठ संबंधों का प्रतिपादन किया है। उनके लिए प्रकृति का एक एक अंश एक अलौकिक व्यक्तित्व है। उनकी कविताओं में प्रकृति जीवन की सहचरी बन जाती है। पहाड, नदी, समुद्र, पेड-पौधे, मानव, जीव-जंतु, वायु, मिट्टी आदि सभी तत्व हमारे इस पारिस्थितिकी में सम्मिलित है। इन सभी तत्वों को अपना अलग-अलग महत्व है। ये जीव-जगत् एवं वनस्पति जगत् प्रकृति का वरदान हैं। झड़ता हुआ सुमन, सूखा हुआ तृण, विकल कोकिल और प्यासा चातक आदि महादेवी के काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य हैं। कवयित्री के शब्दों में-

"वह बताया झर सुमन ने
वह सुनाया मूक तृण ने
चिर पिपासित चातकी ने
वह कह वे सुधु पिकी ने
सत्य जो दिन कह न पाया था अमिट संदेश में।"[४०]

पर्यावरण से नष्ट होनेवाले साधन मानवता के अस्तित्व विनाश का संदेश देकर चले जाते हैं। मानवता के अस्तित्व के लिए इन सभी तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण है। पुष्प, तृण एवं चातकी ने प्रकृति में प्रेम का संदेश प्रसारित किया है। आज के प्रदूषण का दुष्प्रभाव इन सभी तत्वों में देख सकते हैं। दिन-प्रतिदिन नष्ट हो रहे प्राकृतिक संसाधनों का पुनःनिर्माण असंभव है। इसलिए पारिस्थितिकी को संतुलित बनाये रखने में इन सभी तत्वों का संरक्षण अनिवार्य है। आज के मानवीय व्यापार ने प्राकृतिक सौंदर्य को छिन्न-भिन्न कर दिया है।

प्राचीन काल में जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक बदलाव मात्र है, लेकिन आज के जलवायु परिवर्तन विकास के नाम पर होनेवाले मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न है। इसका प्रमुख कारण ग्रीन हाउस प्रभाव है। पृथ्वी के तापमान में होनेवाले वृद्धि संपूर्ण पारिस्थितिकी को भी मृत्यु के कगार पर खड़ा कर दिया है। आज के जलवायु परिवर्तन का दुष्प्रभाव सामाजिक, आर्थिक क्षेत्रों में देख सकते हैं। आज के जगत् में भौरों का आह्वान एवं फूलों का राज नहीं है। हमारे ऋतु राज कहाँ गया हैं?

इसके बारे में किसी को मालूम नहीं। जलवायु परिवर्तन द्वारा घटित झड़ते हुए फूल, वसंत का ह्रास आदि के बारे में महादेवी ने 'यामा' में इस प्रकार लिखा है -

> "न रहता भौरों का आह्वान
> नहीं रहता फूलों का राज
> कोकिला होती अन्तर्धान
> चला जाता प्यारा ऋतुराज।"[४१]

ऋतुपरिवर्तन जैसे पारिस्थितिक संकट से आज के लोगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कई साल के पहले की ये पंक्तियाँ आज के जलवायु परिवर्तन के लिए बहुत सार्थक हैं। रोता हुआ मेघ, सिसकियाँ भरता हुआ पवन, पिघलते हिम आदि भी उनके काव्य के प्रमुख विषय बन जाते हैं। आज ये सभी तत्व विषैली प्रदूषण से रो रहे हैं। कवयित्री बताती हैं कि प्रकृतिदत्त अमूल्य उपहार है - हिम नदियाँ। उस समय हिम पिघलकर सरिताओं के कोष को भरा रही है। आज जलवायु परिवर्तन से ग्लेशियर पिघलकर नष्ट हो सकते हैं। इसका संकेत भी उनकी कविताओं में मिलता है। कहा जाता है कि प्रमुख हिमनद २१ प्रतिशत से भी ज़्यादा सिकुड़ गए हैं।

कवयित्री ने कहा है कि लू से नभ में धूल भरा दिया है। लू जैसे पारिस्थितिक प्रकोप से विश्व की संपूर्ण दिशाएँ झुलसकर निष्प्रभ हो गयी हैं। उस समय की बादल की गड़गड़ाहट असहनीय है। इससे जन-धन की क्षति होती है। यह पर्यावरणीय चक्र में असंतुलन की स्थिति को पैदा करती है। कवयित्री ने अपनी कविताओं के माध्यम से इसका संकेत दिया है। आज से सौ साल पहले हमारा भारत भूमि सुंदर एवं सुजला थी। उस समय के चारों ओर के पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, जंगल, जीव-जंतु, नदी, पहाड जैसे पर्यावरणीय तत्व पर्यावरण को संतुलित बनाये रखते हैं। इन सभी तत्वों में परस्पर सामंजस्य एवं तादात्म्य की भावना निहित है। औद्योगिक विकास एवं प्रगति के नाम पर वर्तमान युग में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हो रहा है। यह चारों ओर प्रदूषण का कारण बन जाते हैं। आज न स्वच्छ वायु है न स्वच्छ पानी है। कवयित्री पर्यावरण के सौंदर्य के प्रति सचेत है। उनके सौंदर्य में क्षार होना कवयित्री के लिए असहनीय है। उषा की मुस्कुराहट से उनकी शोभा बढ़ जायेंगी।

सभी प्राकृतिक क्रियाकलाप जीव-जगत् की विकास के लिए आवश्यक है। किसी एक तत्व में आनेवाले असंतुलन पर्यावरणीय तंत्र को भी प्रभावित करते हैं। इसलिए कवयित्री प्रकृति की चिंता करती हैं। उनके शब्दों में

"मत अरुण घूँघट खोल री !

* * * *

तरल सोने से घुलीं ये, / पद्मरागों से सजीं ये,

उलझ अलकें जायँगी, / मत अनिल पथ में डोल री !"[४२]

२.३.४. हालावाद

वैयक्तिक दुःख के साथ समय के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक थपेडों को प्रस्तुत करना हालावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्ति है। इसका प्रमुख प्रवर्तक हैं बच्चन। मानव के सुख-दुःख को प्रस्तुत करनेवाले उनकी कविताओं में प्रकृति सुख-दुःख को प्रस्तुत करने का साधन है। फिर भी प्रकृति की छोटी-छोटी घटनाएँ भी उनकी कविताओं में देख सकते हैं। ऋतु, पुष्प, वृक्ष, पशु-पक्षी, जंगल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व कवि के भावों के सहचरी हैं। आज के मानव ने पृथ्वी को केवल दुःख मात्र ही सम्मानित किया है। इस दूषित मानव के बिना पृथ्वी किस प्रकार होगी। इसका संकेत बच्चन की 'पृथ्वी रोदन' नामक कविता में द्रष्टव्य है -

"सूर्य निकलता, पृथ्वी हंसती
चाँद निकलता, वह मुस्काती
चिड़ियाँ गातीं साँझ-सकारे
यह पृथ्वी कितना सुख पाती
अगर न इसके वक्ष स्थल पर यह दूषित मानवता होती।"[४३]

कवि ने इन पंक्तियों में पृथ्वी के प्रति अपने अटूट प्यार को व्यक्त किया है। कवि को कविता लिखने की प्रेरणा देनेवाले प्राकृतिक उपादान है बादल। उनकी शुद्ध प्राकृतिक कविता है 'वर्षा समीर'। इसमें कवि ने प्रकृति के साथ गहन तादात्म्य संबंध स्थापित करने का प्रयास किया गया है। बंगाल में घटित अकाल मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न है। प्राकृतिक क्रियाकलापों से नहीं। यह अकाल ने बंगाल की

शस्य श्यामल धरती को श्मशान के रूप में बदल दिया है। इससे बंग-भूमि दीन-हीन, चिर-मलिन हो गयी है। इसका संकेत उनके 'बंगाल के काल' में द्रष्टव्य है। कवि बताते हैं कि हमारे धरती फूल और फुलवारियों से अनुग्रहीत है। इसके बिना धरती श्मशान है। हालावादी कवि पर्यावरणीय पर्यवेक्षक नहीं हैं, फिर भी उनके काव्य में प्रकृति के प्रति सहज भाव दिखाया देता है।

२.३.५. राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्यधारा

इस धारा की कविताओं में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना, प्रगतिशीलता और प्रकृति प्रेम आदि अनेक तत्व विद्यमान हैं। वैज्ञानिक-विकास एवं दिन-प्रतिदिन बदलते हुए सामाजिक परिवेश ने पर्यावरणीय तंत्र को भी बदल दिया है। विज्ञान एक ओर वरदान है दूसरी ओर अभिशाप है। इसके माध्यम से मानव ने प्रकृति के सभी क्षेत्रों में विजय प्राप्त कर लिया है। विज्ञान के सामने प्रकृति भी झुक जाते हैं।

२.३.५.१. रामधारी सिंह दिनकर

कवि दिनकर के लिए प्रकृति एक खुली किताब है, इससे ब्रह्म ज्ञान भी सीख सकते हैं। प्रकृति के भीतर विभाव का कोष भी भरा हुआ है। कवि कहते हैं कि-

"प्रकृति पर सर्वत्र है विजयी पुरुष आसीन।"[४४]

दिनकर की 'ओ नदी' नामक कविता में नदी काल के अजस्र प्रवाह का प्रतीक है। लेकिन आज के सामाजिक परिवेश बदलने के साथ-साथ नदियाँ भी विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से त्रस्त हो गयी है। 'वसंत के नाम' पर नामक कविता में वसंत की बहार को देखकर कवि ने प्रकृति पूजन के लिए अपनी निज कविता के दीप जला दिया है। कवि ने अपनी कविताओं में भी प्रकृति को पूज्य भाव की दृष्टि से देखा है। आज का मानव पर्यावरणीय संबंधों से दूर चला गया है। कवि दिनकर ने अपनी कविताओं के माध्यम से इन संबंधों को निकट लाने का प्रयास किया है। कवि कहते हैं कि एक देश से दूसरे देश में जानेवाले पक्षी और बादल भगवान के डाकिये हैं। पर्यावरण के पेड़, पौधे, पानी और पहाड जैसे सभी तत्व एक दूसरे पर भी निर्भर हैं।

यह समझना आज के मानव को मुश्किल है, क्योंकि विज्ञान एवं अत्याधुनिक टेक्नॉलजी के माध्यम से आज के मानव ने प्रकृति को अपना दासी बना लिया है। पर्यावरणीय तत्वों के अन्योन्याश्रित संबंधों को कवि ने इस प्रकार व्यक्त किया है -

“पक्षी और बादल / ये भगवान के डाकिये हैं
जो एक महादेश से / दूसरे महादेश को जाते हैं
हम तो समझ नहीं पाते हैं / मगर उनकी लायी चिट्ठियाँ
पेड़, पौधे, पानी और पहाड / बाँचते हैं।”[४५]

२.३.५.२. माखनलाल चतुर्वेदी

माखनलाल चतुर्वेदी की कविताओं में राष्ट्रीय भाव के साथ-साथ प्रकृति चेतना भी देख सकते हैं। उनकी ‘बीजुरी काजल आँज रही’ नामक काव्य संग्रह की कविताएँ पर्यावरणीय चेतना से ओतप्रोत हैं। इसमें कवि भारत की शस्यश्यामला धरती की पूजा की है। कवि ने ‘गंगा की विदा !’ नामक कविता में गंगा की, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक महत्ता को प्रस्तुत कर उसे संरक्षित करने का आह्वान दिया है। कवि कहते हैं कि यह गंगा जन-जीवन का पानी है। इसके बिना भारतीय संस्कृति का अस्तित्व कल्पनातीत है। कवि के लिए प्रभात वसुमति का बेटा है और शैल भूमि की उँगली का मनहरण इशारा है। तरु, लता, फल-फूल आदि मिट्टी से ही जन्म लेकर अंत में मिट्टी में ही मिट जाते हैं। कवि के शब्दों में -

“फल, फूल, पत्र सब धीरे से
उठते हैं मिट-मिट जाते हैं।”[४६]

राष्ट्रीय सांस्कृतिक धारा की कवियों ने राष्ट्र की अन्य अनेक समस्याओं को प्रस्तुत करने के साथ-साथ प्रकृति के विविध विषयों पर भी दृष्टि डाली है।

२.३.६. प्रगतिवाद

विज्ञान ने पारिस्थितिकी के अर्थ एवं स्वरूप को बदलकर उसके रहस्यों को समझने की एक नयी दृष्टि प्रदान की है। सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में

प्रगतिवादी कवि ने पारिस्थितिक विषय को भी एक औज़ार की तरह इस्तेमाल किया है। मानव एवं पर्यावरण का संबंध आज संघर्षमय है। विकास से उत्पन्न इस संकट की अभिव्यक्ति कुछ रचनाओं में मिलता है।

२.३.६.१. केदारनाथ अग्रवाल

धरती और किसानों के कवि हैं केदारनाथ अग्रवाल। खिले फूलों को गोद लिए माता है कवि की पृथ्वी। पेड़-पौधे, फल-फूल, जीव-जंतु, पशु-पक्षी एवं नदी-पर्वत विभिन्न खनिज पदार्थ आदि पर्यावरण के ही अंग है। साथ ही इसमें पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि और वायु आदि पंच महातत्व भी सम्मिलित हैं। इन सभी तत्वों के प्रति चिंतित कवि है केदारनाथ अग्रवाल। कवि कहते हैं कि ये सभी तत्व पृथ्वी के वंशज हैं। एक दूसरे के बिना उनका अस्तित्व संभव नहीं है। मानव का मार्गदर्शक है प्रकृति। कवि के शब्दों में -

"पेड़ नहीं,
पृथ्वी के वंशज है
फूल लिये, फल लिये -
मानव के अग्रज है।"[४७]

आज के मानव प्रकृति पर अपनी विजय प्राप्त करने के लिए दौड़ रहे हैं, तब कवि अपना संबंध प्रकृति से जोड़ना चाहते हैं। पंचभूत तत्वों में प्रमुख है अग्नि। वेदों एवं पुराणों में अग्नि देव है। ऋग्वेद में कहते हैं कि सभी प्रकार के दुर्गम एवं कष्टकारी दुःखों को दूर कर विश्व को स्वच्छ एवं मंगलमय बनाने में अग्निदेव की कृपा आवश्यक है। कवि इस अग्नि का संबंध सूर्य से जोड़ते हैं। प्रकाश, सूर्य एवं दिन के प्रति लगाव उनकी कविताओं में देख सकते हैं। कवि बताते हैं कि सूर्य के अभाव में धरती उदास हो जाती है। सृष्टि का विकास एवं संचालन सूर्य पर भी निर्भर है। आज आसमान में सूरज के बिना गुम्बद का जाल जकड़ा है। यह देखकर उनके पाँवों के नीचे की धरती भी उदास हो गयी है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्रदूषण का प्रभाव आज अंतरिक्ष में भी देख सकते हैं। कवि के लिए बादल भूमि का वरदान है। बादल अपने आँसुओं से संपूर्ण धरती को सींच रहा है। कहा जाता है कि धरती का

प्राण है बादल। आज बादल का आँसू वर्षा भी प्रदूषित हुई है। विभिन्न रासायनिक पदार्थों के योग से प्राकृतिक वर्षा अम्ल वर्षा बन गयी है। बादल के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हुए कवि केदारनाथ अग्रवाल ने इस प्रकार लिखा है-

"भूमि के वरदान बादल
सींचने को - नये, उपजे धान बादल,
जल न बरसे - / आज बरसे प्रान बादल !"[४८]

पर्यावरण की अमूल्य धरोहर है - मिट्टी। कवि कहते हैं कि किसान लोग मिट्टी में सोने का सपना देख रहे हैं। कवि ने अपनी कविताओं में मिट्टी के वैभव एवं मूल्य को प्रस्तुत कर उसे प्रदूषण से मुक्त करने का आह्वान दिया है। सोने की फसल उगानेवाले मिट्टी में भी देश की अर्थ व्यवस्था निहित है। औद्योगिक एवं रेडियोधर्मी प्रदूषण से उत्पन्न विनाशकारी प्रभाव के प्रति जनता आज सचेत होना है। क्योंकि अणुबम गिरने से सूरज मरकर समस्त पारिस्थितिकी में अंधकार का मृत सन्नाटा छा जाता है। रेडियोधर्मी अपशिष्टों का निपटान असंभव है। पीढी-दर-पीढ़ी इसके दुष्प्रभाव से त्रस्त होगा। इसका संकेत भी उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है।

आज के साम्राज्यवादी एवं नव-उपनिवेशवादी शक्तियाँ पारिस्थितिकी में अपना वर्चस्व स्थापित कर दिन-प्रतिदिन उसका सर्वनाश कर रही है। पारिस्थितिकी के नैसर्गिक व्यापार में दखलंदाजी करने में भी उनकी भूमिका महत्वपूर्ण है। 'आग का आईना' नामक कविता में कवि बताते हैं कि काल के मौन पंखों की बर्बर मार ने सागर, पृथ्वी, आकाश एवं नदी को भी बदल दिया है। साम्राज्यवादी शक्तियों ने सागर को उद्विग्न, आकाश को धुआँ-धुंध एवं पृथ्वी को अचेत बनाती है। ये सब उनके लिए आर्थिक लाभ का साधन मात्र है। सागर, पृथ्वी, आकाश की रक्षा के लिए साम्राज्यवादी शक्तियों को रोकना ज़रूरी है। इन शक्तियों ने पारिस्थितिक तंत्र के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर खड़ा कर दिया है। इस संकटग्रस्त स्थिति में भी कवि केदार पर्यावरण से तादात्म्य स्थापित करना चाहते हैं -

"जहाँ से चली मैं, जहाँ को गयी मैं
शहर, गाँव, बस्ती / नदी, रेत, निर्जन, हरे खेत, पोखर
झुलाती चली मैं झुमाती चली मैं / हवा हूँ हवा, मैं बसंती हवा हूँ।"[४९]

२.३.६.२. शिवमंगल सिंह सुमन

विकसित और विकासशील राष्ट्र आज के वैश्विक विकास की दौड़ में राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर त्वरित प्रगति की लालसा रखते हैं। आर्थिक विकास के लिए आज अनेक राष्ट्र विज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण कर रहे हैं। इससे उत्पन्न पारिस्थितिक संघर्ष की निर्मम आलोचना है शिवमंगल सिंह सुमन की कविता। १९४६ में हिरोशिमा और नागसाकी में हुए बम विस्फोट ने दोनों नगर को तहस-नहस कर दिया है। इसके दुष्प्रभाव वहाँ के नगरों में आज भी देखने को मिलता है। कवि शिवमंगल सिंह सुमन बताते हैं कि ज्ञान और विज्ञान के माध्यम से आज के मानव स्वार्थी हो गया है। इन भस्मासुरों ने प्रगति के नाम पर हिरोशिमा और नागसाकी को जर्जर एवं शापित बना दिया है। यह प्रदूषण प्रकृतिदत्त नहीं है, मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न है। रेडियो-सक्रिय पदार्थ वनस्पति एवं जीव-जगत् के लिए अत्यंत हानिकारक है। कवि बताते हैं कि बम-विस्फोट की रेडियो-सक्रिय कीटाणुओं ने संपूर्ण विश्व की पारिस्थितिकी को महाविनाश की कगार पर खड़ा कर दिया है। रेडियो सक्रिय पदार्थों की घेरा सूर्य, शशि, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह सभी को ग्रसनेवाला है। अणु-बम विस्फोट से प्रभावित स्थानों में कीटाणु की फसल मात्र ही उगाते हैं। कवि के शब्दों में -

> “सूर्य, शशि, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह सभी को
> ग्रस रहा विकराल तम का घोर घेरा
> उग रही कीटाणु की फसलें
> प्रलय-अणु बम बरसता।”[५०]

हमारे देश की मिट्टी सोने एवं चंदन के समान है। दिन-प्रतिदिन करोडों लोगों को भरण-पोषण करनेवाली अमूल्य धरोहर है मिट्टी। औद्योगिक अपशिष्ट, उर्वरक, कीटनाशक आदि के प्रयोग से मिट्टी दिन-प्रतिदिन प्रदूषित हो रही है। ‘मिट्टी की महिमा’ नामक कविता में कवि ने मिट्टी की वैभव को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि भूकम्प आये तो मिट्टी ढह जाती है, बूडा आये तो मिट्टी बह जाती है। बस्ती एवं ताशों के महलों में भी मिट्टी का सान्निध्य है। मिट्टी मिट्टी में ही मिटती है। आज मानवीय क्रियाकलाप के साथ-साथ प्राकृतिक जन्य क्रियाकलाप

भी मिट्टी को प्रदूषित करती है। अमृत का संदेश देनेवाली मिट्टी की संरक्षण के प्रति सचेत है कवि। ओले एवं पाला हरी-भरी खेती को भी विनाश करते हैं। इसका संकेत उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है। तूफान, भूकम्प, ज्वालामुखी एवं सुनामी जैसे प्राकृतिक एवं मानव निर्मित आपदाओं से पारिस्थितिकी में प्रलयंकारी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जिसके फलस्वरूप विश्व स्तर पर प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों की अपार क्षति होती है। इन सब की अभिव्यक्ति 'जल रहे हैं दीप जलती है जवानी' नामक कविता में मिलता है। औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रांति ने भारतीय नदियों को भी प्रदूषित कर दिया है। उनके लिए सभी जलस्रोत अपशिष्ट पदार्थ डालने का वेस्ट-बॉक्स बन गयी है। स्वच्छ पानी को बहनेवाले नदियों ने आज विष उगला है। सिन्धु नदी की वर्तमान स्थिति को व्यक्त करते हुए कवि सुमन ने इस प्रकार लिखा है -

"आज सिन्धु ने विष उगला है
लहरों का यौवन मचला है।"[५१]

'आज सजनि ! सावन के बादल बरस पडे' नामक कविता में कवि ने अवर्षा की समस्या को प्रस्तुत किया है। बिना वर्षा से पेड़-पौधे सभी झुलस गया है, पशु-पक्षी आदि भी इससे त्रस्त है। निराला के समान कवि भी बार-बार बरसने के लिए बादल को पुकारते हैं। कवि बताते हैं कि वर्षा आज तपती धरती एवं सूखे खेत के लिए चुनौती देती है। पारिस्थितिकी को संकटग्रस्त करनेवाले प्लास्टिक भी हमारे जीवन का अंग बन गया है। आज चारों तरफ प्लास्टिक ही प्लास्टिक है। इसके बिना जीना आज के मानव को मुश्किल हो गया है। लोग अपनी सुविधा के लिए प्लास्टिक थैलियाँ, गिलास, चम्मचें, प्यालियाँ आदि का उपयोग कर रहे हैं। ये प्लास्टिक अपशिष्ट पर्यावरण पर विषैला प्रभाव डालते हैं। इसको निपटाना बहुत कठिन कार्य है। प्लास्टिक किस तरह वर्तमान जीवन को प्रभावित किया है, इसके बारे में कवि अपनी कविता में बताते हैं। पानी की कमी के कारण आज बागों में भी प्लास्टिक के फूल सजाकर रखते हैं। आज के आदमी का शौक है प्लास्टिक के फूलों से अलंकृत बाग। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"प्लास्टिक के फूलों से
बाग को सजाने का
शौक नया चर्राया

पानी मर गया है शायद, मालियों की पीढियों का
कोई तैयार नहीं
खाद बन जाने को।"[५२]

प्लास्टिक सबको आकर्षित करने के साथ-साथ उसके अपशिष्टों में निहित विघटनशील यानी यौगिक पदार्थ पारिस्थितिक तंत्र को क्षण-प्रतिक्षण बिगाड़ते हैं। कवि बताते हैं कि पूँजीवादी शक्तियों ने धरा की नंदिनी को अपनी इच्छानुसार बंदी बनाया है। आज सभी प्राकृतिक संसाधन उन शक्तियों के अधीन में है। इससे प्रभावित मानव ने लाभ कमाने के लिए उन संसाधनों को दिन-प्रतिदिन शोषण कर रहे हैं। लाभेच्छु शक्तियों ने सबको नष्ट कर धरती को बांझ बना दिया है। आज के विश्व की महाशक्तियों के सामने पारिस्थितिकी भी नतमस्तक है। कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से पारिस्थितिकी के प्रति असीम श्रद्धा एवं आस्था प्रकट की है। कवि के शब्दों में -

"प्रकृति की शक्तियाँ जिसकी सलामी नित बजाती थीं
हज़ारों तारिकाएँ दीपमालाएँ सजाती थीं।
करोडों शव के अंबारों पे सिंहासन सजाया था
धरा की नंदिनी को बंदिनी बनाया था।"[५३]

२.३.६.३. रामविलास शर्मा

आज के प्राकृतिक क्रियाकलाप एवं मानवीय क्रियाकलाप नदी प्रदूषण का कारण बन जाते हैं। औद्योगिक, रासायनिक एवं मानव निर्मित अपशिष्ट नदियों में विसर्जित होने से विश्व भर की सभी नदियाँ दिन-प्रतिदिन तेज़ी से प्रदूषित होती जा रही है। गंगा, यमुना जैसे नदियों का जल विषैला एवं रसायन युक्त होने के कारण आज जन-सामान्य के लिए पेय नहीं है। कवि की राय में आज की साम्राज्यवादी एवं नव उपनिवेशवादी शक्तियाँ सत्युग, त्रेता और द्वापर युग के कृमि-कीट के समान हैं। इस कृमि-कीट ने विश्व की संपूर्ण जल-राशि को विषाक्त कर दिया है। रामविलास शर्मा जैसे प्रगतिवादी कवि के लिए यह असहनीय है। जलस्रोतों के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हुए कवि ने 'कलियुग' नामक कविता में इस प्रकार लिखा है -

"सत्युग, त्रेता और द्वापर के कृमि-कीट
विकसित हुए जब विषैले युग में,
महामान्य पूर्वजों, महर्षियों सम्राटों की,
वासना की बूँदें वे,
बढ़कर बनी आज गंभीर जल-राशि,-
विषाक्त कर्दममय जल-राशि !"[५४]

'विश्व शांति' नामक कविता में कवि ने वायुयान से उत्पन्न संकट को प्रस्तुत करते हैं। कवि बताते हैं कि पुष्पक विमान की पुष्प वृष्टि संपूर्ण नर-सृष्टि को नष्ट करते हैं। वायुयान मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए ध्वंसकारी बन जाती है। मानवीय क्रियाकलापों एवं पारिस्थितिक असंतुलन से उत्पन्न प्राकृतिक आपदा है तूफान। इससे सभी पर्यावरणीय तत्व अस्तव्यस्त होकर अपार जन-धन की क्षति होती है। 'तूफान के समय' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है। कवि बताते हैं कि तूफान क्षितिज से उठकर विषैले बादलों में सनसनाकर आते हैं। पेड़, चिड़ियाँ आदि सभी चेतन वस्तुएँ इस संकट से त्रस्त है। यह तूफान प्रकृति की विकृति है। आज की प्राकृतिक आपदाओं से मानव सहित सभी जीव-जंतु त्रस्त है। कवि बताते हैं कि कुआँ, बावडी जैसे सभी जलस्रोत सूख गया है। कमल के स्थान पर आज सूखे मृणाल को देख सकते हैं। यह क्षुब्ध बवंडर नभ को चूम कर रहे हैं। उनकी ज्वाला में सब जल गया है। मृगों की स्थिति भी दयनीय है। कवि के शब्दों में -

"मृग ढूँढ रहा है धरती पर कुछ सूखे तृण।"[५५]

पारिस्थितिक प्रकोपों से मृग भी भयभीत है। खाने के लिए धरती पर तृण भी नहीं है, वह भी खोजना पडेगा।

आज का मानव दिन-प्रतिदिन पर्यावरणीय संबंधों से दूर होता जा रहा है। इसके प्रति रामविलास शर्मा की दृष्टि मानव सापेक्ष है। औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण के फलस्वरूप मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों में आए बदलाव को कवि ने 'फुर्सत नहीं है' नामक कविता में प्रस्तुत किया है। प्राकृतिक सौंदर्य वर्णन के साथ-

साथ लू, बवंडर, भूकम्प आदि प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत भी उनकी कविताओं में मिलता है।

२.३.६.४. नागार्जुन

प्रगतिवादी कवि नागार्जुन के लिए धरती माता है। कवि ने अपनी कविताओं में उसके महत्व को प्रतिपादित करते हुए धरती माता के सामने नतमस्तक करता है। पर्यावरण से दूर होते इस युग में धरती को माता मानकर उसके सामने नत मस्तक करना वर्तमान एवं भविष्य में बहुत प्रासंगिक है। एक वैज्ञानिक की तरह कवि नागार्जुन पारिस्थितिकी की स्वरूप की व्याख्या करते हैं। कवि बताते हैं कि इस पारिस्थितिकी के अंतर्गत नाना प्रकार के जीव-जंतु, तृण-तरु, चंद्र, सूर्य आदि ग्रह गण भी आते हैं। इन सभी जैविक एवं अजैविक तत्व अपनी क्रियाकलापों से पारिस्थितिकी को संतुलित बनाये रखते हैं। पारिस्थितिकी का विवेचन करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

> "सब है इस पर ;
> जीव-जंतु नाना प्रकार के
> तृण-तरु, लता-गुल्म भी बहुविधि
> चंद्र सूर्य हैं
> ग्रहगण भी हैं
> शत-सहस्त्र संख्या में बिखरे तारे भी हैं।"[५६]

कवि ने पर्यावरण के सभी जैविक एवं अजैविक तत्वों को समान रूप से देखा है। मानव के अलावा सभी जीव-जंतु एवं वनस्पतियों को भी पृथ्वी पर अपना अधिकार है। इसका संकेत उनकी कविताओं में मिलता है। पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में जंगलों की भूमिका महत्वपूर्ण है। आज के मल्टी नैशनल कंपनियाँ औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण के नाम पर दिन-प्रतिदिन बहुत सारे जंगलों को साफ कर रही हैं। यह जंगल विनाश पारिस्थितिक तंत्र को भी बिगाड़ते हैं। कवि बताते हैं कि जंगल हमारे बाप और पहाड़ चाचा है। वास्तव में हज़ारों जीव-जंतु एवं वनस्पतियों के लिए जंगल बाप की तरह है। जीव-जंतुएँ लुप्त होने का मानव जनित कारण है -

जंगल विनाश। साम्राज्यवादी एवं नव उपनिवेशवादी शक्तियों ने जीव-जंतु एवं वनस्पतियों के प्राकृतिक आवास जंगल को कारखाने के नाम पर हमसे छीन लिया है। 'दरख्तों की सघन बगीची में' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है -

"कारखाने के नाम पर
पिछले दस-पंद्रह साल के अंदर
हमारे सारे जंगल
छीन लिए हैं उन लोगों ने।"[५७]

आर्थिक लाभ के लिए प्राकृतिक संसाधनों को दोहन करनेवाली उन शक्तियों से कवि पूछते हैं कि जंगली सुअर एवं फसल को तहस-नहस करने के बाद आप को कैसा लगा ? औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रांति से प्रभावित लोग आणविक बम एवं अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण कर पारिस्थितिकी को पराजित करने में आतुर है। अमरीका जैसे साम्राज्यवादी राष्ट्र हाइड्रोजन बम एवं परमाणु परीक्षण के लिए विकासशील देशों के पारिस्थितिकी का चयन किया जाता है। इससे उत्पन्न रेडियो-एक्टीव पदार्थ वहाँ की वनस्पति एवं जीव-जंतु पर हानिकारक प्रभाव डालते हैं। पारिस्थितिकी को संकटग्रस्त करनेवाले न्यूट्रन बम के फल आज बगिया में लटके हैं। कवि बताते हैं कि मसानी माता का बारूदी आँचल हमें नहीं चाहिए। इस न्यूट्रन बमों ने धरती को भी बांझ बनाती है। इस प्रकार की धरती के बारे में एक संवेदनशील कवि को सोचना मुश्किल है। 'हम विभोर थे आगवानी' में कवि नागार्जुन इस प्रकार कहते हैं -

"हमें नहीं चाहिए
मसानी माता का बारूदी आँचल
जाओ, भस्मासुरी नृत्य का
कहीं ओर ही करो रिहर्सल।"[५८]

कवि इन पंक्तियों के माध्यम से पारिस्थितिकी के लिए घातक नाभिकीय एवं अनाभिकीय हथियारों के परीक्षणों को रोकने का आह्वान करते हैं। कवि को मालूम है कि इन परीक्षणों से हरे-भरे पर्यावरण रेगिस्तान बन जायेगा। कवि बताते हैं कि इन हथियारों के सौदगार भूमण्डल एवं वायु मण्डल को भी प्रदूषित करते हैं।

‘हमारे दिल में’ नामक कविता में इसका संकेत दिया है। उपनिवेशवादी संस्कृति से प्रभावित अमरीका जैसे साम्राज्यवादी राष्ट्र देश-विदेश के प्राकृतिक संसाधनों में भी अपना आधिपत्य स्थापित करने में तत्पर है। जिसके परिणाम स्वरूप उत्पन्न विनाश को भी कवि ध्यान रखते हैं। ‘बादल को घिरते देखा है’ नामक कविता में कवि ने हिमालय एवं मानसरोवर की प्राकृतिक वैभव को प्रस्तुत किया है। पर्यावरण को नष्ट करनेवाले वैज्ञानिक संसाधनों को कवि विरोध करते हैं। प्राकृतिक संसाधनों से संपन्न धरती कवि को प्रिय है। इसलिए कवि ने इन सभी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की है।

औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण ने मिट्टी, जल, वायु जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को प्रदूषित कर दिया है। आज के मल्टी नैशनल कंपनियाँ औद्योगिक एवं रासायनिक अपशिष्टों को गंगा-यमुना जैसे नदियों में बहाकर दिन-प्रतिदिन नदी जल को भी प्रदूषित कर रही है। वे लाखों टन अपशिष्ट दिन-प्रतिदिन गंगा-यमुना नदी में डालती हैं। इसमें निहित रेडियो सक्रिय पदार्थ जलीय वातावरण में रहनेवाले जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों को विलुप्ति के कगार पर खड़ा कर दिया है। कवि बताते हैं कि आज के मल्टी नैशनल कंपनियों ने गंगा-यमुना के जल को विषाक्त करने के साथ-साथ ज़हरीली गैसों से वायु मण्डल को भी प्रदूषित कर दिया है। ‘कैसा लगेगा तुम्हें’ नामक कविता में कवि आज के मल्टी नैशनल कंपनियों से पूछते हैं -

“कैसा लगेगा तुम्हें ?
कुटिलमति मायावी दस्यु यदि
हलाहल घोल जाय गंगा यमुना के जल में
ज़हरीली गैस से कर दे यदि दूषित दक्षिण समीर को
कैसा लगेगा तुम्हें ?”[५९]

कवि बताते हैं कि साम्राज्यवादी एवं नव उपनिवेशवादी शक्तियों की लीलाओं से गंगा जल प्रदूषित होकर पीला हो गयी है। आज के इन शक्तियों को गंगा के सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व मालूम नहीं है। समकालीन कवियों की तरह नागार्जुन भी गंगा संरक्षण के प्रति सचेत हैं। प्राकृतिक एवं मानव जनित कारणों से आज गंगा में हर साल बाढ़ देखने को मिलता है। इसका संकेत भी उनकी

कविताओं में द्रष्टव्य है। कवि ने अपनी कविताओं में पर्यावरणीय वैभव एवं उसके संघर्ष को भी प्रस्तुत किया है। कवि ने पर्यावरण एवं मानव को एक साथ जोड़कर देखने की कोशिश की है।

२.३.६.५. त्रिलोचन

मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों में आये भिन्नता त्रिलोचन की कविताओं में देख सकते हैं। आज के मानव का कर्तव्य है पर्यावरण की रक्षा। कवि बताते हैं कि वनस्पतियाँ, चिड़िया और जीव-जंतु मानव की सहयात्री हैं। जलवायु और आकाश अपनी सुरक्षा मानव से चाहते हैं। लेकिन आज के मानव संरक्षण करने के स्थान पर उसे संकट ग्रस्त करने में व्यस्त है। ज़हरीली गैसों ने वायु में मिलाकर पृथ्वी की तापमान को बढा दिया है। इसका हानिकारक प्रभाव मौसमी तंत्र पर भी पड़ता है। धरती की अनुरागी हैं कवि त्रिलोचन। कवि बताते हैं आज के साम्राज्यवादी शक्तियों ने तुम्हारे पर्यावरणीय संसार को भी बदल दिया है। आँधी, बाढ जैसे प्राकृतिक आपदाओं ने मानव एवं पर्यावरण को किस तरह प्रभावित किया है, उसका संकेत भी उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है। वनों में गरजकर आनेवाले आँधी से धरती भी काँपकर खडी है। यह पेडों को उखाड़कर चली जाती है। तल को भी तट से उछाल देता है। मानवीय एवं प्राकृतिक जन्य क्रियाकलापों से उत्पन्न हरीकेन, उल्फा नामक तूफानों की पर्यावरणीय एवं मानवीय संपत्ति का नुकसान आज भी हम देख सकते हैं। हर साल देश-विदेश में बाढ जैसे प्राकृतिक प्रकोप से उत्पन्न दुष्प्रभाव देखने को मिलता है। कवि बताते हैं कि चारों ओर पानी ही पानी है। मेंढक और सुगोवा भी इससे त्रस्त हैं। कहा जाता है कि लगभग ७४ लाख हेक्टेयर भूमि प्रतिवर्ष बाढ से प्रभावित होती है।

'नदी : कामधेनु' नामक छोटी सी कविता में कवि ने वर्तमान नदी की संकटग्रस्तता को प्रस्तुत किया है। आज के मानव ने नदी संसाधनों को दिन-प्रतिदिन शोषण कर उसे रेगिस्तान बनाया है। आज के साम्राज्यवादी एवं नव-उपनिवेशवादी शक्तियों के लिए नदी कामधेनु है। उनके अत्याचारों से त्रस्त नदी ने मानव से बाँधने के लिए कहा है। कवि के शब्दों में -

"नदी ने कहा था मुझे बाँधो
मनुष्य ने सुना और / आखिर उसे बाँध लिया
बाँधकर नदी को / मनुष्य दुह रहा है।"[६०]

इन पंक्तियों में कवि ने नदी के साथ होनेवाले मानव के संघर्ष को प्रस्तुत किया है। आज के मानव के लिए प्रकृति उपभोग की वस्तु है। 'हिरनों का दुःख' नामक कविता में कवि पूछते हैं कि इक्कीसवीं सदी में जंगल न रहे तो जंगली जानवर कहाँ रहेगी ? आज के मानव ने दिन-प्रतिदिन जंगलों का विनाश कर रहे हैं। कवि बताते हैं कि हिरणों की बस्ती है जंगल। आज के मानव हिरणों को अवैध शिकार द्वारा मारकर अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में बेचते हैं। इसलिए दुर्लभ जंगली जानवरों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। इस कविता के अंत में कवि ने इस प्रकार लिखा है-

"जब जंगल की न रहेगा तब उसके भरोसे
रहनेवाले कहाँ और कैसे रहेंगे !"[६१]

पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में जंगल एवं जंगली जानवरों की भूमिका महत्वपूर्ण है। कवि त्रिलोचन ने अपनी कविताओं के माध्यम से मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न प्रदूषण के प्रति सचेत करते हैं। महेंद्र भटनागर, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', नीरज जैसे अन्य प्रगतिवादी कवियों ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरण के प्रति संवेदना व्यक्त की है।

२.३.७. प्रयोगवाद एवं नयी कविता

प्रयोगवाद एवं नये कवि यथार्थवादी है। उन्होंने उस समय के मूल्य विघटन, सांस्कतिक बदलाव, मध्यवर्गीय व्यक्ति जीवन की कुंठा, अनास्था एवं मानसिक संघर्ष को भी अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया है। साथ ही उनकी कविताओं में पारिस्थितिक विनाश से उत्पन्न खतरे का संकेत भी उपलब्ध है। इस काल के प्रमुख कवियों का अध्ययन नीचे प्रस्तुत हैं -

२.३.७.१. धर्मवीर भारती

विज्ञान एवं टेक्नॉलजी ने आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय क्षेत्रों में नये आयामों का उद्‌घाटन किया। आज की वैज्ञानिक क्रांति ने पारिस्थितिकी पर अपना वर्चस्व स्थापित कर उनके सभी तत्वों को विषैला बना दिया है। आज चारों तरह युद्ध ही युद्ध है। इसलिए युद्ध की समस्या एक आम बात हो गयी है। आज का युद्ध हाइड्रोजन बम एवं परमाणु बम से होता है। इसके प्रयोग से उत्पन्न रेडियो एक्टिव कण मानव को नाश करने के साथ-साथ पर्यावरण को भी क्षत-विक्षत करते हैं। कहा जाता है कि आनेवाला युद्ध न्यूक्लियर बम से होगा। 'अंधायुग' में कवि ब्रह्मास्त्र के माध्यम से आज के इक्कीसवीं सदी में आणविक शक्ति के प्रयोग से उत्पन्न विनाशकारी एवं विध्वंसजन्य पारिस्थितिक दुष्परिणामों की ओर संकेत करते हैं। अणु-युद्ध, जैव-युद्ध एवं रासायनिक युद्ध आदि कई प्रकार के युद्ध हम दिन-प्रतिदिन देख सकते हैं। कवि बताते हैं कि ब्रह्मास्त्र के प्रयोग से सूरज बुझ जाकर धरा बंजर हो जायेगी। इससे समस्त जीव-जंतु बचना मुश्किल होगा। आनेवाली शताब्दियों में पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं उगेगी। आनेवाले पीढी भी इसके प्रयोग से उत्पन्न प्रदूषण से असुरक्षित है। बच्चे भी विकलांग होगा। हिरोशिमा और नागसाकी के नगरों के बच्चों में आज भी ऐसी विकृतियाँ देख सकते हैं। इससे सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी। इसका संकेत करते हुए कवि ने 'अंधायुग' में इस प्रकार कहा है-

"ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रह्मास्त्र का
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु !
तो आगे आनेवाले सदियों तक
पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुंठाग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी।"[६२]

आज की एक प्रमुख समस्या बाँध-निर्माण है। इससे उत्पन्न प्रलय से शहर या गाँव डूबते हैं। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में नदी की भूमिका महत्वपूर्ण है। आज विश्व के प्रमुख नदियों में बड़े-बड़े बाँधों का निर्माण उसके प्रवाह को रोकते हैं। 'निर्माण योजना' नामक कविता में कवि ने बाँध निर्माण एवं विस्थापन

से उत्पन्न नदी की संवेदना को प्रस्तुत की है। आज की नदियों को अन्धी ज़हरीली गुफाओं से चलना है। बहाते समय छूटे हरे वृक्ष भी सड़ जायेंगे। प्राकृतिक प्रकोप आँधी से अपार जन धन की क्षति होती है। इन आपदाओं को नियंत्रण करने के लिए पर्यावरण को संतुलित बनाये रखना है। आज गंगा, यमुना में प्रदूषण निरंतर बढ रही है। औद्योगिक एवं मानवीय अपशिष्टों ने आज यमुना नदी को गंदा नाला बना दिया है। कवि बताते हैं कि इसमें कीचड़ है, काई है एवं सड़े गले पत्ते भी है। इसके गंदे जल साँपों की रेंगती निशानी बन गयी है। कवि के शब्दों में -

"यहाँ तो हमेशा से बँधा हुआ पानी है
कीचड़ है, काई है, सड़े गले पत्ते हैं
गंदे जल साँपों की रेंगती निशानी है।"[६३]

'निराला के प्रति' नामक कविता में कवि बादल से अमृत बनकर प्यासी धरती को जीवन देने के लिए कहते हैं। आज बादल पृथ्वी में पागल जैसा डोल रहा है। उनके घन भेरी गर्जन पृथ्वी के नव जीवन को तहस-नहस कर रहे हैं। प्रदूषण ने अंतरीक्ष को भी विषैला बना दिया है। कवि को विश्वास है कि आनेवाले स्वर्ण युगों में बादल धरती को अमृत कणों से सींचेगा। उनकी रचनाओं में पर्यावरणीय वैभव के साथ-साथ मानवीय एवं औद्योगिक क्रियाकलापों से उत्पन्न प्रदूषण की अभिव्यक्ति भी मिलती है।

२.३.७.२. लक्ष्मीकांत वर्मा

कारखानों से निकलनेवाले औद्योगिक एवं रासायनिक अपशिष्ट मानव एवं पर्यावरण के लिए अत्यंत घातक सिद्ध होते हैं। वर्तमान में प्लास्टिक के बिना जीना मुश्किल हो गया है। आज बड़े-बड़े शहरों एवं ग्रामों में प्लास्टिक का ढेर देख सकते हैं। यह ज़मीन को नष्ट करने के साथ-साथ अन्य पर्यावरणीय तत्वों को भी प्रदूषित कर रहे हैं। आज की धरती औद्योगिक-रासायनिक अपशिष्ट, ई-कचरे, प्लास्टिक पदार्थों आदि का वेस्ट बॉक्स बन गयी है। लक्ष्मीकांत वर्मा की 'समय : एक कार्निवाल' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है। कवि बताते हैं कि कार्निवाल के खुले द्वार पर केवल अनुपयुक्त प्लास्टिक का ढेर मात्र ही देख सकते हैं। इसमें शीशी-

खाली बोतल, टूटे सड़े खिलौने आदि भी है। यह देखकर कवि को असहनीय लगता है। कवि ने इसके प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हुए इस प्रकार कहा है -

"दूध की शीशी खाली बोतल
टूटे फूटे सडे खिलौने
प्लास्टिक के ये नन्हे बौने
पडे हुए हैं शव से सूने।"[६४]

प्लास्टिक की ये वस्तुएँ आसानी से नष्ट नहीं की जा सकतीं। अविघटनशील पदार्थ प्लास्टिक ने दिन-प्रतिदिन जल, थल एवं वायु को विषैला बनाते हैं। कवि ने इन पंक्तियों के माध्यम से प्लास्टिक को तिरस्कार करने की प्रेरणा दिया है। शीशा एवं पारा जैसी धातुएँ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए हानिकारक है। पेट्रोल की जलन क्रिया में उत्पन्न सर्वाधिक विषैला पदार्थ है सीसा। यह वायु के कार्बनिक एवं अकार्बनिक पदार्थों के साथ घुलकर सभी पर्यावरणीय तत्वों को प्रदूषित करते हैं। 'शीशे का पारा घुल जाता है' नामक कविता में कवि कहते हैं कि उनकी पृष्ठभूमि की जर्जरता से आनेवाली मुद्राएँ मुझे भयानक लगता है। वायु मण्डल में शीशे जैसे विभिन्न गैसों की मात्रा दिन-प्रतिदिन बढ रहा है। शीशे या पारे का दुष्प्रभाव पर्यावरण पर भी पड़ता है। डी.डी.टी के उपयोग से मलेरिया को खत्म किया जा सकता है। कीडे मकडे को मारने के लिए डी.डी.टी का उपयोग कर रहा है। 'इतिहास और डी.डी.टी' नामक कविता में इसका संकेत द्रष्टव्य है -

"मच्छर, कीडे, रोग-दोष को
दूर करेगा इस पिचकारी से।"[६५]

डी.डी.टी जैसे पेस्टिसाइड का छिडकाव कीडे-मकडों और केंचुओं के साथ मानव के लिए भी घातक सिद्ध होता है। ये कीडे, केंचुए मृदा को उर्वर बनाते हैं। लेकिन डी.डी.टी का उपयोग मानव-कल्याण के लिए काम में आनेवाली मृदा को भी संकट पैदा करते हैं। इसलिए कवि ने अपनी कविता में डी.डी.टी के उपयोग पर व्यंग्य किया है।

२.३.७.३. प्रभाकर माचवे

कवि माचवे बताते हैं प्रकृति चैतन्यमयी आत्मा है। परा नहीं। उनके सभी पर्यावरणीय तत्व चेतनशील हैं। आज के मानव ने प्रकृति को जड मानकर उनको अत्याचार कर रहे हैं। उनको पता नहीं उसमें एक जीवंत सत्ता निहित है। प्रकृति हमारे लिए माता की तरह है। मानव कल्याण की प्रगति के लिए उनका योगदान अमूल्य है। उस चेतन सत्ता के बारे में कवि इस प्रकार कहते हैं -

"प्रकृति हमारे यहाँ जड न निरात्म है।
चैतन्यमयी परा नहीं वह आत्म है !"[६६]

पौराणिक एवं धार्मिक मतानुसार सूर्य भगवान है।पुरातन काल के लोग दिन-प्रतिदिन सूर्य की वंदना करते हैं। आज भी कुछ स्थानों पर यह प्रथा देख सकते हैं। सूर्य से संबंधित मिथक काव्य है 'विश्व कर्मा'। पारिस्थितिकी को संचालन करने में सूर्य की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रकाश देनेवाले सूर्य के बिना एक पल जीना बहुत मुश्किल होगा। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शोषण से आज के सूर्य की दशा भी दयनीय है। पर्यावरणीय तत्व सूर्य की महत्ता इस काव्य में देख सकते हैं। कवि बताते हैं कि सूर्य के अभाव में संपूर्ण सृष्टि का नाश भी होगा। नव-उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी शक्तियों के आगमन से पर्यावरण का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। संस्कृति बदलने के साथ मानव एवं पर्यावरणीय संबंध भी हट गया है। इन शक्तियों से माचवे बताते हैं कि प्राकृतिक साधनों के सहारे निजी सीमा में हम तो आगे बढेंगे। हमें 'एड़' या 'क्रेन' नहीं चाहिए। कवि ने अपनी कविताओं में प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को प्रतिपादित किया है। इक्कीसवीं शताब्दी की आर्थिक विकास नीति का आधार है प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन। आज की रोज़-रोटी की निर्भरता भी पर्यावरण पर ही अवलंबित है। इस दोहन से हमारे विकास के साथ-साथ प्राकृतिक संतुलन भी बिगड जाता है। 'सौ का मार्च' नामक कविता के आरंभ में कवि ने पृथ्वी पर उपनिवेशी राष्ट्रों के अस्त्र-शस्त्र, परमाणु बम के निर्माण एवं परीक्षणों को रोक लेने का आह्वान करते हैं। इसका कारण भी कवि बताते हैं -

"नहीं चाहिए भावी पीढी लुंज-पुंज हो
विकृतांग या सांक्रमक रोग उलीचे

नहीं चाहिए हमें राख के ढेर, ध्वस्त खेती,
श्मशान बस पीछे
मत दुनिया को प्रतिहिंसा की
इस भट्टी में झोंको
रोको, रोको
अणु के अस्त्र परीक्षण रोको !"[६७]

कवि बताते हैं कि परमाणु अस्त्र-शस्त्रों के व्यापक प्रयोगों ने पर्यावरणीय तंत्र को महाविनाश के कगार पर खड़ा कर दिया है। इससे हरी-भरी खेत ध्वस्त होकर श्मशान बन जायेगा। विकृत या विकलांग बच्चे भी पैदा होगा। भविष्य में युद्ध-पिपासा सत्ता लोभी हमारे बगीचों को मरुथल बनेंगे। इसका संकेत भी उनकी कविता में द्रष्टव्य है। 'मिसीसिपी' नामक कविता में कवि माचवे ने नदी संकट को प्रस्तुत किया है। विश्व की सभी नदियाँ आज गंदगी का पर्याय बन चुकी है। कवि ने कई नदियों को देखा है। पानी के रंग भी जामुनी, हरे, गुलाबी आदि कई प्रकार का होता है। कवि ने इस कविता में नदी के पानी की महत्व के बारे में भी बताते हैं। आज सिन्ध, गंगा, कावेरी, कृष्णा आदि नदियों में पानी के स्थान पर रेत मात्र ही है। कवि बताते हैं कि आज हम सब पानी के परदे पर अभिनेता बन गयी है। कवि के शब्दों में -

"महानदी, कावेरी, कृष्णा, भीमा, घग्घर,
रेवा ....
अब सब रेता
पानी के परदे पर हम सब हैं अभिनेता
बेमानी।"[६८]

उपर्युक्त पंक्तियों से पता चलता है कि भविष्य में नदी का नामोनिशान भी मिट जायेगी। प्रभाकर माचवे अपनी कविताओं के माध्यम से पेड़-पौधे, खग-मृग, जलचर, जीव-जंतु आदि से समृद्ध शुद्ध पर्यावरण की ओर लौटने की प्रेरणा देते हैं। कवि की राय में स्वर्ग से भी सुखमय स्थल है प्रकृति। वहाँ हमको सब बंधनों से मुक्ति मिलेगी।

२.३.७.४. गिरिजाकुमार माथुर

गिरिजाकुमार माथुर के लिए धरती माँ है। उस ममतामयी माँ का आज के लोग दिन-प्रतिदिन विध्वंस कर रहे हैं। यह देखकर कवि ‘कल्पांतर’ नामक काव्य के आरंभ में ममतामयी माँ धरती की स्तुति करते हुए उसकी विराट महत्ता को आज के इक्कीसवीं शताब्दी के लोगों को बोध कराते हैं। इस सुन्दर सचेतन पृथ्वी में सूर्य, चंद्र, चक्रमय निहारिकाएँ, जलते तारक आदि भी विद्यमान है। यह धरती जीवन को सुंदर बनाती है। ‘कल्पांतर’ एक वैज्ञानिक काव्य है। इसमें अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण एवं परीक्षणों से उत्पन्न पारिस्थितिक विध्वंस को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि फौजों की उठती पदचाप भी जल-थल को दूषित करते जाते हैं। रेडियो एक्टीव कणों में संपूर्ण विश्व को विध्वंस करने की शक्ति है। इसके विकराल रूप को प्रस्तुत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

“नदियों की धार पलट सकते
सागर को भाप बना सकते
बस्ती को ऊजड़ कर सकते।”[६१]

रेडियो एक्टिव धूल धरती-आकाश, हवा-पानी, नदी-सागर एवं वनस्पतियाँ आदि को भी ध्वस्त कर सकते हैं। ऊजड़ मरुथल में नये-नये कैष्टस उगा सकते हैं। इससे धरती और आकाश को जलाने का बम भी पैदा करते हैं। ‘कल्पांतर’ में प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन एवं अणु-परमाणुओं का खतरनाक प्रयोग करनेवाले देश को ‘स्वर्ण देश’ कहा गया है। पारिस्थितिकी में अणु-युद्ध से होनेवाले विध्वंसक प्रभावों को ‘शांति देश’ में प्रस्तुत किया गया है।

रासायनिक उत्पादनों एवं अस्त्र-शस्त्र के खतरनाक प्रयोग से सागर, नदी, वन एवं अंतरीक्ष भी प्रदूषण से त्रस्त होगा। कवि बताते हैं कि मिट्टी की लोथडे उड़ रही है, नदियाँ उचलकर आँधी, बाढ़ जैसे पारिस्थितिक प्रकोप आयेगी। रेडियो एक्टिव गैसें वायुमण्डल में फैलाकर तेजाबी वर्षा, वैश्विक तापन जैसे पारिस्थितिक संकट का कारण बनता जा रहा है। भविष्य में वर्षा के स्थान पर एसिड की बूँदें बरसना मात्र ही होगा। आज भी एसिड वर्षा से पीडित लोगों को हम देख सकते हैं।

अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग विकलांग सन्तान पैदा करने का कारण भी होगा। कवि गिरिजाकुमार माथुर बताते हैं कि इससे संपूर्ण पारिस्थितिकी झुलस जाते हैं। साथ ही नगर, ग्राम, घर, द्वार, भूमि, वन आदि को नष्ट करनेवाले महाकाल का जो तांडव नृत्य भी पारिस्थितिकी में होगा। भूख, रोग, निर्धनता का ज़हरीला फेन उगलनेवाला काल है महाकाल। इसलिए कवि ने 'कल्पांतर' नामक काव्य के माध्यम से पारिस्थितिकी में होनेवाले अस्त्र-शस्त्रों के खतरनाक प्रयोग एवं परीक्षणों को रोकने का आह्वान करते हैं -

"मनुज विरोधी पद्धति छोडो / भंग करो ब्रह्मास्त्र भयानक
मिट्टी की शीतल पृथ्वी को / मत तुम जलता केतु बनाओ।"[७०]

उपर्युक्त पंक्तियों से कवि ने आज के मानव एवं वैज्ञानिकों से प्रार्थना की है कि ब्रह्मास्त्र के प्रयोग से पृथ्वी को तुम जलता केतु मत बनाओ। कवि ने इस काव्य के अंत में भी धरती की स्तुति की है। धरती में नदी, पेड़, फल-फूल, जंगल, पर्वत नहीं होते तो यह दुनिया कैसी होगी ? 'एक खुला आसमान' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है। कवि बताते हैं कि इसके बिना की धरती फोकी, कोरी, सपाट, सूखे सरकंडे की तरह होगी। कवि का यह अनुमान केवल वैज्ञानिक भी सोचता नहीं होगा। औद्योगिक एवं रासायनिक अपशिष्ट जल, थल, वायु प्रदूषण का कारण बन गये हैं। कवि बताते हैं कि इस क्रांति से अनेक पारिस्थितिक कठिनाइयाँ पनपने लगीं। इसका संकेत 'बीसवाँ अंधकार' नामक कविता में द्रष्टव्य है। इन शक्तियों ने नदियों का पानी को ढोककर समुद्रों को तेल का कुप्पा, झीलों को गटर बना दिया है। कवि गिरिजाकुमार माथुर बताते हैं कि औद्योगिक एवं रासायनिक क्रांति की उपलब्धियाँ हैं - धूप पर इलेक्ट्रो-प्लेटिंग एवं चाँदनी पर डियोडोरेण्ट वार्निश। इसका दुष्प्रभाव सब्जी एवं मछलियों पर भी पड़ता है। कवि के शब्दों में -

"सब्जियों का रस / गैमेक्सीन से गया बस
मछलियाँ / पारा-विष / फेफडों में एसबैस्टस।"[७१]

आधुनिक कारखाने विषैले पदार्थ समुद्रों में फेंकने के फलस्वरूप १९५३ में दक्षिण जापान की मिनिमाता खाडी में पारा-प्रदूषण का प्रकोप फैला। इससे समुद्री मछलियाँ भी विषाक्त हुईं। कवि ने यहाँ 'मछलियाँ', एवं 'पारा-विष' के माध्यम से

मिनिमाता ट्राजडी का उल्लेख किया है। हिरोशिमा नगर में हुए अणुबम विनाश के प्रति संवेदना 'अंतिम आत्महत्या' नामक कविता में मिलता है। कवि बताते हैं कि मसाले के साँप सा नगर भी बुझ गया है। इस अणु बम विनाश के महाप्रलय ने पारिस्थितिक सृजनात्मकता को भी ध्वंसावशेष कर दिया है। आज धरती सूखे से रेगिस्तान एवं समुद्र कूडे का एक तिहरा बन गया है।

शहरीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न गंदी गलियाँ भी प्रदूषण का कारण बनती है। इसका संकेत उनकी कविताओं में मिलता है। कवि बताते हैं कि आज के लोग हरी-भरी एवं ममता से भरी प्रकृति को अपना दासी बनाते हैं। इससे प्रदूषण के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन जैसी नयी-नयी समस्याएँ पैदा हो रही हैं। पारिस्थितिक अस्तित्व के संकट की अभिव्यक्ति गिरिजाकुमार माथुर की 'मैं वक्त के हूँ सामने' नामक काव्य में द्रष्टव्य है।

विज्ञान और तकनीकी ने समूचे पृथ्वी को भी खतरे में डाल दिया है। पृथ्वी के अस्तित्व को भी खतरे में डाल दिया है। 'पृथ्वी कल्प' में मानव एवं पारिस्थितिकी के आदिम सृजन की इतिहास गाथा है। इसमें कवि दार्शनिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से पृथ्वी के रहस्यों को खोलने का प्रयास किया है। विज्ञान की अंधाधुंध दौड़ और मानव की अपरिमित लालच ने पारिस्थितिकी को क्षत-विक्षत किया। पारिस्थितिकी के संपूर्ण रहस्यों पर विजय पाने की विज्ञान की जादुई दुनिया में ही मानव के अस्तित्व विनाश का बीज छिपा हुआ है। काव्य में पृथ्वी को कवि 'गोलमा' कहते हैं। जर्मयुद्ध, शीत-युद्ध जैसे युद्धों के साथ-साथ पारिस्थितिक मूल्यों का भी विध्वंस हुआ। युद्धों से उत्पन्न पारिस्थितिक विभीषिकाओं का प्रभाव भविष्य में भी होगा। 'पृथ्वी कल्प' में इसका संकेत मिलता है। युद्धों में प्रयुक्त रसायनिक उत्पादनों से निकले अपशिष्ट नदी, सागर एवं अंतरीक्ष को भी प्रदूषित कर रहे हैं। वैज्ञानिक संसाधनों का दुरुपयोग हमारे पारिस्थितिकी को खराब करती है। पृथ्वी को जानने के लिए अंतरीक्ष युग में पहुँचे कवि वहाँ अनेक प्रश्नों से टकराते हैं। कवि कहते हैं-

"उफन रहे कूडे के टिन
पृथ्वी पर
मलबा अब सभ्यता का बहता है

समुद्रों की गँदलाती छाती पर
आकाश में ज़हर
अंतरीक्ष में फेंक दिया गया निराधार।"[७२]

प्रगति एवं विकास के नाम पर होनेवाले कार्यक्रमों में केवल प्रदूषण मात्र ही बचा है। मानव एवं प्रकृति के आदिम अंतरंग आत्मीय संबंध पृथ्वी में देख सकते हैं। पृथ्वी के अस्तित्व के प्रति सजग कवि है गिरिजाकुमार माथुर।

आणविक भट्ठियों या लौह-भट्ठियों के रेडियो सक्रिय धूल जल, थल एवं वायु को प्रदूषित कर संपूर्ण संसार को भस्मसात करते हैं। इससे धरती केवल श्याम राख मात्र ही बन जायेगी। पर्यावरणीय तत्वों में इन विकिरणों का प्रभाव आगामी वर्षों में कैसा होगा ? इसके बारे में कवि 'युग साँझ' नामक कविता में इस प्रकार लिखते हैं -

"नयनों की लौह-भट्ठियों में शत हाहुताश,
लावा सी पदचापों के नीचे भस्मसात
सागर होते, धरणी बनती है श्याम राख,
नभ टूट-टूट गिरता है पुच्छल तारों में।"[७३]

पर्यावरणीय वैभव एवं उसकी संघर्ष ग्रस्तता का संकेत 'न्यूयॉर्क में फॉल' नामक कविता में मिलता है। मिट्टी तथा बालू से प्राप्त होनेवाले युरेनियम धातु को अणु-बम निर्माण के लिए उपयोग किया जाता है। युरेनियम जैसे तत्वों का विखंडन सर्वाधिक विध्वंसकारी सिद्ध होता है। कवि ने कहा है कि अधिक शक्तिशाली एवं पर्यावरणीय संहारक युरेनियम धातु पृथ्वी को अणु-धूम बनायेगी। पारिस्थितिक व्यवस्था नैसर्गिक है। मानव ने पर्यावरण के साथ जो छेड़छाड़ की है, इससे प्राकृतिक दुर्घटनाएँ एवं असंतुलन का खतरा पैदा हो गया है। कवि गिरिजाकुमार माथुर आज के मानव एवं वैज्ञानिकों से पूछते हैं कि क्या प्रकृति आप के हाथ से प्रलय बन जायेगी?

२.३.७.५. नरेश मेहता

नरेश मेहता ने परिस्थिति के साथ सह अस्तित्व महसूस किया है। पर्यावरण पर केवल मानव मात्र ही अत्याचार कर रहे हैं। इसलिए कवि ने आज के मानव से बताया है कि यह समस्त सृष्टि तुम्हारे कुलगोत्र का परिजन है। 'समय देवता' नामक लंबी कविता में कवि ने भारत, जापान, चीन जैसे संपूर्ण विश्व की वैज्ञानिक प्रगति एवं प्राकृतिक विभिन्नताओं की आलोक-मंजूषा प्रस्तुत करने के साथ-साथ मानवीय अत्याचारों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकट को भी प्रस्तुत किया है। चीन के पारिस्थितिक वैभव को प्रस्तुत कर वहाँ की वर्तमान स्थिति के बारे में कवि इस प्रकार कहते हैं कि बम-गोलों ने चीन की धरती को बाँझ बना दिया है। वहाँ के नगर, ग्राम, घाटी, जंगल के चारों ओर अणु-विस्फोट की धुआँ ही धुआँ है। भारत में हिमगिरी, मानसरोवर, ब्रह्मपुत्र, गोदावरी एवं कावेरी को अपना अलग महत्व है। लेकिन आज हमारे शस्य-श्यामला धरती पर फसल जलकर मनुज मर रहा है। प्राकृतिक या मानवीय कारणों से उत्पन्न वनाग्नि से आसाम में वनों का विनाश हो रहा है। सदियों से बंद पडे बर्फ और हिम के दरवाज़े आज के नयी हवा के भूकम्पों में काँपकर टूट रहे हैं। इससे पारिस्थितिक तंत्र दिन-प्रतिदिन असंतुलित होता जा रहा है। १९४५ में हिरोशिमा और नागसाकी में हुए अणु-बम विस्फोटों से ये दोनों नगर भस्मीभूत हो गये हैं। इसके प्रयोग से उत्पन्न रेडियो-सक्रिय पदार्थों का दुष्प्रभाव वहाँ आज भी देख सकते हैं। कवि की राय में वहाँ गन्धक और फासफोरस की पीली लपटें दौड़ रही है, जिससे वहाँ के महल-फैक्टरी सब बुझ गये हैं। अमरीका जैसे उपनिवेशवादी राष्ट्र साम्राज्यवाद एवं विज्ञान के बल पर संपूर्ण पारिस्थितिकी को दूसरा हिरोशिमा एवं नागसाकी बनाना चाहते हैं। कवि नरेश मेहता के शब्दों में -

> "एटम औ उद्जन बम हैं नभगामी महलों के कर में,
> चाह रहे जो सृष्टि धरा को केवल हिरोशिमा कर देना।"[७४]

कवि बताते हैं कि आज जर्मन के खेतों में बम की फसल है, वहाँ की वसुन्धरा फौजी नक्शा बन गयी है। इस कविता में सूर्य, चंद्र जैसे पारिस्थितिक तत्वों की अवदानों का संकेत भी मिलता है। पंच तत्वों में प्रमुख तत्व है पृथ्वी। भारतीय संस्कृति में पृथ्वी को देवता या माता मानते हैं। 'वनपाखी सुनो' में कवि कहते हैं कि

मेरी माता भूमि और मैं धरती का पुत्र हूँ। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति की पूजा करना सिखाते हैं। जीवन को सुखी बनाने में वनस्पति, पशु-पक्षी, फल-फूल जैसे समस्त जड़-चेतन में पारस्परिक ममत्व का भाव होना चाहिए। इस प्रकार विश्व के सभी लोग धरती को माता के रूप में स्वीकार किया जाये तो पारिस्थितिक समस्याएँ शीघ्र ही दूर हो जायेगी। कवि मेघ को पानी राजा या पानी बाबा कहते हैं। आज के मानव ने अणु बम का निर्माण कर धरती को क्षत-विक्षत किया है। लेकिन वनघासें ने धरती की नग्नता को ढेंकने का काम कर रही है। आज के मानव अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए पर्यावरणीय संसाधनों का अंधाधुंध दोहन कर उसमें संकट पैदा करते हैं। यहाँ मानव की अपेक्षा वनघासों का कर्म अत्यधिक महत्वपूर्ण है। आज के मानव को अवर्षा से अनेक समस्याओं को सामना करना पड़ता है। इससे उत्पन्न खेती-विनाश से दिन-प्रतिदिन अनेक कृषक आत्महत्या कर रहे हैं। यह देखकर कवि नरेश मेहता 'मेघपाहुनद्वार' नामक कविता में मेघराज से अमृत बरसने का निवेदन करता है। इससे खेती-विनाश से मुक्ति मिलेगी। आज के संदर्भ में कवि का यह निवेदन प्रासंगिक है।

'अरण्या' में संकलित कविताओं की प्रमुख केंद्रबिंदु पृथ्वी है। उस धरती माता को आज के मानव अंतरकक्षीय आयुधों एवं अणु-विस्फोटों से दिन-प्रतिदिन क्षत-विक्षत कर रही है। इससे उत्पन्न प्रलयंकारी स्थिति की अभिव्यक्ति 'पंचानन' कविता में मिलता है। इस कविता के माध्यम से कवि नरेश मेहता ने पंचानन को पुनः रुद्र मत बनाने का उपदेश भी दिया है -

> ''पुनः रुद्र मत बनाओ
> मत जगाओ तत्वों की इस शांभवी को
> मत जगाओ इस पंचानन को
> मत जगाओ।''[७५]

कवि की राय में पृथ्वी अक्षय भंडार है। इस कविता में कवि को भय है कि यह पृथ्वी अंधी धृतराष्ट्र बनकर सदा के लिए तिमिंगलों का ग्रास बन जायेगी। कवि बताते हैं नदी, पहाड आदि के प्रति आज के लोगों को कोई चिंता नहीं है। नदी का सारा जल बह गया है। इसका साक्षी नदी देह का रेत मात्र ही है। उनके लिए

सूर्य-तापन असहनीय है। इसका संकेत 'सूखी नदी का दुख' नामक कविता में देख सकते हैं। विज्ञान एवं टेक्नॉलजी के माध्यम से आज के मानव ने पर्यावरण के अंतर रहस्यों का उद्‌घाटन किया। इसके पीछे विनाश एवं विकास का भाव भी छिपाये हुए हैं। इन रहस्यों ने आज के मानव को पर्यावरण के साथ विध्वंसकारी व्यवहार करने की प्रेरणा दी है। उन लोगों को धरती के प्रति कृतज्ञता या आभार नहीं है। नदी भी डरकर दिन-प्रतिदिन भागी जा रही है। कवि नरेश मेहता वर्तमान मानव से पूछते हैं कि आपने क्यों इस दैवीय संपदा के साथ शत्रु की तरह व्यवहार कर रहे हैं ? 'उत्सवा' में संकलित 'महाभाव' नामक कविता में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि एवं आकाश जैसे पंचतत्वों में एक विशाल कौटुम्बिकता का भाव देख सकते हैं। कवि के लिए धरती नारायणी है। 'वैष्णव-यात्रा' में कवि बताते हैं -

> "मेरे लिए यह पृथ्वी / दिशाओं पर जाकर समाप्त हो जानेवाली
> मात्र धरती ही नहीं है / वरन् जीव मात्र की कवच
> नारायणी है।"[७६]

धरती और सूर्य का अपना एक पौराणिक महत्व है। आज के मानव ने इसको भी अपमानित किया है। यह नरेश मेहता जैसे कवि के लिए असहनीय है। उनकी कविताओं में पृथ्वी को स्वर्ग बनाने का अनुष्ठान देख सकते हैं। उनकी कविता सृष्टि की एकात्मकता का व्यापक संदेश है। इसमें चर-अचर, जड़-चेतन एवं प्रकृति-मानव का एकात्मक भाव निहित है। कवि बताते हैं कि पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान के लिए पर्यावरण की ओर वापस लौटना ही है। इसका संकेत 'अरण्यानी वापसी' नामक कविता में द्रष्टव्य है -

> "मेरी अरण्यानी ! मुझे यहाँ से वापस अपनी धरती
> अपनी शाश्वती के पास लौटना ही होगा !!"[७७]

२.३.७.६. अज्ञेय

अज्ञेय की कविताओं में पारिस्थितिक चेतना काफी मुखर है। उन्होंने मानव, विज्ञान, प्रकृति सबको अपनी रचनाओं में समेटा है। मानव-पर्यावरणीय रिश्ते टूटने की पीड़ा 'औपन्यासिक' शीर्षक कविता में बार-बार व्यंजित हुई है। उसमें कवि

को एकांत बैठने के लिए नदी का किनारा भी नहीं है। कवि की राय में यह विडंबना आज के औद्योगिक क्रांति की देन है। कवि ने यहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत उत्पन्न औद्योगिक क्रांति की विभीषिकाओं की ओर संकेत किया है। इसके फलस्वरूप मानव एवं पर्यावरण का संबंध भी दिन-प्रतिदिन टूटता जा रहा है। यह कविता १९६८ में लिखी है। उस समय में भी कवि अज्ञेय ने औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रांति का भी विरोध किया है। औद्योगिक सभ्यता ने पहाडियों के सौंदर्य को भी बदल दिया है। चिमनियों से बराबर निकलनेवाली धुआँ पर्वतीय प्रदेश को भी प्रदूषित कर रहे हैं। इन अत्याचारों से प्रभावित हिमालय के ग्लेशियर भी दिन-प्रतिदिन पिघल रही है। 'औद्योगिक बस्ती' नामक कविता में औद्योगिक सभ्यता के प्रचार-प्रसार से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत मिलता है। औद्योगिक विकास ने मानव को समृद्धि का रास्ता खोला। इसके फलस्वरूप आज के मानव ने अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए प्राकृतिक नियमों का अतिक्रमण किया।

औद्योगिक विकास एवं सूचना-प्रौद्योगिकी ने संपूर्ण विश्व को एक ग्लोबल विलेज बनाया है। विकास के साथ उत्पन्न पारिस्थितिक खतरनाक भविष्य के प्रति कवि अज्ञेय सचेत है। इसका संकेत 'नन्दादेवी' श्रृंखला की कविताओं में देख सकते हैं। विकास के नाम पर वन, जल जैसे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया गया। उस समय सरकार भी पेड़ काटने को प्रेरित करती है। आज हम दिन-प्रतिदिन प्राकृतिक नैसर्गिक संपदा खोकर जा रहे हैं। उस समय के सरकार प्राकृतिक संपदाओं को दोहन कर विकास के सुनहरे भविष्य के सपने दिखलाती है। 'नंन्दादेवी-२' में कवि लिखते हैं -

"आज ठेकेदार को
हमारे पेड़ काट ले जाने दो।"[७८]

पारिस्थितिकी को खतरनाक भविष्य से बचाने के लिए प्रयत्नशील हैं कवि। कवि का यह प्रयास आज के पारिस्थितिक आंदोलन के समान है। 'टेहरी बचाओ', 'सुवर्ण रेखा बचाओ' आदि अभियान के रूप में अज्ञेय की पारिस्थितिक आंदोलन की अनुगूँज भारत में दिन-प्रतिदिन सुन रहे हैं। वन संसाधन वर्तमान पीढी के साथ भावी पीढी को भी सुरक्षित करना है। मानव-जीवन का अस्तित्व भी वन के

साथ जुडा है। वन विनाश के साथ मानव-जीवन का विनाश भी होगा। आदिकाल में वृक्षों का काटना पाप माना गया है। प्रकृति का बहुमूल्य धरोहर है वन। वन-विनाश से उत्पन्न विभीषिकाओं की पीड़ा भी 'नन्दादेवी' की कविताओं में अभिव्यक्त हुई है। कहा जाता है कि तीसरा विश्व युद्ध पानी पर होगा। सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व का आधार पानी है। औद्योगिक विकास ने नदी-नाले, तालाब आदि को भी प्रदूषित कर दिया है। जल संसाधनों के दोहन का संकेत करते हुए कवि अज्ञेय लिखते हैं -

"हमारे धुंधुआते शक्तिमान ट्रक
तुम्हारे झरने-सोते सूख चुके होंगे और तुम्हारी नदियाँ
ला सकेगी केवल शस्य-भक्षी बाढें या आंतों को उमेठनेवाली बीमारियाँ।"[७९]

'नन्दादेवी-६' में रेखांकित 'मरुदीप' मानव एवं प्रकृति की अन्योन्याश्रित संबंधों को टूटनेवाले मानव सभ्यता का ही मरुदीप है। 'नन्दादेवी' में सरकार और शहरी लोग पर्वतीय प्रदेश की पारिस्थितिकी को उजाड़ने पर बल दिया गया है। पारिस्थितिक विनाश के प्रति उनको कोई भी चिंता नहीं है, उनका लक्ष्य केवल विकास ही विकास है। कल की समृद्धि एवं विकास के लिए सरकार बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाती हैं। अज्ञेय की पारिस्थितिक चिंताएँ सुंदरलाल बहुगुणा जैसे आज के पारिस्थितिक आंदोलन नेताओं के विचारों के समान है। पर्वतीय प्रदेशों के प्राकृतिक संपदाओं को दोहन करना आज के पूँजीवादी एवं साम्राज्यवादी शक्तियों का लक्ष्य है। औद्योगिकीकरण और नगरीकरण के कारण पारिस्थितिक प्रदूषण तेज़ी से बढ़ रहा है। साथ ही इतिहास, संस्कृति आदि बहुमूल्य परंपराएँ भी समाप्त हो जाता है। पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में वृक्षों और वनस्पतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। आज के लोगों को केवल लाभ कमाने की चिंता है।

'हिरोशिमा' नामक कविता में एटम-बम की विध्वंसक शक्ति की भर्त्सना की है। कविता में प्रस्तुत सूरज एटम-बम है। नगर के बीच-बीच में इसका प्रयोग आज एक खास बात हो गयी है। मानव सहित सभी जीव-जंतु इस विध्वंस की साक्षी है। इसका प्रभाव लंबे समय तक कई पीढियों तक पहुँच जाता है। इससे सारी सृष्टि नष्ट हो जाएगी। हिरोशिमा और नागसाकी में हुए बम-विस्फोटों से दोनों नगर तहस-नहस हो गये हैं। आज भी ये नगर विनाश की कहानी स्वयं कहते हैं। मानव की सृजनात्मक

हथियार एटम-बम संपूर्ण मानव जाति को भी विनाश किया जा सकता है। इसका हानिकारक प्रभाव हिरोशिमा में आज भी देखने को मिलता है। एटम-बम की ध्वंस परिणामों की ओर संकेत करते हुए कवि लिखते हैं -

"झुलसे हुए पत्थरों पर
उजड़ी सड़कों की गच पर।
मानव का रचा हुआ सूरज
मानव को भाप बनाकर सोख गया।
पत्थर पर लिखी हुई वह
जली हुई छाया
मानव की साखी है।"[८०]

विषाक्त रसायनों एवं घातक पदार्थों से सागरीय वनस्पति एवं जीव-जंतु दिन-प्रतिदिन विनष्ट हो जाते हैं। अमरीका, ब्रिटेन जैसे नव-उपनिवेशवादी राष्ट्रों ने परमाणु परीक्षण समुद्र के अंदर किए थे। यह मीलों तक के सागर तट को भी प्रदूषित कर देते हैं। 'इतिहास की हवा' नामक कविता में कवि अज्ञेय ने साम्राज्यवादी शक्तियों की अणु-विस्फोटों से होनेवाली सागर के भावी ध्वंस परिणामों की ओर संकेत किया है। आज के मानव सागर को कई तरह प्रदूषित करते हैं। सागर में निहित पदार्थ को अपना ही अलग महत्व है। 'इतिहास की हवा' नामक कविता में प्रशांत सागर की असंख्य मछलियों को चीनी सिपाहियों ने डायनामाइट लगाकर निष्करुण मार दिया है। साथ ही अमरीका ने अणु विस्फोट से अपार सागर को विषमग्न कर दिया है। चारों ओर व्याप्त प्रदूषण के कारण मछलियों की अनेक जातियों एवं प्रजातियों का अस्तित्व मिट चुका है। कवि अज्ञेय के शब्दों में -

"जिसे अमरीकियों ने विस्फोटित अणु की विकिरण शक्ति दूषित कर दिया है !
ये हंसावलियाँ / नीर-क्षीर नहीं
अंतहीन सागर में विष-वमन कर रही है !"[८१]

भारतीय संस्कार में सूर्य देव है। पारिस्थितिकी को संचालित करनेवाले प्रमुख संघटक है सूर्य। इसको आधार बनाकर संरचित चर्चित इको-कविता है 'बावरा अहेरी'। पारिस्थितिकी एवं मानव के द्वंद्वात्मक संबंधों को इस कविता में प्रस्तुत किया

है। इसमें रेखांकित बावरा अहेरी समस्त सृष्टि का स्रोत है। विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी ने हमारी पारिस्थितिकी की नैसर्गिक सौंदर्य को विध्वंस कर दिया है। पारिस्थितिकी को विध्वंस करनेवाले मोटरों के धुएँ, कचरा जलानेवाली उद्दंड चिमनियाँ जैसे सभी संसाधनों का उल्लेख किया है। कवि ने इस कविता में पारिस्थितिकी को एक नये ढंग से प्रस्तुत किया है। विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी पर हुए जादुई दुनिया सबको बाँध लेते हैं। पारिस्थितिकी पर हुए भीषण आतंक को भी सूचित किया है। पारिस्थितिक चेतना की एक नयी अवधारणात्मक पहचान है बावरा अहेरी। वर्तमान संस्कृति में वांछित तत्व है पारिस्थितिकी। कवि कविता के अंत में सूर्य की कृपा से प्राकृतिक बीजों को पुनः अंकुरित करने की अभिलाषा व्यक्त करती है।

'असाध्य वीणा' में मानव एवं पारिस्थितिक संबंधों को सह-अस्तित्व की भूमि पर प्रस्तुत किया है। इसमें प्रस्तुत पारिस्थितिक संवेदना भारतीय परंपरा के अनुकूल है। एक अतिप्राचीन विशाल वृक्ष पारिस्थितिकी की समस्त संभावनाओं के साथ प्रतीकवत् है। कवि इसमें ऋतु-परिवर्तन को आदिम सृष्टि चेतना से जोड़कर प्रस्तुत किया है। यहाँ के प्रकृति पर हस्तक्षेप नहीं किया है। सभी जीव-जंतुओं के जीवन-प्रणाली पारिस्थितिक नियमों के अनुकूल है। 'प्रियंवद' में भी पारिस्थितिकी की सृजनात्मक भाव प्रमुख है। सृष्टि शक्ति की मिथकीय प्रवृत्ति इसमें विवेचित हुई है। इस कविता में पारिस्थितिकी के प्रति एक प्रकार का आराधना भाव था। कवि ने पारिस्थितिकी एवं चेतन-अचेतन वस्तुओं की अन्योन्याश्रित संबंधों को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। मानव एवं पारिस्थितिकी की घनिष्ठ संबंधों को 'बन्धु हैं नदियाँ' नामक कविता में कवि इस प्रकार व्यक्त किया है-

> "बन्धु हैं नदियाँ / प्रकृति भी बन्धु है
> और क्या जाने, कदाचित्
> बन्धु /मानव भी !"[८२]

२.३.७.७. भवानीप्रसाद मिश्र

भवानीप्रसाद मिश्र के काव्य का अविभाज्य हिस्सा है पारिस्थितिकी। उनके लिए पारिस्थितिकी सभ्यता एवं सांस्कृतिक विकास का बहुलार्थी स्रोत है।

उनकी कविताओं में पेड़-पौधे, जंगल, नदी जैसे समस्त पर्यावरण जगत् की बहुतायत है। 'सतपुड़ा के जंगल' नामक कविता में कवि ने मानव-पारिस्थितिकी की आदिम सभ्यता की आत्मीय पूर्ण संबंध को प्रस्तुत किया है। वनस्पति एवं जीव-जंतुओं के साथ 'गोंड' नामक आदिवासी जाति भी सतपुडा के जंगल के अभिन्न अंग है। कवि ने जंगली वस्तुओं एवं पत्तों का झड़ना, जंगली शाल, घास और पलाश में धँसना आदि जंगली पारिस्थितिक तंत्र को भी प्रस्तुत किया है।

आज के मानव ने अपने स्वार्थ के लिए जंगलों का विनाश करना शुरू कर दिया है। इससे जंगली आवासीय व्यवस्था का विनाश हुआ है। इसमें चित्रित जंगल की जड़ता के माध्यम से कवि जंगल बर्बादी की कगार पर पहुँचने का संकेत दिया है। दिन-प्रतिदिन नष्ट हो रहे सतपुडा के जंगल कवि को अत्यंत प्रिय है। प्राचीन सभ्यता के मानव पूर्णतः प्रकृति पर निर्भर है। गोंड जैसे आदिवासी जाति की जीवन-शैली भी पारिस्थितिक नियमों के अनुसार हैं। इसके माध्यम से कवि ने मानव एवं पर्यावरण की सांस्कृतिक संबंधों को प्रस्तुत किया है। कवि भवानीप्रसाद मिश्र कहते हैं -

"इन वनों के खूब भीतर,
चार मुर्गे, चार तीतर,
पालकर निश्चिंत बैठे,
विजन वन के बीच पैठे,
झोंपडी पर फूस डाले
गोंड तगडे और काले।"[८३]

आदिम मानव जीवजंतुओं को शिकार करने के साथ-साथ प्रकृति पूजा भी करते हैं। कवि के लिए वन क्षीर-सागर है। नदी, निर्झर, वन, नाले आदि पारिस्थितिक स्रोत मानव विकास की अनेक कहानियाँ प्रस्तुत करते हैं। प्रकृति से कटाव विनाश का लक्षण है। इससे होनेवाले पारिस्थितिक प्रकोप आज के मानव दिन-प्रतिदिन झेल रहे हैं। जंगलों का विनाश भी बढ़ते हुए प्रदूषण का मुख्य कारण है। उस समय गंगा, जमुना और हिमालयी क्षेत्रों के जंगलों का कटाव अंग्रेज़ों द्वारा किया गया था। इसके प्रति कवि भवानीप्रसाद मिश्र सचेत हैं। पूँजीवादी-साम्राज्यवादी

शक्तियाँ हाथ से हाथ मिलाकर पारिस्थितिकी को भी तबाह किए हैं। इस ओर सरकार भी उदासीन है।

भारतीय संस्कृति में सबसे अधिक महत्व फूल का है। कवि के लिए कमल के फूल केवल भूल है। 'कमल के फूल' नामक कविता में फूल के महत्व की ओर संकेत करते हैं। धरती के सभी जीवजंतु एक दूसरे पर आश्रित है। जिस प्रकार पंछी पेड़ पर आश्रित है उसी प्रकार मानव पर्यावरण पर आश्रित है। प्रकृति का चक्र ही जीवन है। क्रियाशील पारिस्थितिक तंत्र में जैविक एवं अजैविक नियम भी सम्मिलित है। इस तंत्र को नियंत्रित करनेवाले सभी पारिस्थितिक जीव-जंतुओं के अन्योन्याश्रित संबंधों को कवि ने 'धरती के रिश्ते' नामक कविता में प्रस्तुत किया है। सात सागर एकाकार होकर किसी एक दिन प्रलय होगा। इसमें सब मिट जायेंगे। पंच तत्वों के विनाश का संकेत 'प्रलय' नामक कविता में मिलता है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी से उत्पन्न विध्वंसक पारिस्थितिक विभीषिकाओं का बयान है दूसरा सप्तक में संकलित 'प्रलय' नामक कविता।

धरती की रक्त-धमनी एवं सांस्कृतिक संवाहिका है नदी। भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में नदी देवता है। जीवन की रक्त प्रवाहिणी नाडि नदियों पर आज सबसे अधिक आक्रमण किया जा रहा है। नदी प्रदूषण एक तरह सांस्कृतिक प्रदूषण भी है। यमुना को दिल्ली के गंदा नाला कहा जा सकता है। शव एवं अस्थियों को नदी में बहाने से नदी प्रदूषित हो रहा है। यह प्रथा इंद्रप्रस्थ के ज़माने से लेकर आज भी हो रहा है। 'जमुना' नामक कविता में कवि नदी की नये-पुराने दर्द को चित्रित करना चाहता है। नर्मदा तप एवं टकराव की दीप्तियमान धारा है। इसका इतिहास परशुराम से जुडा हुआ है। विभिन्न गैसें, ज़हरीली अपशिष्ट आदि भी नदी-जल को विषाक्त कर देता है। 'बीमार किनारे नदियों के' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है -

> "बीमार किनारे नदियों के
> विषधर पानी
> नरसल / झाड़-झंखाड़ रेत-भर
> फैले हैं।"[८४]

जीवन की हरियाली नदी आज अवरुद्ध हो रही है। कवि को सूखते नदी एवं पौधों की चिंता है। कवि के लिए वर्षा पारिस्थितिकी की सर्वहिताय रूप है। भवानीप्रसाद मिश्र के काव्य को समझने के लिए भारतीय संस्कृति के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को थाहना अनिवार्य है।

पारिस्थितिक प्रदूषण का महत्वपूर्ण कारण पेड़ों का कटाव हैं। पारिस्थितिक संतुलन एवं स्वच्छता के दृष्टिकोण से वनों का संरक्षण आवश्यक है। बड़ी-बड़ी इमारतों, कागज़ एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के निर्माण करने के लिए दिन-प्रतिदिन वृक्षों को काटकर जंगलों को साफ कर रहे हैं। एक वृक्ष प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कई लाख रूपयों का लाभ के साथ-साथ मानव जाति को ऑक्सिजन छोड़कर पर्यावरण को स्वच्छ करवाते हैं। इसका संकेत भी उनकी कविता में देख सकते हैं। 'दो टुकडे देस दस टुकडे जनम दिन' नामक कविता में पेडों की कटाई के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हुए कवि आज के मानव से पूछते हैं -

"सुनाई नहीं पड़ रही है तुम्हें
महाराष्ट्र से उडीसा तक
फैले हुए सतपुडा के
कटते हुए पेडों की आवाज़।"[८५]

कवि इस कविता में पेडों की कटाई से होनेवाले पारिस्थितिकीय असंतुलन की ओर संकेत करते हैं। कारखानों की जगह पर खेतों के निर्माण पर बल दिया है। प्राणी मात्र का अस्तित्व वनों पर टिका रहता है। भवानीप्रसाद मिश्र की कविताओं की वैचारिक पृष्ठभूमि है पारिस्थितिकी। इससे मानव का सीधा-सादा संबंध रहता है। पारिस्थितिकी को गतिशील बनाने में कीड़े-मकडे से लेकर सभी जीव-जंतु एवं वनस्पति की भूमिका महत्वपूर्ण है। जीवों के अस्तित्व का मूलाधार पारिस्थितिकी आज तेज़ी से प्रदूषित हो रहा है, जिसका प्रमुख कारण मानव भी है। आज के मानव न्यूक्लियर या रेडियो-धर्मी विस्फोटों के परीक्षण कर पानी और हवा जैसे पारिस्थितिक संघटकों को प्रदूषित करते हैं। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पति जगत् पर भी इसका हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। 'कुछ भी नहीं बन पाया' नामक कविता में कवि पारिस्थितिक विनाश की प्रतिक्रिया रेखांकित करते हैं -

“पानी को और हवा को
दूषित करना इसके
उद्योग हैं स्नेहगीतों से नहीं
विस्फोटों से वातावरण को
भूषित करना।”[८६]

कवि भवानीप्रसाद मिश्र ने अपनी कविताओं में मानव एवं पर्यावरण के बीच के आत्मीय संबंधों का उल्लेख किया है, साथ ही वर्तमान पारिस्थितिक संकट के प्रति कवि अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। कवि अपनी कविताओं में विज्ञान एवं सूचना-प्रौद्योगिकी की विध्वंसक विभीषिकाओं की ओर संकेत करते हुए पारिस्थितिक नियमों के अनुरूप जीवित करने का आह्वान करते हैं।

२.३.७.८. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

आदिम सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है नदी। किसी भी देश की संस्कृति-परपरा एवं इतिहास के निर्माण में नदियों का योगदान महत्वपूर्ण है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का मूलाधार भी है। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने अपनी लंबी कविता ‘कुआनो नदी’ में नदी को केंद्र बनाया है। साथ ही कवि ने ‘नदियाँ साफ करो’ का नारा भी दिया है। भारत के नदियों में प्रतिवर्ष बाढ आती है। इन नदियाँ बाढ़ में जन-धन का बहुत बड़ा विनाश करती है। इस कविता में तीन खण्ड है - कुआनो नदी, कुआनो नदी के पार और कुआनो नदी खतरे का निशान। जीवन तथा मृत्यु के घाट है नदी। मानव एवं नदी की आत्मीय संबंध को भी कवि ने प्रस्तुत किया है। नदी-विनाश मूलतः सांस्कृतिक विनाश भी है। बाढ़ जैसे पारिस्थितिक प्रकोप को प्रस्तुत कर कवि ने मानव की अमानवीय एवं अन्यायपूर्ण विसंगतियों को खोलने का प्रयास किया है।

इस कविता के आरंभ में कवि ने बाढ़ युक्त नदी को प्रस्तुत किया है। बाढ के साथ-साथ एक गाँव का विनाश भी हुआ है। इस कविता में एक ग्रामीण संस्कृति का पतन नदी से जुडा है। यह नदी ग्रामों को बाढ से डुबोती है। इस नदी की बाढ़ को कवि भी झेल रहा है। इसका सही अंकन कविता में है। चारों ओर विपत्ति

फैलाकर नदी जाती है। भारत के आसम, बिहार प्रदेशों में प्रतिवर्ष आनेवाले बाढ़ बहुत बडे क्षेत्र में फैलकर जन-धन की हानि करता है। कवि ने यहाँ बाढ़ जैसे पारिस्थितिक प्रकोप से उत्पन्न संपूर्ण पारिस्थितिक विभीषिकाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। बाढ़ ने पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, मानव सहित सभी जीव-जंतुओं को प्रभावित किया है। बाढ से उत्पन्न गरीबी, भूखमरी, क्षोभ आदि का भी उल्लेख किया है। बाँध बनाकर बाढ़ की समस्या को समाधान करने का प्रयास भी किया है। गाँवों के पतन पर संवेदना प्रकट करते हुए कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कहते हैं -

> "एकाध पुश्ते टूटे हैं
> एकाध गाँव डूबे हैं -
> नक्सलबाड़ी, श्रीकाकुलम, मुसहरी
> पानी कछार में फैल
> सूखी धरती और सूखे दिलों में जज़्ब हो गया है।"[८७]

'जंगल के दर्द' में कवि पारिस्थितिकी से आत्मीय संबंध व्यक्त करता है। भेडियों, तेंदुओं, कुत्तों, चिड़ियों आदि अनेक जानवरों से भरे हैं जंगल। जंगली जानवर तेंदुआ के लिए नदी उसका अतीत, वर्तमान और भविष्य भी है। इस संग्रह के दूसरे भाग में जंगलीय पारिस्थितिकी की विवरण एवं व्यवहार प्रस्तुत किया है। तेंदुआ, घडियाल जैसे जंगली जानवर मानव के लिए घातक है। फिर भी पारिस्थितिकी का संतुलन को बनाये रखने में इन सभी जंगली जानवरों का संरक्षण अत्यावश्यक है।

जंगलों को साफ करने के साथ-साथ जंगलीय जानवरों की आवास-व्यवस्था का भी विनाश हुआ है। आज अनेक जंगली जानवरों का अस्तित्व मौत के कगार पर है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ पारिस्थितिकी पर हस्तक्षेप दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। इसका व्यंग्यात्मक संकेत भी उनकी कविता में मिलते हैं। 'खूँटियों पर टंके लोग' में संकलित कविता है 'पेड़ प्रेम'। इसमें कवि ने पेड़-पौधों से पक्षियों के घनिष्ठ संबंध को रेखांकित किया है। पारिस्थितिकी की अस्तित्व की रक्षा के लिए पेड़-पौधे एवं पक्षियों का योगदान उल्लेखनीय है।

२.३.८. समकालीन कविता (सन् १९९० से पूर्व)

भूमण्डलीकरण एवं बाज़ारवाद ने विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से संपूर्ण विश्व को एक ग्लोबल गाँव बना दिया है। इस गाँव में पारिस्थितिक समस्या खूब पंख फैला रही है। बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार प्रकृति का स्वरूप भी दिन-प्रतिदिन बदल रही है। इससे उत्पन्न हादसे एवं उसके दुष्परिणाम का विचार समकालीन कविता में द्रष्टव्य है। अरुण कमल, ज्ञानेंद्रपति, बलदेव वंशी, राजेश जोशी आदि कई कवियों के लिए आज की पारिस्थितिक विडंबनाओं के प्रति आवाज़ उठाने का एक अस्त्र है कविता। यहाँ विशेषकर सन् १९९० के पूर्व की कविताओं के संदर्भ में अध्ययन प्रस्तुत है।

मनुष्य लगातार विकास की ओर बढ़ रहे हैं। उसी तरह पारिस्थितिक संतुलन भी बिगड़ रहा है। मिट्टी, पानी, नदी, खेत आदि की बात करनेवाले कवि अरुण कमल की दृष्टि में पारिस्थितिकी के प्रति चौकन्नी है। गंगा, सिन्धु, यमुना आदि नदियाँ आज प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन के कारण संकट में है। प्रदूषित गंगा जल में आज विभिन्न गैसें ज़हरीली धातुएँ और कई तरह के हानिकारक जीवाणु मिल जाते हैं। आज के विभिन्न बहुराष्ट्रीय उद्योगों ने गंगा को एक गंदे नाले के रूप में बदल दिया है। 'गंगा को प्यार' नामक कविता में अरुण कमल बताते हैं कि आज गंगा के ऊपर उड़नेवाले पक्षी भी विष की धाह से झुलस जाते हैं। बहुराष्ट्रीय उद्योगों ने गंगा के द्वार पर विषपात्र रख दिया है। वाराणसी से गुज़रनेवाले प्रदूषित गंगा जल का हानिकारक प्रभाव गाय, पशु और पक्षी पर भी पड़ता है। साथ ही प्रदूषित जल प्रवाह से मिट्टी भी प्रदूषित हुई है। भारत के लिए सबसे बडी विडंबना है गंगा प्रदूषण। कवि के लिए गंगा के बिना भारत के अस्तित्व के बारे में सोचना असंभव है। मानव जीवन गंगा के किनारे से ही शुरू हुआ। हमारे विराट् सांस्कृतिक एवं पारिस्थितिक जीवन का प्रतीक है गंगा नामक पुण्य नदी। इस नदी संकटग्रस्त होने का अर्थ ज़िंदगी संकटग्रस्त होना है। आज के आदमी गंगा को प्यार नहीं करते हैं। उनके लिए गंगा एक गंदे नाला है। गंगा की गोद में से अनेक सभ्यताएँ पल्लवित हुई हैं। जानलेवा आदमियों में आज कोई भी गंगा की तारा नहीं है। मानव एवं पर्यावरण पर होनेवाले पूँजीवादी षड्यंत्रों के प्रति क्षोभ व्यक्त करते हुए कवि कहते हैं -

“षड्यंत्र
गंगा के साथ भी षड्यंत्र
हिमालय के साथ
पृथ्वी नक्षत्र समस्त मण्डल के साथ।”[८८]

‘उम्मीद’ नामक कविता में बाढ, तूफान एवं अकाल के बाद होनेवाले पारिस्थितिक विनाश एवं सभी जीव-जंतुओं के जीवन संचार को प्रस्तुत किया है। उपभोक्तावादी एवं पूँजीवादी सभ्यता प्राकृतिक संसाधनों को दोहन कर पारिस्थितिकी को दिन-प्रतिदिन क्षत-विक्षत कर रही है। इक्कीसवीं सदी में हर नदी का घाट श्मशान एवं हर बगीचा कब्रिस्तान बन रहा है। इसका संकेत भी कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से दिया है। पेड़ भूमण्डलीय तापक्रम एवं जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करते हैं। इसके बिना मानव सहित अन्य जीव-जंतुओं का अस्तित्व असंभव है। पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में वृक्षों के महत्व को प्रस्तुत करते हुए कवि कहते हैं -

“एक दिन में वृक्ष ठूँठ हो जाता है।”[८९]

कवि अरुण कमल ने अपनी कविताओं के माध्यम से सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में होनेवाले पारिस्थितिक संबंधों के महत्व को प्रस्तुत किया है। मानव सहित सभी जीव-जंतुओं की नींव है पारिस्थितिकी। इसका पारिस्थितिक संबंध धरती से आकाश तक फैला है। समय बदलने के साथ-साथ पारिस्थितिक मूल्य भी बदल रहा है। आनेवाली सदी में मानव एवं पर्यावरण पर एक सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करना चाहिए। यह नहीं है तो पृथ्वी पर जीवन की अस्तित्व की कल्पना असंभव है।

पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, फल-फूल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों के प्रति सचेत कवि हैं राजेश जोशी। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति के साथ एक आत्मीय संबंध स्थापित करते हैं। ‘पेड़ की तरह’ नामक कविता में कवि ने पेड़ और जंगल की अटूट रिश्ता को प्रस्तुत किया है। इन दोनों का संबंध एक दूसरे पर भी निर्भर है। पेड़ के बिना जंगल का अस्तित्व जंगल के बिना पेड़ का अस्तित्व नहीं है। जंगल की कटाव पेड़ों के अस्तित्व के लिए घातक बन जाते हैं। आज जंगल और पेड़ दोनों अपना अस्तित्व खो रहा है। इस कविता में जंगल चौड़ा होकर नाराज भी है।

भोपाल गैस त्रासदी का संकेत उनकी ‘भोपाल शोकगीत’ सीरीज़ की कविताओं में मिलता है। १९८४ की यह घटना ने भोपाल को हिरोशिमा और नागसाकी की तरह तहस-नहस कर दिया था। यूनियन कार्बाइड फैक्टरी से निकली ज़हरीली गैस रिसाव ने वहाँ की धरती को बाँझ बना दिया है। इसका दुष्प्रभाव वहाँ आज भी हम देख सकते हैं। कवि राजेश जोशी बताते हैं कि पेड़-पौधे, पहाड़, सब्जियाँ, वनस्पति, जीव-जंतु, जल, मानव जैसे सभी जड एवं चेतन तत्वों को उस विषैली रात ने डस लिया है। इसलिए बसंत हमें मात्र मत छुओ। मिथाइल आइसो साइनेड गैस ने पानी के साथ संयोग कर वहाँ की पारिस्थितिकी में तांडव नृत्य कर सभी पर्यावरणीय तत्वों को विध्वंस कर दिया है। वहाँ एक वृक्ष भी नहीं है। यह देखकर बसंत भी सहमा और शंकित हो गया है। इससे पहले इतना लज्जित और थके हुए वसंत को किसी ने नहीं देखा होगा। क्योंकि गैस रिसाव की ज़हरीली हवा ने प्रकृति को भी भौचक्की बना दिया है -

“कोई वृक्ष नहीं जहाँ
एक हरी कोंपल की तरह फूट सके वह
कोई वृक्ष नहीं जिसे फूलों से लादकर
विस्मित कर डाले वह सबको !!”[१०]

कवि राजेश जोशी मछलियों से पूछते हैं कि तुम्हारा घर सूखते जा रहे हैं। तुम कहाँ जाओगी ? बाज़ारीकरण एवं नव-उपनिवेशीकरण ने सभी पर्यावरणीय तत्वों को बदल दिया है। इसलिए कवि कहते हैं कि यह समय नदी, समुद्र, पेड़, पहाडों का नहीं बाज़ारों का है। आर्थिक नीति पर आधारित बाज़ारीकरण की दृष्टि इन सब पर पडा है। उनके लिए सभी प्राकृतिक संसाधन बिकने का साधन बन गया है। इसका संकेत भी उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है। कवि कहते हैं कि आज आकाश एक उदासी का नाम हो गया है। पहाडियों और वृक्षों की हरीतिमा अंधकार में डूब चुकी है। आज हरे पेड़ और बरसनेवाले प्राकृतिक वर्षा केवल तस्वीर में मात्र ही देख सकते हैं। सांस्कृतिक प्रदूषण एवं धरती के अस्तित्व पर आनेवाले खतरों की अभिव्यक्ति राजेश जोशी की कविताओं में देख सकते हैं।

चंद्रकांत देवताले की कविताओं में मानव एवं पर्यावरणीय तत्वों का रागात्मक या आत्मीय संबंध देख सकते हैं। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखना आज अनिवार्य हो गया है। संरक्षण के नाम पर ही आज के मानव ने पर्यावरणीय संसाधनों को लूट खसोट कर रहे हैं। इसकी अभिव्यक्ति चंद्रकांत देवताले की 'लकड़बग्घा हँस रहा है' में संकलित कविताओं में देख सकते हैं। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में पेड़ की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसको ध्यान में रखते हुए कवि ने अपनी कविता में पेड़ की महत्ता को प्रतिपादित किया है। आज के मानव ने बेरहमी से इन हरे-भरे वृक्षों को अंधाधुंध काटा जा रहा है। पर्यावरण के प्रति चिंतित कवि के लिए यह कटाव भी चिंतन का विषय बन जाता है। कवि बताते हैं कि पेड़ की गरिमा मानव से बहुत ऊँचा है। आज के मानव ने पेडों की पसलियों तक को वसूल कर उनके काठ की चिडियों को दीवार पर ठोंक देता है। यह एक मानवीय क्रियाकलाप है, लेकिन पेड चिडियाओं को अपने कंधे पर बिठलाते हैं। यहाँ पेड की गरिमा बहुत बडा एवं अतुलनीय है। कवि चंद्रकांत देवताले के शब्दों में -

"पर आदमी पेडों की पसलियों
तक से वसूल करता है
और काठ की दो तीन चिडियाँ
सफेद दीवार पर ठोंक देता है
जबकि पेड चिडियाओं को
निरंतर अपने कंधों पर / बिठलाते हैं।"[११]

वैज्ञानिक प्रगति एवं औद्योगिकीकरण ने जिस प्रकार पर्यावरणीय संपदाओं का शोषण कर रहा है, उसका ऐतिहासिक आयाम बलदेव वंशी की कविताओं में द्रष्टव्य है। उनके पर्यावरण विषयक कविताओं का संकलन है 'हवा में खिलखिलाती लौ'। आज की महानगरीय संस्कृति ने पर्यावरण में असंतुलन की स्थिति पैदा कर दी है। अर्थ प्रदान समाज से प्रभावित लोगों ने अपनी इच्छानुसार लाभ कमाने के लिए आवश्यकता से अधिक प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया गया है। इसके परिणाम स्वरूप होनेवाले पर्यावरणीय विनाश को कवि ने इस संकलन की कविताओं में प्रस्तुत किया है। धरती के अनुरागी कवि हैं बलदेव वंशी। इसलिए प्राकृतिक विनाश के बारे में सोचना कवि को अत्यंत कठिन है। कवि बताते हैं नये-नये

पक्षी यहाँ आकर किसी अनजाने दिशाओं की ओर गुज़र जाते हैं। क्योंकि उनको रहने के लिए वृक्ष एवं जंगल नहीं है। आज के मानव ने जंगल एवं वृक्षों को काटकर पशु-पक्षी की आवास व्यवस्था को भी नष्ट कर दिया है। वृक्षों को काटने के पश्चात् उनके रोदन कवि चारों और सुन रहे हैं। इससे उत्पन्न दर्दनात्मक अभिव्यक्ति को कवि बलदेव वंशी ने इस प्रकार लिखा है -

"असमय काटे गिराये पेडों की रूहें
चिल्ला रही है बंदी हवा के साथ
और उनके रोने की आवाज़ें
उदासी बनकर / सब कहीं छितरा रही हैं।"[९२]

कवि बलदेव वंशी ने अपनी कविताओं के माध्यम से आज के पारिस्थितिक संघर्ष के खिलाफ आवाज़ उठाने की प्रेरणा दी है।

मानव-जीवन और प्रकृति के बीच के अन्योन्यता को तलाश करनेवाले कवि हैं भगवत रावत। कवि पशु-पक्षी, नदी-नाले, खेत-जंगल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों से जुड़ना चाहते हैं। भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा में धरती माता एवं आकाश पिता के समान हैं। आज के मानव के उपनिवेशवादी लोभवृत्ति ने इन सबको प्रदूषित एवं नष्ट कर दिया है। कवि भगवत रावत के लिए प्रकृति घर है। क्योंकि इसके बिना जीना सभी पारिस्थितिक तत्वों को मुश्किल हो जायेगा। कवि अपनी कविताओं में बताते हैं कि आज के मानव को प्रकृति से कुछ सीखने की क्षमता आवश्यक है। कवि मानते हैं कि मानव का स्थान फूल, पत्ती, जंगल, खेत, नदी, पहाड जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों से ऊपर है। आज चिडियाओं को बैठने के लिए न हरे-भरे पेड है, उड़ने के लिए न स्वच्छ आसमान है। कवि की राय में यह सब प्रदूषण के चंगुल में फँस गया है। आज चिडिया भी पृथ्वी में डरकर आती है। हमारे विषैली प्रदूषण ने उनके अस्तित्व को भी संकटग्रस्त बना दिया है। कवि भगवत रावत बताते हैं कि -

"मैं देखता हूँ कि वे / अक्सर आती हैं
बेहद डरी हुई / पंख फड़फड़ाती
आहत
या अक्सर मरी हुई।"[९३]

भगवत रावत की कविताओं में सूखे पोखर एवं नदी, मुरझाये सिकुडे गाल, चिडिया, पेड जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व अपनी दुःखद या त्रासद कहानी बताते हैं। नव-उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद से प्रभावित आज के मानव ने प्रकृति पर अपना वर्चस्व स्थापित किया है। इसका संकेत 'समुद्र के बारे में' संकलित कविताओं में द्रष्टव्य है। नगरीकरण ने संपूर्ण पारिस्थितिक एवं सामाजिक परिवेश को भी गड़बड़ कर दिया है। महानगरीय त्रासदी से प्रभावित कवि भगवत रावत ने अपनी कविताओं में गाँव की आँचलिकता को पूरी तरह समेटने का प्रयास किया है।

ग्रामीण एवं प्राकृतिक परिवेश के कवि हैं रामदरश मिश्र। मानव-पर्यावरणीय संबंधों में आये बदलाव से उत्पन्न समस्याओं का संकेत उनकी कविताओं में देख सकते हैं। कवि की राय में धरती गुरुजी एवं गोमाता है। स्वच्छ धरती वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के लिए अनिवार्य है। आज के मानवीय क्रियाकलापों ने पर्यावरण के सभी तत्वों को प्रदूषित कर दिया है। कवि बताते हैं कि कारखानों से निकलनेवाली सैकडों चिमनियों का धुआँ हमारे प्रकृति प्रदत्त अंतरीक्ष को भी प्रदूषित कर डाला है। जल, थल, मिट्टी को प्रदूषित करनेवाले औद्योगिक क्रियाकलापों के बारे में सोचना रामदरश मिश्र जैसे संवेदनशील कवि के लिए दुःखद बात है।

निराला के समान कवि रामदरश मिश्र भी 'बादल और सागर' नामक कविता में बादल को बरसने के लिए बुलाते हैं। सभी जैविक तत्व जलधर की प्रतीक्षा कर रहे हैं। क्योंकि बिना वर्षा से हमारी प्यारी धरती भी प्यास से तड़प रही है। इसलिए जलधर से निवेदन करते हैं कि यहाँ आकर धरती की प्यास बुझाओ। वास्तव में जल-तत्व के प्रति कवि की रुझान बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त कवि ने ज़हरीली आँधी, दावानल जैसे प्राकृतिक प्रकोप से उत्पन्न दुष्परिणामों का भी संकेत दिया है। कवि बताते हैं कि मानव की विषैली सोच ने दक्षिण-अफ्रीका की काली-काली नदियों को भी प्रदूषित कर दिया है। गोरा-गोरा ज़हर पानी में घुल-मिलाकर वहाँ की असंख्य जीवों की मृत्यु का कारण बन जाती है। आज के नव-उपनिवेशवादी एवं साम्राज्यवादी शक्तियों की दृष्टि हमारे अमूल्य प्राकृतिक संसाधनों पर है। मुनाफे पर आधारित इन शक्तियों ने दिन-प्रतिदिन बहुमूल्य प्राकृतिक चीज़ों को शोषण कर रहे हैं। उन्होंने हमारे स्वच्छ भारत को कचरे का कूडा बना दिया है। आज चारों ओर कूडे का

ढ़ेर मात्र ही है। विदेशों से आया प्लास्टिक की सदाबहार ने जल, थल, वायु जैसे हमारे पर्यावरण के चारों ओर प्रदूषित कर दिया है। आज दिन-प्रतिदिन असंख्य प्राकृतिक संसाधनों का भी आयात हो रहा है। आज़ादी के बाद के काल आयात एवं निर्यात काल है। इन शक्तियों ने धरती की साँसों तक पी लिया है। प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से उत्पन्न पारिस्थितिक असंतुलन का संकेत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"अपनी धऱती की साँसों को
पी लिया है साँपों ने
उसे समुद्रों-पार से
ऑक्सिजन दिया जा रहा है
हमारी धूप को लकवा मार गया है।"[१४]

प्रकृति के प्रति रागात्मक लगाव भी उनकी कविताओं में देख सकते हैं। 'वसन्त' नामक छोटी सी कविता इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। महानगरीय परिवेश में जीनेवाले लोगों को कोयल की आवाज़ अपरिचित है। महानगर में कोयल को बैठने के लिए डाल नहीं है। कोयल भी अपनी सहमी निगाहों से चारों तरफ देखकर एकाएक उड़ गयी है, साथ ही गाना भूल गयी है। यहाँ कवि ने प्रकृति एवं मानव के रिश्तों में घटित दरार को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उन्होंने अपनी 'समय देवता' नामक लंबी कविता में बाढ, तूफान से उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत करने के साथ-साथ ओला, पाला एवं सूखे से उत्पन्न खेती विनाश का भी संकेत दिया है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक पैदा करने में रामदरश मिश्र की कविताएँ नितांत सक्षम हैं।

नदी, पर्वत, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, जंगल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को देवी प्रसाद मिश्र ने अपनी कविता का विषय बनाया है। प्राचीन काल के मानव पूरी तरह से प्रकृति पर आश्रित था, लेकिन विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से आज के मानव ने प्रकृति को अपना अधीन बना लिया है। सभ्यता के विकास ने मानव एवं प्रकृति के अंतर्संबंधों को किस तरह बदल दिया है ? इसके प्रति चिंतित कवि है देवीप्रसाद मिश्र। सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में नदी का योगदान अतुलनीय है। लेकिन आज यमुना, सरस्वती एवं भागीरथी नदियाँ विलुप्ति की कगार पर हैं। इसकी

मृत्यु का संकेत 'जाओ', 'सरस्वती' नामक कविताओं में मिलता है। नदी विलुप्त होने का अर्थ है मानवीय सभ्यता संकटग्रस्त होना। नदी कहाँ गयी है ? कवि को मालूम नहीं है। आज उनका नामोनिशान भी मिट गया है। सभ्यता के विकास ने सभी नदी को रेत बना दिया है। कवि देवीप्रसाद मिश्र अपनी कविताओं में नदी की वर्तमान स्थिति पर आशंका प्रकट की है -

"वह नदी नहीं दीखती
कोई कहता है वह नदी यहाँ है
कोई कहता है वह नदी वहाँ है
कोई नहीं बता पाता वह नदी सचमुच कहाँ है !"[१५]

पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में पेड की भूमिका बहुआयामी है। लेकिन आज के इस प्रकृति में एक हरे पेड भी नहीं है। कवि की राय में हरा पेड गुरु के समान है। इसको काटना गुरु को मारने के समान है। देवी प्रसाद मिश्र ने यहाँ पेड़-पौधों को गुरु मानकर उसके प्रति श्रद्धा भाव व्यक्त की है। इसका संकेत उनकी 'अंतर्संबंध' नामक कविता में मिलता है। आज के सभी लोग ऐसा किया तो भविष्य में कोई भी पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न नहीं होगी।

प्रकृति के साथ मानव का संबंध जन्मजात है। उपभोक्तावादी एवं पूँजीवादी सभ्यता से प्रभावित मानव दिन-प्रतिदिन नैसर्गिक पर्यावरण से दूर होता जाता है। इसका दुःखद अभिव्यक्ति अशोक वाजपेयी की कविताओं में मिलता है। कवि ने अपनी कविताओं में पृथ्वी को एक तत्व के रूप में ग्रहण कर उसके वैभव को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। कवि बताते हैं कि फूल, पत्ती एवं वृक्ष पृथ्वी की आत्मा है। इसके बिना की पृथ्वी कवि के लिए कल्पनातीत है। धूप, आकाश, पेड, चिडिया, धरती जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों के प्रति कवि की चिंता हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। आज इन सभी तत्व प्रदूषण के चंगुल में फँसकर मर रहे हैं। शहरी सभ्यता ने गेहूँ-धानों के खेत को मार दिया है। कवि कहते हैं कि मानव का जीवन प्रकृति पर निर्भर है। यह पृथ्वी हमारे लिए मात्र ही है। मानव के अस्तित्व के लिए पृथ्वी का संरक्षण अनिवार्य है। कवि अपनी कविताओं में प्राकृतिक तत्वों के साथ एक तादात्म्य संबंध स्थापित करते हैं। गिलहरी, पतंग, तितली, धूप, आकाश, चिडिया,

खेत आदि सब उनकी कविता का विषय बन जाते हैं। अशोक वाजपेयी की कविताओं का मुख्य केंद्र बिंदु पृथ्वी है। कवि अपनी कविताओं में वनस्पतियों, समुद्रों और लोगों से घिरी हुई पूरी पृथ्वी की बात बताते हैं। कवि के शब्दों में -

"मुझे चाहिए पूरी पृथ्वी
अपनी वनस्पतियों समुद्रों
और लोगों से घिरी हुई।"[९६]

मानव एवं पृथ्वी की आदिम अंतरंग संबंधों की पहचान उनकी कविताओं में देखने को मिलता है। कवि अशोक वाजपेयी ने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति की ओर वापस आने की प्रेरणा दिया है।

केदारनाथ सिंह की अधिकतर कविताएँ ज़मीन, आसमान, चिडिया, पेड, मौसम आदि पर्यावरणीय तत्वों से संबंधित है। मानवीय एवं प्राकृतिक क्रियाकलापों ने मछली, कछुए, बत्तख, चींटी जैसे संपूर्ण प्राणी जगत् के जीवन चक्र को बदल दिया है। उनकी कविताओं से पता चलता है कि पारिस्थितिक तंत्र के सभी जैविक एवं अजैविक तत्वों के प्रति चिंतित कवि हैं - केदारनाथ सिंह। 'धानों का गीत' नामक कविता में कवि किसानी जीवन में होनेवाले पर्यावरण के योगदान की बात बाताते हैं। कवि के लिए प्रकृति कविता लिखने की प्रेरणा स्रोत है। प्रकृति मानव रहित सभी जीव-जंतुओं को अस्तित्व देती है। प्रकृति और मानव एक दूसरे पर भी निर्भर है। इसका संकेत भी उनकी कविताओं में देख सकते हैं। 'अकाल में सारस' में संकलित कविता में कवि ने पृथ्वी के विनाश की आशंका व्यक्त की है। संपूर्ण प्राणी जगत् एवं जीव जगत् पृथ्वी की सृष्टि चक्र को संचालित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए कवि बताते हैं कि हरे पत्ते को भी मत तोड़ना है क्योंकि उनको तोड़ने से पेड़ को पीडा होती है। कवि केदारनाथ सिंह ने यहाँ पत्ते तोडने से उत्पन्न पेड़ के दर्द के बारे में सोचते हैं -

"हरा पत्ता / कभी मत तोड़ना
और अगर तोड़ना तो ऐसे
कि पेड़ को ज़रा भी
न हो पीडा।"[९७]

उपभोक्तावादी एवं पूँजीवनादी सभ्यता ने प्राकृतिक संसाधनों को भी वस्तु के रूप में बदल दिया है। प्रकृति के सभी साधन अंत में बाज़ार में पहुँचते हैं। खलिहान से बाज़ार के लिए उठाए गए दाने कहते हैं कि हम मंडी नहीं जायेंगे। कवि ने यहाँ प्राकृतिक संसाधनों पर होनेवाले बाज़ारोन्मुख सभ्यता के दबाव को व्यक्त की है। शहरीकरण से प्रभावित आज के मानव दिन-प्रतिदिन देखनेवाले पक्षियों का नाम भी भूल गया है। प्रकृति से विच्छिन्न हो जाना कवि के लिए अत्यंत दुखद बात है। 'पानी में घिरे हुए लोग' नामक कविता में कवि ने बाढ़ से उत्पन्न जनता के संघर्ष को प्रस्तुत किया है। इससे अपार धन-जन की क्षति होने के साथ-साथ सभ्यता एवं संस्कृति भी बर्बाद हो जाती है। आज के लोग पानी के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। यह देखकर कवि बताते हैं कि बिना संघर्ष से पृथ्वी पर पानी भविष्य के बारे में सोचना है। कवि की राय में गंगा नदी मात्र नहीं है, भारतीय संस्कृति के अविभाज्य घटक है। गंगा की आत्मीय महत्ता का वर्णन 'बालू का स्पर्श' नामक कविता में देख सकते हैं। प्रकृति की छोटी-छोटी वस्तुओं एवं घटनाओं की अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में मिलती है। कवि केदारनाथ सिंह ने अपनी कविताओं में एक वैज्ञानिक की तरह प्रकृतिवादी तत्वों को प्रस्तुत किया है। उनके प्रकृतिवादी तत्व आज देश-विदेश में चलनेवाले ग्रीन मूवमेंट की भावुकतामूलक प्रवृत्तियों के समान है।

पशु-पक्षी, जंगल, पेड़, नदी और मानव आदि के बीच के अन्योन्याश्रित संबंध मंगलेश डबराल की 'पहाड पर लालटेन' में संकलित अधिकांश कविताओं में किसी न किसी रूप में देख सकते हैं। कवि के लिए प्रकृति कविता लिखने की प्रेरक वस्तु भी है। इसलिए उन्होंने मानवीय या औद्योगिक क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप प्रकृति में घटित छोटी-सी छोटी घटनाओं को भी अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है। नदी के प्रति कवि की दृष्टि आस्थावादी है। हमारी सभी पवित्र पतित पावन नदियाँ विलुप्त होकर आज रेती हो गयी है। आज नदी स्थान लोगों के लिए सोने की जगह बन गया है। अब नदी से रेती की आवाज़ मात्र ही सुनायी देती है, पानी की कलरव शब्द नहीं है। इन सबकी सफल अभिव्यक्ति 'यहाँ थी वह नदी' नामक कविता में मिलता है। मंगलेश डबराल जैसे संवेदनशील कवि के लिए नदी की यह बदलाव असहनीय बात है। आज प्रकृति प्रदत्त जंगलों के स्थान पर कांक्रीट इमारत मात्र ही है। आज जंगल में लगातार कुल्हाडियाँ चल रही हैं, इसके कारण जंगल भी गायब हो

रहा है। भविष्य में जंगल एक स्मृति चिह्न मात्र ही हो जायेगा। इसका संकेत भी उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है। पेड़ के बिना मानव के अस्तित्व के बारे में सोचना असंभव है। इसके संरक्षण के प्रति सचेत कवि हैं मंगलेश डबराल। आज सबको हित करनेवाले पेड़ भी प्रदूषण के चंगुल में फँस गया है। साथ ही मानव अपनी आर्थिक आपूर्ति के लिए पेड़ को काट देते हैं। मानवीय अत्याचार एवं मौसम परिवर्तन के कारण पेड़ रातों रात नंगे होते हैं। कवि के शब्दों में -

> "अगले मौसम के जबडे तक पहुँचते पेड
> रातोंरात नंगे होते हैं।"[९८]

कवि मंगलेश डबराल अपनी कविताओं में जंगल, पेड़, नदी, पशु-पक्षी आदि की महत्ता को प्रस्तुत कर उसे संरक्षित करने की प्रेरणा हमें देता है।

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने 'इन्हें बचाओ ! इन्हें बचाओ !!' नामक कविता में जंगल विनाश से उत्पन्न वन्य जीवि विनाश का संकेत दिया है। कवि बताते हैं कि जंगलों में हाँका पड़ने के कारण प्राण रक्षा के लिए जानवरों का समूह भाग जा रहा है। वन के चारों ओर कुल्हाडियाँ मात्र ही चल रहे हैं। बाँझ, फलदार, नये और पुराने जैसे सभी प्रकार के पेड़ धडाके से गिर रहे हैं। इसका प्रमुख कारण मानवीय क्रियाकलाप है।

आज का मानव बिना सोचे जंगली जानवरों को मार डालते हैं। कविता के अंत में कवि पूछते हैं कि हमारी सृष्टि को नष्ट करनेवाले ये लोग कितने पागल और नपुंसक है ? कवि ने अपनी इस कविता में जंगल एवं जंगली जानवरों के संरक्षण पर बल दिया है। क्योंकि सृष्टि चक्र के संतुलित विकास में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण है। बाज़ारी संस्कृति से प्रभावित मानव हाथियों को शिकार कर उसके दाँत को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में बेचते हैं। कवि 'हाथी' नामक कविता में इस प्रकार लिखते हैं कि शिकारियों की गोलियाँ हाथियों के उन्नत ललाट में धस गया है। इससे वह जंगल को कँपानेवाली मर्मभेदी चिंघाड़ के साथ गिर पड़ते हैं। उस समय शिकारी आकर उनके दाँत को निकालते हैं। जिसके कारण हाथियों की संख्या कम होने लगी

है। यह पारिस्थितिक संतुलन के लिए हानिकारक है। कवि ने ‘हिरन’ नामक कविता में हिरनों की संकटग्रस्तता को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि उनकी आँखें भय, पीडा, मोह और जिजीविषा में डबडबाते हैं। आज के अवैधानिक शिकार के कारण उनका संसार भी सिकुड़ गया है यह हिरन अपना वर्तमान एवं भविष्य की ओर देखकर तड़प रहे हैं। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से जंगली जानवरों के व्यापार को रोकते हैं। आज के अर्थ लोलुप मानव प्राकृतिक संसाधनों को अंधाधुंध दोहन करने में व्यस्त है। ‘आरा मशीन’ नामक कविता में कवि हिमाचल के देवदारू एवं यूकिलिप्टस के कटाव से उत्पन्न पीडा को व्यक्त की है। देवदारू, यूकिलिप्टस जैसे सभी प्रकार के पेड़ आरा मशीन के आतंक में त्रस्त हो गया है।पेडों की गुणवत्ता के बारे में उनको पता नहीं। इससे पक्षियों का संगीत नहीं सुन रहे हैं, साथ ही कवि ने गुठलियाँ बाँझ होने का संकेत भी दिया है -

“दूर दूर अमराइयों में
पक्षियों का संगीत गायब हो गया है
गुठलियाँ बाँझ हो गयी हैं
उसकी आवाज़ से।”[११]

एक पेड़ असंख्य पशु-पक्षियों का आश्रय स्थल है। इसके कटाव ने पशु-पक्षियों के अस्तित्व को भी विलुप्ति की कगार पर खडा कर दिया है। आज सरकार की ओर से हर साल वन-महोत्सव मनाये जाते हैं। मुनाफे पर केंद्रित पूँजीवादी लोगों के लिए यह महोत्सव केवल नाम के लिए मात्र ही है। नदी व हिमानी द्वारा निर्मित निम्न क्षेत्र है घाटी। ओस में भीगी चट्टानों का दर्द एवं उसके संगीत को पूँजीवादी लोग नहीं समझ सकते हैं। इन लोगों से हमारी घाटी को संरक्षित करना है। इसका संकेत ‘हमारी घाटी’ नामक कविता में मिलता है। कवि विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने अपनी कविताओं में जंगल, जानवर, पेड़, घाटी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों की वर्तमान स्थिति को प्रस्तुत कर उसे संरक्षित करने की प्रेरणा हमें दी है।

२.४. निष्कर्ष

पूँजीवादी एवं उपभोक्तावादी सभ्यता ने समस्त विश्व की पारिस्थितिकी को मटियामेट कर दिया है। आज के मानव भूमण्डलीकरण, बाज़ारवाद एवं नव-उपनिवेशवाद के दौर से गुज़र रहे हैं। इस दौर का एक प्रमुख संकट है - पारिस्थितिक संकट। विकास की ओर उन्मुख करनेवाली वैज्ञानिक टेक्नॉलजी एवं सूचना प्रौद्योगिकी ने प्रकृति को क्षतिग्रस्त बना दिया है। हमारी जीवन-शैली का अविभाज्य अंग है - प्रकृति। पर्यावरण जागरूकता संपूर्ण हिंदी कविताओं में देख सकते हैं।

आदिकालीन कवियों ने अपने वीर और श्रृंगार काव्यों के माध्यम से जनमानस को पारिस्थितिकी की प्रत्येक अंग का अवबोध करवाया। आदिकाल में पारिस्थितिक असंतुलन जैसी कोई समस्या नहीं थी। इसलिए इस काल के काव्यों में पारिस्थितिक संरक्षण की चेतना कम है। प्रकृति को मानव जीवन के विविध भावों के अनुरूप उन्होंने उपयोग किया है। भक्तिकालीन काव्य पारिस्थितिक संरक्षण का संदेश वाहक है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से आज के मानव पारिस्थितिक तंत्र को भी बदलने की स्थिति तक पहुँच गये हैं। पर्यावरण के प्रति आत्मीय लगाव के भाव भक्तिकालीन काव्य में प्रतिबिंबित होता है। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से पर्यावरण को प्रदूषण-मुक्त कर समस्त जीव-सृष्टि को मधुमंगलमय बनाने का प्रयास किया है। आज हम जितना पारिस्थितिकी से विच्छिन्न करते चले जाय उस पारिस्थितिक संकट के प्रति हमारे भक्तिकालीन कवियों की जागरूकता प्रशंसनीय है। रीतिकाल में भी किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय चेतना विद्यमान है। आलंबन, उद्दीपन आदि कई स्वरूपों में प्रकृति का अस्तित्व यहाँ देख सकते हैं।

भारतेंदु युगीन कवियों ने उस समय के अन्य अनेक विडंबनापूर्ण समस्याओं के साथ-साथ मानव एवं प्रकृति के अन्योन्याश्रित संबंधों को भी प्रस्तुत किया है। द्विवेदीयुगीन कविताओं का संदेश भी यह है कि हमारा कल्याण प्राकृतिक संरक्षण से ही प्राप्त होगा। छायावादी काव्य में पर्यावरण की उच्च चेतना देख सकते हैं। पर्यावरणीय संतुलन बिगड़ने से दिन-प्रतिदिन हमारे जैव-विविधता एवं भूगर्भिक

संसाधनों का ह्रास हो रहा है। प्राकृतिक तत्वों में होनेवाले यह प्रत्यावर्त्तन अनेक समस्याओं का कारण बन जाता है। इन सभी की आलोचना है छायावादी काव्य। कवियों ने प्रकृति के साथ एक रागात्मक संबंध जोड़कर मानव-पर्यावरणीय संबंधों को पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया है। हालावादी कवि पर्यावरणीय पर्यवेक्षक नहीं है, फिर भी उनके काव्य में प्रकृति के प्रति सहज भाव दिखायी पड़ता है। प्रकृति के पूजनीय या आराधना भाव राष्ट्रीय सांस्कृतिक धारा की कविताओं में देख सकते हैं।

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्रांति ने मानव को सुख-सुविधाएँ प्रदान करने के साथ-साथ मानव एवं पर्यावरण के अस्तित्व पर भी प्रश्नचिह्न लगा दिया है। आज के मानव के लिए प्रकृति खतरनाक प्रयोगों की प्रयोगशाला है। मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों की वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि प्रगतिवादी कविता में देख सकते हैं। प्रयोगवाद एवं नयी कविता के कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति की महत्ता को प्रस्तुत कर इस धरती में वैज्ञानिक एवं तकनीकी संसाधनों के प्रयोग से उत्पन्न दुष्परिणामों का भी संकेत दिया है। पर्यावरण एवं मानव संघर्ष के साथ-साथ पर्यावरण के मंगल की कामना भी उनकी कविताओं में निहित है। अणुयुद्ध से उत्पन्न पर्यावरणीय विभीषिकाएँ एवं उसका समाधान भी देख सकते हैं। प्रयोगवाद एवं नयी कविताओं की पारिस्थितिक चेतना में सह अस्तित्व का भाव मुखरित है।

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक प्रगति ने मानव को प्रकृति से दूर रख दिया है। वन-उपवन, पेड़-पौधे, नदी-पर्वत जेसे सभी पर्यावरणीय संसाधन उनके लिए केवल उपभोक्ता की वस्तु मात्र बन गयी हैं। मानवीय, वैज्ञानिक, औद्योगिक क्रियाकलापों से आज के पारिस्थितिक तंत्र दिन-प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा है। इससे उत्पन्न जलवायु परिवर्तन, ओज़ोन क्षरण जैसे अत्यंत भयानक विभीषिकाओं के प्रति समकालीन कवि चिंतित हैं। सन् १९९० से पहले की कविता के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अरुण कमल, राजेश जोशी, चंद्रकांत देवताले, भगवत रावत, रामदरश मिश्र, देवीप्रसाद मिश्र, अशोक वाजपेयी, बलदेव वंशी, केदारनाथ सिंह, मंगलेश डबराल, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी आदि कवियों ने पारिस्थितिक चेतना को लेकर सक्रिय रूप से काव्य रचनाएँ की हैं।

संदर्भ-सूची

१. सं.आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, विश्वनाथ त्रिपाठी - अब्दुलरहमान कृत संदेशरासक, पृ.१४३

२. वही, पृ.१७३

३. सं.डॉ.बी.पी.शर्मा - पृथ्वीराज रासो, पृ.४८

४. डॉ.सुरेंद्रनाथ दीक्षित - विद्यापति पदावली, पृ.१५२

५. बलदेव वंशी - कबीर की चिंता, पृ.३०

६. डॉ.जयदेव सिंह, डॉ.वासुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खण्ड-१ रमैनी, पृ.५५

७. वही, पृ.३०२

८. वही, पृ.३०९

९. सं.रामकिशोर शर्मा - कबीर ग्रंथावली (सटीक), पृ.१३०

१०. सं.योगेन्द्रप्रताप सिंह - गोस्वामी तुलसीदास कृत विनयपत्रिका (सटीक), पृ.२७६

११. पं.विनायकराव - श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस (खण्ड-३), पृ.५०

१२. वही, पृ.१३६

१३.वही, पृ.८८

१४. वही, पृ.४४

१५. हरबंशलाल शर्मा - सूरदास, पृ.२१२

१६. सं.रामचंद्र शुक्ल - जायसी ग्रंथावली, पृ.३१८

१७. डॉ.देशराजसिंह भाटी - रहीम ग्रंथावली सटीक, पृ.९४

१८. वही, पृ.१६५

१९. वही, पृ.१४३

२०. सं.जनार्दनराव चेलेर - वृंद ग्रंथावली, पृ.५९

२१. डॉ.पुष्पाथरेजा - भारतेंदु युगीन साहित्य में राष्ट्रीय भावना, पृ.७६

२२. डॉ.क्रांतिकुमार शर्मा - हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास, पृ.१४२

२३. डॉ.शशि जोशी - काव्य रूढियाँ आधुनिक कविता के परिप्रेक्ष्य में, पृ.१३२

२४. डॉ.शिवप्रसाद मिश्र - सियारामशरण गुप्त व्यक्तित्व और कृतित्व, पृ.२६

२५. डॉ.केसरीनारायण शुक्ल - आधुनिक काव्यधारा, पृ.१२१

२६. विजेंद्र स्नातक - द्विवेदीयुगीन हिंदी नवरत्न, पृ.४५

२७. मैथिलीशरण गुप्त - साकेत, पृ.८५
२८. जयशंकर प्रसाद - कामायनी, पृ.१५
२९. वही, पृ.८८
३०. वही, पृ.९०
३१. वही, पृ.२६
३२. सुमित्रानंदन पंत - चिदंबरा, पृ.४३
३३. डॉ.गीता दवे - पंत काव्य में समाज एवं संस्कृति, पृ.१६१
३४. सुमित्रानंदन पंत - लोकायतन, पृ.१९४
३५. वही - सौवर्ण, पृ.८८
३६. वही - शंखध्वनि, पृ.१७
३७. सं.नंदकिशोर नवल - निराला रचनावली -१, पृ.२७१
३८. वही, पृ.१२४
३९. वही, पृ.३११
४०. महादेवी वर्मा - दीपशिखा, पृ.९८
४१. वही - यामा, पृ.४२
४२. वही, पृ.१८९
४३. सं.अजितकुमार - बच्चन रचनावली - २, पृ.१४३
४४. सं.कुमार विमल, रामधारीसिंह दिनकर रचना संचयन, पृ.१०३
४५. रामधारी सिंह दिनकर - रश्मिलोक, पृ.३९८
४६. सं.श्रीकांत जोशी - माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली-७, पृ.४५
४७. केदारनाथ अग्रवाल - फूल नहीं रंग बोलते हैं, पृ.३५
४८. वही - गुलमेहन्दी, पृ.१४४
४९. वही - फूल नहीं रंग बोलते हैं, पृ.२१
५०. शिवमंगलसिंह सुमन - सुमन समग्र, खण्ड -१, पृ.२८८
५१. शिवमंगलसिंह सुमन - सुमन समग्र, खण्ड -१, पृ.१८२
५२. शिवमंगलसिंह सुमन - सुमन समग्र, खण्ड -२, पृ.२३०
५३. शिवमंगलसिंह सुमन - सुमन समग्र, खण्ड -२, पृ.२९२
५४. सं.अज्ञेय - तारसप्तक, पृ.२१२

५५. रामविलास शर्मा - रूपतरंग और प्रगतिशील कविता की वैचारिक पृष्ठभूमि, पृ.६९
५६. सं.शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली -१, पृ.७६-७७
५७. सं.शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली -२, पृ.२१९
५८. सं.शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली -१, पृ.१५९
५९. सं.शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली -१, पृ.२९५
६०. आजकल, अप्रैल २०१०, पृ.४९
६१. समकालीन भारतीय साहित्य, मार्च-अप्रैल २००३, पृ.१९
६२. धर्मवीर भारती - अंधायुग, पृ.७३
६३. सं.चंद्रकांत बाँदिवडेकर - धर्मवीर भारती ग्रंथावली, खण्ड-३, पृ.३३८
६४. लक्ष्मीकांत वर्मा - अतुकांत, पृ.१२०
६५. वही, पृ.६०
६६. डॉ.प्रभाकर माचवे - तेल की पकौडियाँ, पृ.२३
६७. वही, मेपल, पृ.३८
६८. वही, पृ.१७
६९. गिरिजाकुमार माथुर - मुझे और अभी कहना है, पृ.३२८-३२९
७०. वही, पृ.३४९
७१. वही, पृ.२६६
७२. वही, पृथ्वीकल्प, पृ.७७
७३. वही, मुझे और अभी कहना है, पृ.६०
७४. सं.अज्ञेय - दूसरा सप्तक, पृ.१२६
७५. श्री नरेश मेहता - अरण्या, पृ.५५
७६. वही - उत्सवा, पृ.६४
७७. वही - अरण्या, पृ.५६
७८. अज्ञेय - पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ, पृ.६०
७९. वही, पृ.६५
८०. अज्ञेय - चुनी हुई कविताएँ, पृ.८७
८१. वही, पृ.६७
८२. वही, पृ.३६

८३. सं.प्रभात त्रिपाठी - भवानीप्रसाद मिश्र संचयिता, पृ.६०

८४. वही, पृ.१५४

८५. वही, पृ.३२७

८६. वही, पृ.२१९

८७. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - कुआनो नदी, पृ.३५

८८. अरुण कमल - अपनी केवल धार, पृ.६४

८९. वही, सबूत, पृ.२७

९०. सामयिक मीमांसा - जुलाई-सितंबर, २००८, पृ.५६

९१. चंद्रकांत देवताले - लकड़बग्घा हँस रहा है, पृ.७४-७५

९२. बलदेव वंशी - हवा में खिलखिलाती लौ, पृ.३९-४०

९३. भगवत रावत - दी हुई दुनिया, पृ.१३

९४. सं.रामदरश मिश्र, स्मिता मिश्र - रामदरश मिश्र रचनावली, खण्ड -१, पृ.३८०

९५. देवीप्रसाद मिश्र - प्रार्थना के शिल्प में नहीं, पृ.१५

९६. अशोक वाजपेयी - तत्पुरुष, पृ.६३

९७. केदारनाथ सिंह - अकाल में सारस, पृ.१८

९८. मंगलेश डबराल - कवि ने कहा, पृ.३६

९९. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी - बेहतर दुनिया के लिए, पृ.९

Sinchu A. “Ecological consciousness in contemporary Hindi poetry (with special reference to post 1990), Thesis. Department of Hindi, University of Calicut, 2016.

अध्याय ३

हिंदी कविताओं में पारिस्थितिक चेतना : सन् १९९० के बाद

आज का युग भूमण्डलीकरण, बाज़ारवाद एवं नव-उपनिवेशवाद का है। इस दौर में एक ओर विज्ञान और सूचना-प्रौद्योगिकी नित नये आयामों को छू रहे हैं दूसरी ओर पारिस्थितिक तंत्र पर संकट का बादल मंडराने लगता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव-व-पर्यावरण के बीच के आत्मीय संबंधों में बदलाव देख सकते हैं। प्राचीनकाल में मानव का स्वामी है प्रकृति। विकास के रास्ते पर चलनेवाले मानव ने विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से उसके अंतर्भूत रहस्यों को उद्घाटित कर प्रकृति को अपना दासी बना लिया है। इसका भीषण परिणाम है - पारिस्थितिक असंतुलन। पारिस्थितिकी में सह-अस्तित्व प्रमुख है, पर आज के प्रकृति शोषण में संतुलन बिगड़ रहा है। आज के कॉरपरेट या बहुराष्ट्रीय निगम इन संसाधनों का दोहन एवं व्यापार करने में लगे हुए हैं। अधिक से अधिक मुनाफा कमाना उनका लक्ष्य है। पारिस्थितिकी के प्रति समकालीन कवि की निगाह चौकन्नी है। दिन-प्रतिदिन बिगड़ते पारिस्थितिकी को कैसे सुधारें ? इसके प्रति चिंतित हैं हिंदी के समकालीन कवि। एक वैज्ञानिक की तरह उन्होंने अपना विचार कविता के माध्यम से प्रकट किया है। पारिस्थितिक चेतना समकालीन कविता का प्रमुख मुद्दा बन गया है। यहाँ सन् १९९० के बाद की हिंदी कविताओं में प्रस्तुत पारिस्थितिक चिंतन प्रस्तुत है। प्रमुख कवियों को यहाँ चुन लिया है।

३.१. अनिता निहालनी

अनिता निहालनी ने 'गर्मी की कैफियत', 'बाढ़' और 'नदी की यात्रा' आदि कविताओं में पर्यावरणीय असंतुलन से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत दिया है। कवयित्री ने 'गर्मी की कैफियत' नामक कविता में पृथ्वी पर बढ़ते तापमान का संकेत दिया है। ठंडक को याद करके पौधा कुम्हला हो गया है, सूरज गगन में अत्यंत तीव्रता से चमक रहा है। कहा जाता है कि १९५० के पश्चात् से पृथ्वी का तापमान दिन-प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ रही है। इससे धरती भी तपकर सूख गयी है, पवन झुलसकर अपना अस्तित्व खो रही है। अग्नि भी लज्जित होकर जलते किरण को छूने के लिए डर रहा है। क्योंकि पृथ्वी के तापक्रम में हुई वृद्धि अग्नि को भी असहनीय है। मेघों से हुआ अम्बर का गाँव खाली हो गया है। इससे वहाँ के रवि में भी घबराई छाँव देख सकते हैं। क्योंकि ग्रीन हाउस गैसों ने मेघों से मिलाकर उसको भी प्रदूषित कर

दिया है। यह रवि के अस्तित्व के लिए भी खतरा बन जाते हैं। यह गर्मी ने मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न खडा कर दिया है। पशु-पक्षी, प्राणी बेबस होकर कोमल गाह एवं शीतल पनाह खोज रहे हैं। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं-

"सूने से हुए रास्ते, गर्मी से त्रस्त हर जन
चुप सी लगी गली में, थम सा गया है जीवन।
पंछी छुपे, पशु भी, शीतल पनाह खोजें
बेबस हुए हैं प्राणी, कोमल सी गाह खोजें।"[१]

ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नहीं रोके तो पृथ्वी एक अग्निगोल मात्र ही बन जायेगी। यह गर्मी या तापन समस्त पारिस्थितिकी के लिए मृत्यु की घंटी है।

बाढ़ एक प्राकृतिक प्रकोप है। इसका प्रमुख कारण वन-विनाश से उत्पन्न प्राकृतिक असंतुलन है। आसाम, बंगाल, गुजरात आदि क्षेत्रों को प्रतिवर्ष भयंकर बाढ़ का सामना करना पड़ता है। अनिता निहालनी ने 'बाढ़' नामक कविता में इससे उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। चारों ओर जल ही जल है। इससे चौलाई, धान भी डूब गया है। सभी गाँव खाली हुए हैं। बाढ़ से उत्पन्न गाँव-विनाश आज भी हम हर साल देख सकते हैं। मानव मन की आशाएँ मृत होकर वहाँ से लोग भाग रहे हैं। बाँध के नीचे की अंतर्धाराओं के संघर्षण से वेगवती जल चट्टानों के सीने एवं नदी-तट को भी तोड़ देता है। बाढ़ से सभी साधनों का स्थान जल के ऊपर होगा। कवयित्री के शब्दों में -

"टूटे बाँध, नदी तट टूटे
डूबी मेड़, मड़ैया डूबी
झाँके झोपड़-छप्पर
जल के ऊपर"[२]

कवयित्री ने 'नदी की यात्रा' नामक कविता में नदी की यात्रा मार्ग में होनेवाली कठिनाइयों के बारे में अपना विचार प्रस्तुत किया है। क्योंकि उनके यात्रा

मार्ग के ऊपर एवं नीचे अत्यंत दुर्गम है, कभी-कभी गहरे खडड में गिरती है। फिर भी वह कल-कल से बहती है। फूलों पर खडे वृक्षों की डालियाँ शीतल जल को सूर्य की तपन से बचाती है। ठंडक पाने के लिए ढेर से फूल इस स्वच्छ एवं निर्मल धारा के साथ दूर तक निकल जायेंगी। उनके वक्ष-स्थल पर नावें उधर-इधर तिर रही है। उसका दर्द भी नदी सह सकती है। आज की पवित्र नदियाँ गंदली एवं विषैली बन गयी हैं। इसका प्रमुख कारण मानवीय क्रियाकलाप है। इससे डरकर नदी अपनी धारा को पलटकर बह सकती है। साथ ही क्रोधित होकर तटों को जुबाकर फुफकारती है। वास्तव में नदी अपनी धारा भूल गयी है। अनिता निहालनी के शब्दों में -

“क्रोधित हो गयी है अब नदी
तटों को डुबाती, फुफकारती नदी
अपना मार्ग भूल गयी है।”[३]

३.२. अरुण कमल

बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है जल। सृष्टि के अस्तित्व के लिए आवश्यक घटक है जल। बढ़ती आबादी एवं औद्योगिकीकरण जल-प्रदूषण एवं जल संकट का कारण बन सकते हैं। बाज़ारवाद के इस युग में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए पानी एक वाणिज्यिक चीज़ है। प्रकृति के अनुपम उपहार जल स्रोतों के स्थान पर आज बच्चों के खेल का मैदान है। ‘इस श्मशान पर’ नामक कविता में कवि अरुण कमल पानी की वर्तमान दुर्दशा को प्रस्तुत किया है। आज के विषैले पानी को पीने योग्य बनाने के लिए क्लोरिन से साफ कर रहे हैं। यहाँ कितना पानी है ? आज के बहुराष्ट्रीय ग्लोबल माफिया को मालूम नहीं है। इसका संकेत उनकी ‘इस श्मशान पर’ नामक कविता में देख सकता है। सबसे शुद्ध पानी हमें वर्षा द्वारा उपलब्ध है। पानी की किस्में एवं उसके प्रबंधन की समस्या इक्कीसवीं सदी की प्रमुख समस्या बन गयी है। विश्व जल-सम्मेलन में उद्धृत वाक्य है - ‘लोगों के लिए जल जीवन के लिए जल’।

पृथ्वी पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन पानी के लिए भी आज कर है। कवि के अनुसार जहाँ कुछ पानी है वह है इस दुनिया की सबसे बढ़िया जगह। पानी

संकट के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि अरुण कमल 'इस श्मशान पर' नामक कविता के अंत में इस प्रकार कहते हैं-

"और चलो और
जहाँ कुछ पानी है वहीं उतारेंगे
वही है सबसे बढ़िया जगह इस श्मशान पर।"[४]

एक बूँद स्वच्छ एवं निर्मल पानी के बिना आज हज़ारों लोग दिन-प्रतिदिन मर रहे हैं। बच्चों से लेकर बूढों तक पानी के महत्व को समझना है। आर्थिक, सांस्कृतिक एवं जैविक दृष्टि से पृथ्वी का बहुमूल्य प्रकृति प्रदत्त संसाधन एवं संपूर्ण जीव जगत के अस्तित्व का आधार है पानी। हमारे जीवन सभ्यता, संस्कृति का विकास पानी से जुडा हुआ है। अरुण कमल की सन् १९९० के पूर्व की कविताओं में पारिस्थितिक चेतना खूब मिलती है।

३.३. अरुण देव

सभ्यता एवं संस्कृति का विकास नदी तट पर हुआ है। लेकिन आज नदी की स्थिति क्या है ? इसका चित्र अरुण देव ने अपनी 'आकांक्षा' और 'नदी' नामक कविताओं में दिया है। नदी के बिना सभ्यता एवं संस्कृति का अस्तित्व कल्पनातीत है घनी आबादीवाले शहर में हमारे सभी पवित्र नदियों को प्रदूषित कर दिया गया है। पहले नदी के किनारे शहर बस गया था, लेकिन आज शहर के किनारे से नदी बह रही है। नदी की वर्तमान स्थिति कहना कवि के लिए मुश्किल हो गया है। शहर के वैभव में आज नदी एक रुदन है। विकास के नाम पर होनेवाले प्रगति ने उसके तन पर अनेक घाव दिया है। कवि 'आकांक्षा' नामक कविता में बताते हैं -

"शहर के वैभव में नदी एक अनवरत रुदन थी
उसके तन पर रिसते हुए घाव थे
नदी के भाग्य में सभ्यता का अर्थ वही नहीं था।"[५]

शहर में नदी के रेत बिखरे हुए हैं। यह देखकर कवि के कण्ठ में नागफनी का पौधा उग आया है। कवि कहते हैं कि बाज़ारीकरण ने नदी को व्यर्थ

किया है, उसी प्रकार आज मैं भी व्यर्थ था। बाज़ार में नदी एक बिकाऊ चीज़ बन गयी है। कविता के अंत में कवि इस प्रकार कहते हैं कि बीसवीं सदी ने विकास के नाम पर नदी को व्यर्थ किया है। इक्कीसवीं सदी मनुष्य को व्यर्थ साबित करेगी।

बीसवीं सदी के उद्योगों ने नदी को रेत बना दिया है। कवि अरुण देव 'नदी' नामक कविता में कहते हैं कि चट्टानों की साँस में भी नदी रहती है और चाँदनी में शहर रहते हैं। आज नदी को चाँदनी में भीगी रेत पर खोजना है, क्योंकि वहाँ नदी का एक निशान भी नहीं है। उस नदी की गाछ भी सूनी धरती पर विलीन हो गयी है। कल-कल हँसनेवाली नदी का रास्ता बदल गया है और छीमियाँ हरेपन से घबराकर गदरा हो गयी हैं। आज शहर में नदी का रहना असंभव-सा हो गया है। बच्चों के लिए नदी केवल नाम मात्र है। भावी पीढी को नदी के बारे में जानना मुश्किल है। कवि के शब्दों में -

"शहर में नदी का रहना संभव नहीं रहा
वह चली गयी है
दूधमुँहे बच्चे की आँखों में।"[६]

विकास के नाम पर होनेवाले परियोजनाओं ने विश्व की प्रमुख नदियों के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर पहुँचा दिया है। पर्यावरणीय संतुलन को बनाये रखने में जलीय जीव-जंतु एवं वनस्पति की भूमिका महत्वपूर्ण है। कवि अरुण देव ने अपनी कविताओं में नदी का नामोनिशान मिट जाने की आशंका व्यक्त की है।

३.४. अशोक वाजपेयी

वर्तमान दुःखद समय में कवि अशोक वाजपेयी जल, आकाश, वृक्ष, चिड़िया जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है। 'आकाश ने कहा', 'वृक्ष ने कहा', 'जल ने कहा', 'आवाज़', 'चिड़िया' एवं 'अब मैं आकाश को पुकारता हूँ' आदि कविताएँ इसका सर्वोत्तम उदाहरण हैं। अशोक वाजपेयी की दृष्टि पर्यावरण के प्रति चौकन्नी है। विश्व के समस्त जैवमण्डल का अनिवार्य तत्व है पानी। 'जल ने कहा' में कवि बताते हैं धरती के बहुत बडे हिस्से को घेरा है जल। इस जल

के दो रूप है - शांत और भयानक। उनके भयानक रूप सबको अत्यंत घातक बन जाते हैं। क्योंकि वह तुम्हें भिगाते हैं, बहाते हैं और डुबाते भी हैं। फिर भी हमारे सभी कामों के लिए पानी आवश्यक है। पानी के बिना दैनिक क्रियाकलापों के बारे में सोचना अत्यंत कठिन है। कवि कहते हैं कि पानी रहित प्रदेशों में कोई नहीं रहता है। पानी की कमी एवं अधिकता दोनों स्थितियाँ जैवमण्डल के लिए दूभर हो जाता है।

छोटी-छोटी चिड़िया की विलुप्ति भी पारिस्थितिकी के संतुलन को प्रभावित करती है। औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण के फलस्वरूप जनसंख्या की दर में बहुत अधिक वृद्धि हुई। इसके कारण चिड़ियाओं को रहने के लिए प्राकृतिक आवास नहीं है। आज कवि को पेडों पर के पक्षियों की आवाज़ सुनने के लिए मुश्किल हो गया है। 'आवाज़' नामक कविता में कवि कहते हैं कि -

"पक्षियों की आवाज़
ऊपर पेड़ों पर अदृश्य
शुद्ध और पारदर्शी
सिर्फ आवाज़
जो किसी से कुछ नहीं कहती।"[७]

विकास के रास्ते पर चलनेवाले मानव पक्षियों के दुख-दर्द के बारे में नहीं सोचते हैं। गौरैया, मैना, सतभैए, सनबड्र्स जैसे छोटे-छोटे चिड़िया मानव के औद्योगिक एवं संचार-क्रांति की अत्याचारों को चुपचाप सहन करती है। वृक्ष मानव को फल-फूल, चिड़िया को आवास स्थान भी दिया है लेकिन वर्तमान मानव इसके परोपकार को भूलकर पेडों को काटते हैं। इसका संकेत भी उनकी 'आवाज़', 'चिड़िया' नामक कविताओं में मिलता है। 'आकाश ने कहा' में कवि बताते हैं कि आकाश की खिड़कियाँ सूर्य, चंद्रमा, नक्षत्र आदि हैं। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से आकाश को पुकारना चाहते हैं। कवि बताते हैं कि धरती पर फैला दुख वर्तमान में आकाश भी दिखाई नहीं पड़ता है। क्योंकि परतें भी केमिकल्स के विषाक्तता में प्रभावित हुए हैं। वृक्षों पर आँकी जा रही पक्षियों की स्वरलिपियाँ आज आकाश मात्र ही पढ़ सकते हैं।

३.५. इन्दु जैन

आज के स्वार्थी मानव पर्यावरण के साथ क्रूर व्यवहार कर रहे हैं, इसके फलस्वरूप नदी, जंगल, वृक्ष, पानी, जानवर सभी पर्यावरणीय तत्व कम होते जा रहे हैं। भविष्य में यह सब लुप्त होकर पृथ्वी रेगिस्तान बन जायेगी। जिससे मानव को जलवायु-परिवर्तन, खेती-संकट जैसे अनेक प्राकृतिक विपदाओं को सामना करना पडेगा। विश्व की ऐसी ज्वलंत पर्यावरणीय समस्याओं का संकेत इन्दु जैन ने 'निश्चय', 'बहुत दूर नहीं', 'पूरा जीवन', 'नये क़ायदे' आदि कविताओं में दिया है।

वायुमण्डल में उपस्थित हरितग्रह गैसों की वृद्धि मौसमी तंत्र को गड़बड़ाकर जलवायु को भी परिवर्तित कर दिया है। औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, तकनीक एवं संचार में क्रांतिकारी परिवर्तन, रासायनिक उद्योग आदि प्रगति के नाम पर होनेवाले सभी वैज्ञानिक परियोजनाएँ हरित ग्रह गैसों के उत्सर्जन को बढ़ा देते हैं। कवयित्री ने इसके भीषण एवं दर्दनाक परिणामों को 'बहुत दूर नहीं' नामक कविता में दिया है। उन्होंने लिखा है कि भविष्य में ऋतु परिवर्तन से प्रकृति के सभी नियम बदल जायेंगे। यह काल बहुत दूर नहीं है। आज भी हमारे सामने है। इसका बुरा प्रभाव सब्जियाँ, फल और अनाज पर भी पडेगा। क्योंकि समय पर न मौसम, न बारिश और न धूप मिलेगा। इससे खाद्यान्न में कमी होने के साथ-साथ किसानों का जीवन भी संकट में पड़ जायेगा। मौसम बदलने का प्रभाव सबसे पहले खेती उपजों में देख सकते हैं। आनेवाली सदियों में मई-जून में बारिश होगी, समय पर आम एवं तरबूज नहीं पकेंगे। कवयित्री ने लिखा है -

> "बहुत दूर नहीं लगता वह दिन
> जब मई-जून में बारिशें होंगी
> आम नहीं पकेंगे / खरबूजे मीठे न तरबूज लाल।"[८]

औद्योगिक वैज्ञानिक प्रगति से उत्पन्न प्रदूषण पर्यावरणीय तत्वों पर किस प्रकार प्रभावित किया है, इसका संकेत 'पूरा जीवन' नामक कविता में देखने को मिलता है। पेड़ पक गया है। इसमें फूल नहीं है, झडती हुई कुछ पत्तियाँ मात्र ही हैं। पक्षी भी चहचहाते निकल जा रहे हैं। प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से पेड़, पत्ते, पक्षी

जैसे सभी तत्व दिन-प्रतिदिन नष्ट होता जा रहा है। चिड़िया को भी आज पेड़ पर ठहरने में भय है। कवयित्री इन्दु जैन के शब्दों में -

"पक्षी फिर भी चहचहाते निकल जाते हैं
सिहराते हुए
ठूँठ भी बसेरा है किसी न किसी का
खोखल भी।"[९]

पारिस्थितिकी के संतुलन बनाये रखने में पेड़ एवं चिड़िया की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसलिए कवयित्री ने इन दोनों के संरक्षण पर बल दिया है। उद्योगों से निकलनेवाला धुआँ वायुमण्डल के चक्र को प्रभावित कर लोगों की मृत्यु तक का कारण बन जाता है। इस धुएँ से आदमी का फेफडे भी खाँस-खाँस कर सिकुड़ गया है। इसका संकेत 'निश्चय' कविता में द्रष्टव्य है -

"निस्तेज होगा सूर्य
आदमी के धुएँ से
फेफडे खाँस-खाँसकर
सिकुडेंगे।"[१०]

कारखानों से निकलनेवाले धुएँ के पीछे हैं आज सूरज। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए वाणिज्यवृत्तिवाला मनुष्य समुद्र को भी सोख रहा है। 'निश्चय' नामक कविता के अंत में इस प्रकार बताती हैं कि अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए प्राकृतिक संपदाओं को दुरुपयोग कर विनष्ट करनेवाला मानव किसी न किसी दिन आदिम प्रार्थना में झुकेगा। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं-

"सूरज धुएँ के पीछे हँसेगा
समुद्र सोखता हुआ
मूर्ख मनुष्य पर / जानता है
आदमी एक न एक दिन
आदिम प्रार्थना में झुकेगा।"[११]

प्राकृतिक संसाधनों पर बाज़ारीकरण का दबाव तीव्र हो गया है। नदी, खेत जैसे पर्यावरणीय तत्व आज बाज़ार में बिकने के साधन बन गये हैं। गाँव के स्थान पर बहुमंजिली इमारतें देख सकते हैं। कवयित्री बताती हैं आज नदी एवं खेतिहर बाज़ार की वस्तु होने के कारण उसका प्राकृतिक नियम भी बदल गया है। कवयित्री को बाज़ार से प्राकृतिक नदी को मिलना मुश्किल है। उन्होंने बाज़ार से जिस नदी को खरीद लिया है, उसमें रेत और धूप की पनीली चमक मात्र ही है, पानी नहीं। कवयित्री ने 'नये क़ायदे' नामक कविता में प्राकृतिक संसाधनों पर प्रभावित बाज़ारीकरण पर प्रकाश डाला है।

३.६. इमरोज

'रेत होती नदी' नामक कविता में कवि इमरोज कहते हैं कि प्रदूषण का सिलसिला को खत्म कर नदी को लबालब करना है। नदी के मोहताज हैं - खेत-खलिहान, पेड़-पौधे, गाँव और गरीब। विकास के नाम पर होनेवाले सभी कार्यक्रम नदी को रेत बनाता है। यह अत्यंत दुःखद बात है। कवि कहते हैं कि उद्‌गीथ नदी के पुत्र हैं। यह प्यास से उपजे है। नदी संकट की त्रासदी पर कवि लिखते हैं -

"रेत होती / नदी
त्रासदी है / समय के
कंधे पर / अर्थी है।"[१२]

'रेती होती नदी' नामक इस कविता में नदी की त्रासदी के साथ-साथ उसके महत्व को भी प्रस्तुत किया है। कवि के लिए नदी वेद है। एक नदी को पौराणिक एवं सांस्कृतिक महत्व है। गंगा, सिन्धु, मेकांग और सालिवंग जैसे विश्व की प्रमुख नदियाँ आज सूखने के कगार पर है। बाँध-निर्माण, जलवायु परिवर्तन, भू-जल का अंधाधुंध दोहन आदि से सूखनेवाली नदियाँ संपूर्ण विश्व की सृष्टि के अस्तित्व के लिए सबसे बडा खतरा हो जायेगा।

३.७. ऋतुराज

प्राचीन काल में पर्यावरण प्रदूषण प्राकृतिक क्रियाकलापों से ही हुआ था। लेकिन आज यह प्रदूषण का कारण मानवीय क्रियाकलाप बन गया है। पर्यावरण के सभी तत्व आज हमारे सामने मर रहे हैं। संवेदनशील कवि ऋतुराज के लिए यह दुःखद बात है। इसकी सही अभिव्यक्ति 'गिरना', 'संघर्ष', 'सूखा' और 'तृष्णातरंगकुला' नामक कविताओं में मिलता है। कवि 'गिरना' में बताते हैं कि समस्त चराचर अचल स्थिति अस्थिर इस संसार के पारिस्थितिकी को संतुलित कर लेंगे। इसमें सभी जैविक-अजैविक तत्वों को समान अधिकार है। इन सभी तत्वों के क्रियाकलापों ने पारिस्थितिकी को संतुलित बनाये रखते हैं। पर्यावरण विनाश के साथ-साथ मानव का विनाश भी होगा। प्रकृति के साथ हम भी गिरने से पहले पर्यावरण को संतुलित बनाये रखना है। आज की पृथ्वी हमारे हाथों से फिसलकर किसी कृत्रिम अग्निकुंड में गिर रही है। इस घटना के बारे में सोचना कवि के लिए असंभव-सा हो गया है। कवि के शब्दों में -

"यह पृथ्वी हमारे हाथों से फिसल रही है
यह गिर रही है किसी कृत्रिम-से अग्निकुंड में।"[१३]

वृक्ष, जंगल एवं पहाडों की अंधाधुंध कटाई पारिस्थितिक संतुलन बिगडने का कारण बन सकता है। कवि 'संघर्ष' नामक कविता में बताते हैं कि पहाडों के नीचे गाँववाला घर बाढ़ में गिर गया है। वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन से बाढ़, अकाल जैसे प्राकृतिक प्रकोप हर वर्ष देख सकते हैं। ईंट-भट्ठे पर काम करनेवाले वहाँ के मानव के लिए जीना एकदम मुश्किल हो गया है। कवि कहते हैं कि असंतुलन का परिणाम अत्यंत भयानक होगा। उस वनखंडी में तीन प्रजाति के पहाड थे। इसके अंधाधुंध कटाव से पहाड भी धौंकों के ठूँठ बन गया है। कवि ने 'संघर्ष' में लिखा है -

"उस वनखंडी के तीन तरफ पहाड़ थे
कटते कटते धौंकों के ठूँठ रह गए।"[१४]

प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखने में पहाड, झरना आदि का योगदान अतुलनीय है। कवि ने अपनी 'संघर्ष' नामक इस कविता में पहाड टूटने की पीडा व्यक्त कर उसके संरक्षण पर बल दिया है।

आज विश्व के अधिकांश भाग सूखे की चपेट में है। सूखा पड़ना आज हमारे लिए एक आम बात हो गयी है। वनोन्मूलन से आये वर्षा की कमी से सूखा पड़ता है। 'सूखा' नामक कविता में कवि ने सूखा से उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। मानव के साथ पशु-पक्षी भी सूखे से प्रभावित हुए हैं। इस कविता में सूखे से प्रभावित पशु भी चारा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कृषि भूमि भी सूखे से प्रभावित होने के कारण पशु-पक्षी एवं मानव भी भूखे हैं। पशु भी कातर दृष्टि से आदमी को देख रहे हैं, क्योंकि उसको जीने के लिए घास चाहिए। कवि कहते हैं कि खौलती दिशाओं के बीच उनकी भूखी पसलियाँ होंगी। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में जल, घास और फसल की कमी के कारण पशु और मनुष्य मृत्यु के पास है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"पतझर की तरह गहरे भूरे अन्तहीन सूखे के बीचों बीच
पत्तियाँ नहीं है किसी भी पेड़ पर / फिर भी आदमी उनके नीचे बैठा
घास छीलने की कोशिश कर रहा है।"[१५]

भारत में राजस्थान एवं गुजरात आदि प्रदेश सूखे से प्रभावित है। कहा जाता है कि भारत में २००२ और २००४ भीषण सूखेवाले साल हैं। इसका दुष्प्रभाव आज भी हम देख रहे हैं।

बाँध निर्माण एवं टूटन से उत्पन्न विभीषिकाओं की अभिव्यक्ति ऋतुराज की 'तृष्णातरंगकुला' नामक कविता में मिलती है। कविता में प्रस्तुत नदी की बाँध हर साल टूटती है। इंजीनियरों और ठेकेदारों को पता है कि बाँध का पानी किस जगह से टूटता है और ज़मीन कहाँ पोली है। अब इंजीनियर हर साल टूटनेवाले बाँध की मरम्मत करवा रहे हैं। साथ ही कवि ने बाँध निर्माण से उत्पन्न बाढ़ का संकेत दिया है। इससे नदी का संतुलन बिगड़ता है। सभी वन-उपवन एवं जलीय जीव-जंतु पानी में डूबकर मर जायेंगे। इससे भील भी दुःखी है क्योंकि बाँध भरने से उनको खेती करना असंभव-सा हो गया है। भविष्य में टोपे मचान हरियाली सरसों की खुशबू भी न होगी। कवि के शब्दों में -

"भीलों को क्या होगा
वे दुःखी है कि अगर बाँध भरा रहेगा तो वे खेती नहीं कर सकेंगे
अब कभी टोपे मचान हरियाली सरसों की नशीली खुशबू नहीं होगी।"[१६]

'तृष्णातरंगकुला' नामक कविता में विकास के लिए बाँध वरदान है तो पारिस्थितिकी के लिए अभिशाप भी है। नदियों के प्रवाह को तोड़नेवाले बाँध निर्माण से उत्पन्न भयंकर परिणामों को कवि ने इस छोटी-सी कविता में संवाद के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

३.८. एकांत श्रीवास्तव

एकांत श्रीवास्तव की 'अन्न हैं मेरे शब्द', 'मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद' और 'बीज से फूल तक' नामक काव्य संग्रह में संकलित अधिकांश कविताएँ पारिस्थितिक चेतना से ओतप्रोत है। कवि के लिए प्रकृति जीवन का पर्याय है। 'विस्थापन' नामक कविता में कवि भूमि एवं वनस्पति को प्रणाम करना चाहते हैं। आज का मानव समुद्र, पहाड और वृक्षों का मूल्य पहचानते नहीं। प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के बडे हिस्से का अधिकार आज के भूमण्डलीय उपभोक्ता वर्ग के अधीन है। इसलिए कवि कहते हैं कि पेड और पानी का मूल्य मरुभूमि को पार करनेवाले बंजारे मात्र ही जानते हैं। आज के भारतीयों को यह पहचानना मुश्किल है।

'ठण्डे पानी की मशीन' नामक कविता में कवि पानी की वर्तमान दशा के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करते हैं। पानी की लड़ाई से उत्पन्न विभीषिकाओं के बारे में सोचना कवि के लिए मुश्किल है। पानी के अभाव से होनेवाले उत्पादन में कमी समाज में भूखमरी पैदा होने का कारण होगा। पानी के अभाव से उत्पन्न भयानक स्थिति का संकेत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"अब तक हम अपनी भूख से लड़ते थे
अब हमें अपनी व्यास से भी लड़ना होगा।"[१७]

भारत के एक वर्ग जंगल, ज़मीन, जल को बचाने के लिए आंदोलनरत हैं, दूसरे वर्ग पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों को बिकाऊ चीज़ के रूप में बदलने के लिए आतुर है। पानी आज के बाज़ार की बिकाऊ चीज़ हो गया है। प्रकृति प्रदत्त उपहार पानी बिकाऊ चीज़ होना एक संवेदनशील कवि के लिए अत्यंत दुःखद बात है। कवि बताते हैं कि जिसके पास पैसे हैं उसके पास पानी है। आज के अमीर लोग अपने अधीन के जलस्रोतों से मिनरल वाटर का निर्माण कर बाज़ार में उसे बेचते हैं।

उनके मन में पैसा कमाने की चिंता मात्र ही है, जलस्रोत नष्ट होने की चिंता नहीं है। पानी के बाज़ारीकरण की प्रक्रिया का विरोध कवि एकांत श्रीवास्तव करते हैं। जैसे -

"अगर आपके पास पचास पैसे हैं
तो आप एक गिलास ठण्डा पानी पी सकते हैं।"[१८]

सिर्फ एक हस्ताक्षर से पारिस्थितिक तत्वों में होनेवाले बदलाव कवि अपनी कविता में बताते हैं। इससे धरती की देह नीली पड़ जाती है। आज के साम्राज्यवादी एवं पूँजीवादी शक्तियों ने वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी विकास के नाम पर शस्य श्यामल धरती को विषैली बना दिया है। कवि बताते हैं कि चाँद को बुझाने, नदियों को सूखने एवं हरे-भरे खेतों को अदृश्य बनाने में उनका एक हस्ताक्षर ही काफी होगा। पूँजीवादी विकास के नाम पर कॉरपरेट संस्थाएँ प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और व्यापार करके अपने मुनाफे के लिए उन पर अधिकार स्थापित करना चाहती है।

'वसन्त में' नामक कविता में कवि ने जलवायु के बदलाव से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत दिया है। प्रकृति का यौवन काल है वसंत। कवि बताते हैं कि इस वसंत में भी सरई का फूलों भरा पेड़ को मानव आरा मशीन द्वारा काट रहा है। मौसम बदलने का कारण भी वन-विनाश है। कवि बताते हैं कि केमिकल्स की गन्ध से ऋतुओं की महक घिर गयी है। ग्रीन हाउस गैसें पृथ्वी की गर्मी को बढ़ाकर जलवायु-परिवर्तन में अहम भूमिका निभाते हैं। एकांत श्रीवास्तव की राय में कच्चे घरों की खपरैलों का धुआँ बारूद के धुएँ से घिर गया है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"ऋतुओं की महक घिर गई है
केमिकल्स की गंध से
कच्चे घरों की खपरैलों से उठता धुआँ
घिर गया है बारूद की धुएँ से।"[१९]

जलवायु को नियंत्रण करने में ग्रीन हाउस गैसों की उत्सर्जन को कम करना है। इससे नदी का जल भी सूख गयी है। पिघलते ग्लेशियर एवं मृत-होती नदियाँ इसके दुष्परिणाम है। मौसम में आनेवाली गर्मी, सूखते बादल और हवा का

बदलता रूख ने समूचे जैव मण्डल के लिए खतरे की घंटी बजा दी है। कवि 'बुखार' नामक कविता में बताते हैं कि हवा में होनेवाले केमिकल्स की गंध और बारूद के धुआँ के कारण फेफडों में धूल मात्र ही जमा हुआ है। यह मानव के केश, चेहरा एवं आँखों के लिए अत्यंत घातक है। धरती का हरा चाँद है - पेड। यह धुआँ धरती की हरियाली को भी ग्रास लेती है। इसका संकेत करते हुए कवि 'बुखार' में इस प्रकार लिखते हैं-

"और धरती की हरियाली को ग्रस लेती है
ग्रस लेती है हर उस पेड को
जो इस धरती का हरा चाँद है।"[२०]

'अन्न हैं मेरे शब्द' में संकलित 'ओ पृथ्वी - १' और 'ओ पृथ्वी - २' नामक कविताओं में कवि ने पृथ्वी की अपार संपदा की महत्ता को प्रस्तुत किया है। 'सूखा' नामक कविता में सूखे का चित्रण है। सूर्य, पेड़, चिड़िया, मिट्टी, नदी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व के प्रति चिंतित हैं कवि एकांत श्रीवास्तव। भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में भी सूर्य को देव मानते हैं। 'समुद्र तट पर सूर्योदय' नामक कविता में कवि बताते हैं कि सूर्योदय सृष्टि के आदि से अंत तक अक्षय आलोक पुंज है। यह धरती का अखण्ड सुहाग भी है। आज उनके सात धवल अश्व दिखायी नहीं देता है। कवि की राय में इस धरती पर सबसे शक्तिशाली आग है मनुष्य। कवि 'आग' नामक कविता में मानव से कहते हैं कि हवा की रूख को मत छुओ। कवि धरती को माता के रूप में मानते हैं। 'कन्हार' नामक कविता में कवि ने बदलते हुए मौसम और ऋतुओं के माध्यम छत्तीसगढ़ के प्राकृतिक परिवेश एवं संपदा की महत्ता को प्रस्तुत किया है।

प्रदूषण से त्रस्त पारिस्थितिकी के सभी तत्व आज मृतप्राय हो चुकी है। कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति को जीवंतता देने का प्रयास किया है। साथ ही प्रकृति में प्रेम और ममत्व की भावना स्थापित कर धरती माता की गोद में पुनः लौटने की प्रेरणा देते हैं। नहीं है तो आनेवाली पीढ़ी को सूखते नदी एवं स्मृतियों में महकनेवाले फूल निहित मृतप्राय पारिस्थितिकी को सौंपने की स्थिति पैदा होगी। कवि के शब्दों में -

"जो नदी सूख जाती है / उसका जल / स्वप्न में बहता रहता है
जो वृक्ष जल जाते हैं उनके फूल / महकते रहते हैं स्मृतियों में।"[२१]

३.९. ओमप्रकाश वाल्मीकि

नदी किसी भी राष्ट्र के अस्तित्व का भूत, वर्तमान और भविष्य है। लेकिन आज दिन प्रतिदिन नदी मृत्यु की ओर चल रही है। विकास के नाम पर हो रहे स्मार्ट सिटी या मेट्रो सिटी का निर्माण करने के लिए मानव ने नदी धाराओं को भी बदल दिया है। इससे उत्पन्न विभीषिकाओं के बारे में नहीं सोचते हैं। प्रदूषित नदी के आतंक से संपूर्ण विश्व त्रस्त है। नदी की सांस्कृतिक महत्ता के साथ-साथ वर्तमान दशा को प्रस्तुत करनेवाली कविता है 'नदी'। इस कविता में दलित कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि बताते हैं कि नदी रास्ता बदलने का प्रमुख कारण मानव की बदनीयत है। भारतीय संस्कृति में नदी राष्ट्र की जीवात्मा है। भारतीय परंपरा में पहले स्त्रियाँ नदी के पास जाकर मंगलगान गाकर उसकी स्तुति भी करती थीं। पूजा करनेवाली नदी की वर्तमान स्थिति क्या है ? हमारी गगन चुम्बी आकांक्षाओं से नदियों का पवित्र-जल भी गन्दलाने लगा है। क्योंकि वर्तमान मानव औद्योगिक, रासायनिक एवं वैज्ञानिक अपशिष्टों को नदी में फेंककर उसे प्रदूषित कर रही है। साथ ही नदी को लेकर आज अनेक विवाद चल रहे हैं। कावेरी नदी को लेकर होनेवाले विवाद का आतंक आज भी हमारे सामने है। वर्तमान मानव अपनी धन लिप्सा की पूर्ति करने के लिए नदी एवं उनके संसाधनों को किसी साम्राज्यवादी राष्ट्र को बेचने में व्यस्त हैं। नदी को मालूम है कि बाज़ारी संस्कृति से प्रभावित होकर मनुष्य किसी न किसी दिन उसे ठेकेदार को बेच देंगे। अपने घर का रोशन करने के लिए मानव उसके जिस्म, मांस-मज्जा आदि को छीनकर उसके अस्तित्व को मिटाते हैं या उनकी पहचान को नष्ट करते हैं। पंक्तियाँ हैं -

> "जो उसके जिस्म से / नोच लेगा
> मांस-मज्जा / और छीन लेगा
> उसका नदी होना / या फिर मिटा दोगे
> उसके अस्तित्व को / खडी करके ऊँची सुदृढ़ दीवारें
> अपना घर रोशन करने के लिए।"[२२]

कवि बताते हैं कि हमें अपने घर की तरह नदी का संरक्षण करना है।क्योंकि नदी की मृत्यु समस्त चराचरों की मृत्यु है, संस्कार एवं मूल्यों की भी मृत्यु

है। मानव जाति द्वारा फैलाये इस प्रदूषण का भयंकर परिणाम पृथ्वी पर रहनेवाले सभी प्राणियों पर देख सकते हैं। इसलिए औद्योगिक, साम्राज्यवादी एवं बाज़ारवादी अतिक्रमण से होनेवाले नदी प्रदूषण को रोकना समस्त नागरिकों का कर्तव्य है।

३.१०. कमलेश्वर साहू

आज जल, थल एवं वायु आदि प्रदूषण से त्रस्त है। जनसंख्या वृद्धि एवं औद्योगिकीकरण के कारण प्रकृति से छेड़छाड़ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसके कारण मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है। इसका संकेत कमलेश्वर साहू की कविता 'आह्वान' में देख सकता है।

कवि ने अपनी कविता 'आह्वान' में देवता और राक्षस की लड़ाई के माध्यम से पारिस्थितिक संकट को प्रस्तुत किया है। कवि कहते हैं कि पृथ्वी को स्वर्ग बनाने के लिए देवता एवं नरक बनाने के लिए असुर लड़ रहे हैं। विज्ञान एवं टेक्नॉलजी ने पृथ्वी को स्वर्ग बनाने के नाम पर पारिस्थितिकी के समस्त रहस्यों को खोजने का प्रयास किया। विज्ञान एवं टेक्नॉलजी के माध्यम से वर्तमान काल में मानव प्रयोगशाला में बैठकर पारिस्थितिकी को भी अपनी इच्छानुसार परिवर्तन करने में तत्पर है कवि कमलेश्वर साहू अपनी कविता के माध्यम से देवताओं और राक्षसों की लड़ाई से दिन-प्रतिदिन नष्ट हो रही पृथ्वी की रक्षा करने का आह्वान करते हैं। उनके शब्दों में -

"पृथ्वीवासियो !
ओ पृथ्वीवासियो !
पृथ्वी की रक्षा करो
देवताओं और राक्षसों की लड़ाई में
नष्ट हो रही पृथ्वी को।"[२३]

३.११. कांता शर्मा

मानव का अस्तित्व नदी के अस्तित्व पर ही निर्भर है। गंगा, यमुना जैसी भारत की पवित्र नदियाँ आज विषैली हो चुकी हैं। नदी प्रदूषण के बारे में कांता

शर्मा ने अपनी कविता 'अचानक नहीं सूखी नदी' में बताया है। नदी प्रदूषण का मुख्य कारण बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा छोडा गया औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ है। कांता शर्मा की राय में अनेक वर्षों की योजनाओं से नदी सूख गयी है, अचानक नहीं। नदी सूखने का प्रमुख कारण एक ओर तो बाँध निर्माण है। इससे नदी की गति भी बदल गयी। मानव की विकासात्मक गतिविधि विनाशात्मक गतिविधि बन गयी। इस बाँध परियोजना ने मानव के सामने अनेक पारिस्थितिक समस्याएँ उत्पन्न कर दिया। इससे नदी की जलीय जीव-जंतुओं की कई प्रजातियों, वनस्पतियों एवं कई जलीय पारिस्थितिक तंत्रों को नुकसान हुआ। सुन्दरलाल बहुगुणा, मेधा पड्कर, वंदना शिवा तथा अनेक परिस्थिति प्रेमी इसके विरुद्ध आवाज़ उठाते हैं। कांता शर्मा ने अपनी कविता में लिखा है कि इन सभी पारिस्थितिक आंदोलन को आगे बढ़ना है, क्योंकि इसके पीछे पारिस्थितिक संरक्षण का दायित्व भी शामिल है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से आज का मानव संपूर्ण पारिस्थितिकी पर विजय प्राप्त कर ली है। नदी सूखने के प्रति आशंका प्रकट करते हुए कांता शर्मा ने अपनी कविता 'अचानक नहीं सूखी नदी' में लिखा है -

"नदी अब समझ गई है
प्रकृति का संपूर्ण, भोग
स्वार्थी मानव की विजय है
उसकी लिप्सा के लिए
नदी सूख गई।"[२४]

आज के स्वार्थी मानव की अंधाधुंध दोहन को प्रस्तुत करते हुए कवयित्री ने यहाँ नदी संरक्षण पर बल दिया है। विश्व-भर के विकास की अनेक परियोजनाओं में पारिस्थितिकीय संरक्षण को भी गति और गंभीरता देनी चाहिए।

३.१२. कुमार अम्बुज

कुमार अम्बुज की 'परछाईं', 'कोई नहीं मरना चाहता', 'रोज़ का रास्ता' आदि कविताओं में भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, नव-उपनिवेशीकरण एवं औद्योगिकीकरण से उत्पन्न सांस्कृतिक विध्वंस के साथ-साथ पारिस्थितिक विध्वंस से

उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत देखने को मिलता है। 'परछाईं' शब्द साम्राज्यवाद एवं सूचना-संचार द्वारा किए जानेवाले पारिस्थितिक विध्वंस की ओर इशारा करते हैं। 'परछाईं' नामक कविता में कवि बताते हैं कि यह परछाई अकेले और अंधेरे के समय में कभी-कभी हमें डराती है, उसी तरह विकास के नाम पर होनेवाले प्रदूषण से समूचे पारिस्थितिकी त्रस्त है। आज के विकासशील राष्ट्र अपनी आर्थिक समस्याओं को समाधान करने एवं डॉलर मिलने के लिए अपने देश के प्राकृतिक संसाधनों को अमरीका जैसे साम्राज्यवादी ताकतों को बेच रहे हैं। इन लोगों ने अपने मुनाफे के लिए प्राकृतिक संसाधनों को अधिकाधिक दोहन एवं व्यापार कर समूचे विश्व में संकट की स्थिति पैदा कर दी है। इन शक्तियों ने सबसे पहले पेड़, पहाड़, नदी जैसे अमूल्य प्राकृतिक संसाधनों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया है। कवि बताते हैं कि सूचना तंत्र ने वायु मण्डल में इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक तरंगों का जाल बिछाया है। इन तरंगों के दुष्प्रभाव सभी जीव-जंतुओं पर देख सकते हैं। यह तरंग प्रजनन क्षमता में कमी, हाई ब्लड प्रशर, चिड़चिड़ापन आदि का कारण बन जाता है। कवि कुमार अम्बुज 'परछाईं' में लिखते हैं कि -

> "सूचना-तंत्रों की मकड़जाली छायाएँ गिरती हैं दिमाग में
> तमाम नदियों, पहाडों और पेडों पर गिरती है
> काली चिमनी की धुआँ भरी लंबी परछाईं।"[२५]

इस कविता में स्टोन-क्रॅशर की आवाज़ के माध्यम से कवि ने ध्वनि-प्रदूषण का संकेत दिया है। वातावरण में निरंतर बढता हुआ शोर पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत घातक है। धरती माता को कराहनेवाली स्टॉन-क्रशर की आवाज़ उनके संतुलन को बिगाड़ती है। कवि बताते हैं कि रोज़ देखनेवाला प्रकृति भी बदल गयी है, यह बदलाव प्राकृतिक नियमों के अनुसार नहीं है। कवि ने अपनी कविताओं के माध्यम से कीट-पतंग से लेकर आसमान तक के पर्यावरणीय तत्वों के दुःख को समझने का प्रयास किया है। कवि साम्राज्यवादी एवं पूँजीवादी शक्तियों को कंक्रीट कंकाल कहते हैं। विकास के नाम पर स्थापित मल्टी नैशनल कंपनियों के धनाढ्य चिमनियों का धुआँ पूरे वायु-मण्डल में प्रदूषण फैलाता है। मन्दिर की पुजारी से लेकर किसान तक इस धुआँ से प्रभावित है। कवि की राय में यह धुआँ आसमान

के दुःख में शामिल होता है। कवि ने 'रोज़ का रास्ता' नामक कविता में इस प्रकार लिखा है कि -

"कंक्रीट-कंकाल आते हैं बदलता है दृश्य
मल्टीनैशनल और धनाढ्य चिमनियों का धुआँ जुड़ता है
आसमान के दुःख में
उस धुएँ में शामिल होता है।"[२६]

आज के मानव सूखे खेत को भी अनदेखा करते हैं। प्राकृतिक जंगलों के स्थान पर कंक्रीट जंगलों का जाल बिछाया है। कवि बताते हैं कि उन चिमनियों का धुआँ सूखे खेत एवं कंक्रीट का जंगल भी पी जायेंगे। क्योंकि उनको उच्छ्वास करने के लिए प्राकृतिक वायु मिलना मुश्किल हो गया है। वर्तमान मानव उनके दुःख को समझने में प्रयास नहीं करते हैं। 'रोज़ का रास्ता' नामक कविता के माध्यम से रास्ते में होनेवाले प्रदूषणों को संकेत कर उसके विरुद्ध आवाज़ करने की प्रेरणा हमें देते हैं।

आज पर्यावरण असंतुलन की चरम बिंदु पर पहुँच चुका है। प्रदूषण से त्रस्त इस पर्यावरण में मानव की तरह सभी जीव-जंतु जीना चाहते हैं। 'कोई नहीं मरना चाहता' नामक कविता में इसकी सही अभिव्यक्ति मिलती है -

"नागफनी का सबसे नन्हा काँटा
लुप्त हो रही प्रजाति का हिरण
वीतरागी सन्यासी
या फ़र्श के नीचे दुबका कॉकरोच
सब जीना ही चाहते हैं यह जीवन पूरा।"[२७]

प्रदूषण ने जीव-जंतुओं के कई प्रजातियों के अस्तित्व को विनाश के कगार पर खडा कर दिया है। कवि कुमार अम्बुज की राय में विकास पर्यावरणीय नियमों के अनुकूल होना चाहिए, शोषण पर आधारित नहीं। आज की दुनिया में पारिस्थितिक चेतना पैदा करने में उनकी कविताएँ सक्षम हैं।

३.१३. केदारनाथ सिंह

प्रदूषण से ढके हुए पर्यावरण की रक्षा के प्रति चिंतित हैं कवि केदारनाथ सिंह। कवि जानते हैं कि मानव कल्याण की प्रगति के साथ-साथ उसके आसपास स्वच्छ और सुंदर पर्यावरण जीवन के विकास की मूलभूत आवश्यकता है। उनकी 'पानी की प्रार्थना', 'सपने में सालिम अली से एक भेंट', 'पानी बेचनेवाले की गुहार', 'बाघ' और 'घोंसलों का इतिहास' आदि कविताएँ पर्यावरणीय चेतना की दृष्टि से काफी सशक्त हैं।

वैश्वीकरण एवं बाज़ारवाद के अत्यधिक दोहन से हमारे पीने के पानी का भंडार दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा है। 'पानी की प्रार्थना' नामक कविता में संवाद के माध्यम से कवि ने पानी के वर्तमान दुःख दर्द को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि पृथ्वी का प्राचीनतम नागरिक है पानी। क्योंकि पानी सृष्टि का पहला तत्व है। पानी पर भूमण्डलीकरण एवं बाज़ारवाद का दबाव अधिक हो गया है। आज जलस्रोतों का नियंत्रण बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं विकसित राष्ट्रों के अधीन में है। इसलिए पानी प्रभु से पूछते हैं कि मेरे तट के चील कहाँ गया है ? आपको मालूम होगा। आज के लोग पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों को शोषण करने में लग्न हैं। पानी बताता है कि पहले चौंककर इधर-उधर देखनेवाले लोग आज मेरे सीने में अपनी लंबी चोंच गडा दी है। कई जानवर मुझ जैसे जलस्रोतों में पानी पीने के लिए आता है, पानी पीने से उत्पन्न उनके आनंद की आवाज़ अवर्णनीय है। आज यह सब नष्ट हो रहा है। प्यास लगाकर आनेवाले लोगों से क्या बताऊँ ? यह प्रश्न सभी जलस्रोतों एवं पानी को संकटग्रस्त बना दिया है। सभी जीवजंतुओं एवं वनस्पतियों को पानी उपलब्ध नहीं है। सूरज के सातों घोडे प्यास से बेहाल होकर उतर आया है। पानी पूछता है कि प्रभु मैं क्या करूँ ? उन्होंने मुझे चुल्लू भर उठाया। उसको पानी देना मुझे असंभव हो गया है। यह मेरे लिए शर्मिंदा की बात है। आज नदी जैसे सभी जलस्रोतों में कचरा मात्र ही दीख जाता है। कवि बताते हैं कि प्यासी लोग नदी के चेहरे पर झाँककर देखें तो उनको पानी के बिना कचरा मात्र ही मिल जाता है। फैक्टरियों से निकलनेवाला विषाक्त कचरा जलस्रोतों के प्रदूषण का कारण बन जाता है। पृथ्वी पर आज पानी दुर्लभ होने की कगार तक पहुँच गया है। जैसे-

"अंत में प्रभु, / अंतिम लेकिन सबसे ज़रूरी बात
वहाँ होंगे मेरे भाई-बंधु
मंगलग्रह या चाँद पर
पर यहाँ पृथ्वी पर मैं
यानी आपका मुँहलगा यह पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक
पहूँच चुका है।"[२८]

वर्तमान मानव नदी, तालाब जैसे जलस्रोतों के अलावा भूगर्भ के जल को भी अति दोहन किया है। आज के लोग व्यावसायिकता के नाम पर भी पानी को बेच रहे हैं। कवि 'पानी की प्रार्थना' में बताते हैं कि आज का समय बाज़ारों का है। इसमें प्रकृति-प्रदत्त संसाधन बिकने की वस्तु मात्र रह गयी है। यह बाज़ारों का समय होने के बावजूद भी पानी किसी रहस्यमय स्रोत से किसी न किसी रूप में हमेशा मौजूद होगा। कवि के शब्दों में -

"पर चिंता की कोई बात नहीं
यह बाज़ारों का समय है
और वहाँ किसी रहस्यमय स्रोत से
मैं हमेशा मौजूद हूँ।"[२९]

आज नदियाँ किसी मल्टी नैशनल कंपनी के अधीन हैं। हमारे राष्ट्रीय धरोहर नदी को एक प्राइवेट प्रोपर्टी के रूप में देखना एक संवेदनशील कवि के लिए मुश्किल है। दुर्भिक्ष आते समय नदी जल को बेचकर पूँजीवादी लोग पैसा कमाते हैं। 'पानी बेचनेवाले की गुहार' नामक कविता में कवि ने पानी बेचनेवालों को ईश्वर कहकर व्यंग्य किया है। 'घोंसलों का इतिहास' नामक कविता में कवि पक्षियों की दुनिया में ताजमहल या घोंसले बनाने की दुर्लभ तकनीक की बात बताते हैं। सब मिलनेवाले बाज़ार में पक्षियों का घोंसला नहीं मिलता है, वहाँ सिर्फ पिंजडा मात्र ही मिलता है। मानव की वास्तुकला घर के समान पक्षी की वास्तुकला है घोंसला। वर्तमान में पेड कम होने के कारण पक्षी को घोंसले का निर्माण करना मुश्किल हो गया है।

पर्यावरणीय संकट से आज सभी पशु-पक्षी विलुप्त हो रहे हैं। जलवायु के बदलाव के अनुसार प्रवासी चिड़ियों के झुंड राष्ट्रों की सीमाएँ लाँघकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचते हैं। आज प्रदूषण से उड़नेवाले पक्षी भी त्रस्त हो गये हैं। पक्षियों की वर्तमान दशा को सुनकर पक्षी वैज्ञानिक सालिम अली के आँखों में भी नमी आ जाती है। प्रदूषण से त्रस्त होकर उड़नेवाले पक्षियों के शरीर में खुजलाहट होती है। 'सपने में सालीम अली से एक भेंट' नामक कविता में एक मशहूर पक्षी वैज्ञानिक सालिम अली से पूछते हैं -

"जैसे पूछ रहा हो- / कि इन दिनों पृथ्वी पर
यह रह-रहकर खुजली-सी
क्यों होती है देह में ?"[३०]

पक्षी के इस प्रश्न के आगे सालीम अली भी निरुत्तर हो गये हैं। आज के इस पृथ्वी में पक्षियों का रहना दूभर हो गया है।

पर्यावरण के संतुलन को बनाये रखने में वन्य जीवियों की भूमिका महत्वपूर्ण है। भारत के जंगलों में पाये जानेवाले शेर, चीते, हाथी, बाघ आदि अनेक विशिष्ट जंतुओं का अस्तित्व खतरे में है। इसके संरक्षण के प्रति सचेत कवि हैं - केदारनाथ सिंह। उन्होंने अपनी कविता 'बाघ' में दिन-प्रतिदिन हो रहे बाघ विनाश का संकेत दिया है। इक्कीस खण्डों में बाघ की गतिविधियाँ प्रस्तुत करने के साथ-साथ कवि आधुनिक सभ्यता से प्रभावित समकालीन समाज की अनेक समस्याओं को भी प्रस्तुत किया है। शहरीकरण, वन-विनाश एवं अत्यधिक शिकार के कारण बाघ का अस्तित्व खतरे में है। आज बाघ को जीने के लिए जंगल की तरह सुरक्षित स्थान शहर में नहीं है। वर्तमान में मानव बाघ जैसे वन्य जीवों को मारकर उनकी खाल एवं हड्डियों को अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में बेचते हैं। कवि कहते हैं कि भविष्य में उनका स्थान बच्चों की किताब, माचिस के अंदर, चाय की प्याली एवं टी.वी स्क्रीन पर भी होगा। भारत के सत्रह प्रदेशों में स्थित बाघ अभयारण्यों में आज केवल १६०० बाघ मात्र ही ज़िंदा है। बाकी सब मर गये हैं। पृथ्वी के सारे के सारे बाघ नष्ट होने की आशंका व्यक्त करते हुए कवि ने 'बाघ' में लिखा है -

"उन्हें डर है कि एक दिन
नष्ट हो जायेंगे सारे के सारे बाघ
कि एक दिन ऐसा आएगा
जब कोई दिन नहीं होगा / और पृथ्वी के सारे के सारे बाघ
धरे रह जायेंगे / बच्चों की किताबों में।"[३१]

मानवीय एवं प्राकृतिक क्रियाकलापों से बाघ की दुर्लभ प्रजातियाँ मरणासन्न है। उनके खाल एवं हड्डियों के अवैध व्यापार को रोकना है। बढ़ता पर्यावरण-प्रदूषण प्राणी जगत् एवं जीव-जगत् के लिए घातक बन जाता है। इसकी रक्षा कवि केदारनाथ सिंह अपना दायित्व मानकर कविताओं के माध्यम से पानी एवं पक्षी जैसे पर्यावरणीय तत्वों को संरक्षित करने की प्रेरणा देते हैं। साथ ही पानी की निजीकरण की प्रक्रिया का विरोध भी करते हैं।

३.१४. कैलाश वाजपेयी

आसन्न पर्यावरण खतरों की अभिव्यक्ति कैलाश वाजपेयी की 'अनेकांत', 'जंगल की आवाज़' और 'रसखानि की समाधि पर' आदि कविताओं में मिलती है। आज के उपभोक्तावादी एवं विलासितापूर्ण जीवन शैली ने सभी प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट कर दिया है। 'अनेकांत' नामक कविता में पर्यावरण की योगदान की बात बताते हैं। 'मनुष्यता खतरे में है' वाक्य पढ़कर कवि कागज़ के बारे में सोचते हैं। कागज़ कैसे बनाया है ? इसका उत्तर भी कविता में विद्यमान है। किसी जंगल के पेड़ को काटकर कागज़ बनाया है। कवि बताते हैं कि पेड़ को काटकर गिरते समय ज़मीन भी धड़ाम से धँस गयी है। गिरते समय होनेवाले ज़मीन का दर्द कवि मात्र ही जानते हैं। क्योंकि पृथ्वी के भीतर एक ओर साम्राज्य है। जिसमें जकड़न जडों का जाल फैला है। लेकिन आज जंगल के स्थान पर कारखाने मात्र हैं। आज नदी तट पर नये-नये नगर बस गये हैं। यह नगरीकरण नदी संरक्षण के नाम पर नदी का दोहन करता है। जंगल, जल, वनस्पति के स्थान पर निरापद निर्जन धूसर चट्टान मात्र ही है। सभी प्राकृतिक संसाधन नष्ट होने के साथ-साथ मनुष्यता भी मर चुकी है। कवि ने लिखा है-

“कभी जल था, जंगल, वनस्पतियाँ, वातावरण
और अब सिर्फ जहाँ
धूसर चट्टान है निरापद, निर्जन
मर चुकी मनुष्ता।”[३२]

‘रसखानि की समाधि पर’ नामक कविता में मृत्यु की ओर चलनेवाली यमुना की वर्तमान दशा के बारे में बताते हैं। वहाँ की हरियाली एवं चिड़िया कहाँ जा चुकी है, कवि को भी पता नहीं। सड़े फूल एवं मल से क्षयग्रस्त होकर नदी दिन-प्रतिदिन मर रही है। प्रगति के नाम पर होनेवाली सभी क्रियाकलापों ने उनको एक गंदे नाले के रूप में बदल दिया है। वहाँ की गली-गली में गोपियों के स्थान पर कचरा खाकर रँभानेवाली गायें मात्र हैं। यमुना की दशा पर वाजपेयी जी ने लिखा है-

“जल तेल की चिकनाई
मल, सड़े फूल
थमा एक
क्षयग्रस्त, भरा नाला।”[३३]

‘जंगल की आवाज़’ नामक कविता में जंगल मानव से कहता है कि मैं तुम्हारी नासमझी से लगातार नष्ट हो रहा हूँ। मेरा जन्म पृथ्वी की कोख से मिट्टी तोड़कर हुआ है। अनगिनत जीव-धारी का पालन-पोषण मेरे इस साम्राज्य में हुआ है। सबका अपना-अपना संसार और संघर्ष भी है। अनेक जैविक संसाधनों का भंडार है जंगल। साथ ही विभिन्न जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों का आश्रयस्थान भी है। बादल भी जंगल पुकारकर आता है। हमारे खेतों का अन्न भी उनकी वजह से हुआ है। जंगल मानव को सब कुछ दिया है। जंगल कहता है कि तुम्हें रात-दिन घुमाकर झुलानेवाली पहिया मेरी ही छाती का खून है। यह भी वर्तमान मानव को पता नहीं। जनसंख्या वृद्धि एवं प्रगति के नाम पर दिन-प्रतिदिन अनेक जंगल काट रहे हैं। तेज़ी से समाप्त हो रहे जंगल विनाश का दुष्प्रभाव पर्यावरण पर भी पड़ रहा है। जंगल विनाश ने जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, प्रजाति-विलुप्तता जैसी अनेक समस्याओं को पैदा कर जीव-जंतु एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को संकट में पहुँचा दिया है। कवि कैलाश वाजपेयी के शब्दों में -

“तेज़ धारवाले औज़ार से
तुम जो मेरा वध कर रहे हो
तुमको नहीं पता दरअसल
तुम आत्मघात कर रहे हो।”[३४]

कवि ने प्राकृतिक संसाधनों की महत्ता को प्रतिपादित कर उसके संरक्षण पर बल दिया है। ज़मीन, जंगल, नदी जैसे प्राकृतिक संसाधन वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ भावी पीढ़ी के लिए भी आवश्यक है।

३.१५. गणेश गायकवाड

कवि गणेश गायकवाड 'पर्यावरण - २' नामक कविता में कहते हैं कि आज का मानव प्रगति की राह में सड़कें चौडी करने के लिए दिन-प्रतिदिन हज़ारों पेड़ काटते हैं। आज पेड के स्थान पर बिजली और टेलिफोन का खंभा है। आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण संसाधन है वन। एक संवाद के माध्यम से कवि ने मानव की क्रूर प्रवृत्तियों एवं पेड की महत्ता को प्रस्तुत किया है। सृष्टि का मूल तत्व ऑक्सिजन है। इसके बिना जीव का अस्तित्व संभव नहीं। मानव साँस द्वारा कार्बनडाई ऑक्साइड को छोड़ते हैं, पेड़ इस कार्बनडाई ऑक्साइड को स्वीकार कर पर्यावरण को संतुलित करते हैं। कवि के शब्दों में -

“सवाल - पेड़ हैं ही किस काम के
जवाब - सर, पेड़ तो दिन में कार्बनडाई-
ऑक्साइड का शोषण करते हैं।
और ऑक्सिजन बाहर छोड़ते हैं
पर्यावरण को शुद्ध रखने में मदद करते हैं।”[३५]

३.१६. गोविंद मिश्र

सभ्यता के विकास के साथ आये प्राकृतिक बदलाव को कवि गोविंद मिश्र ने 'वसंत कहाँ ?', 'अकृतज्ञ', 'पहाडियाँ' और 'पैसेवाले सैलानी' नामक

कविताओं में रेखांकित किया है। जलवायु तंत्र में होनेवाले परिवर्तन से आज समय पर न वसंत है, न गर्मी है, न बारिश है। हरित ग्रह गैसें इस तंत्र के ऊपर एक ऐसी परत बना लेते हैं, इसका प्रभाव बाहर की गर्मी एवं सर्दी पर पड़ा है। कवि बताते हैं कि वर्तमान समय में वसंत को किसी न किसी समय में भी देख सकते हैं। कवि अपनी कविता 'वसंत कहाँ ?' में तोतों, कोयलों जैसे पक्षियों के चहल-पहल को पेडों में ढूँढते हैं। चहल-पहल करनेवाले पक्षी तक आज वसंत में पागल के समान चुप हो जाते हैं। इन सबके बारे में 'वसंत कहाँ ?' में बताया है।

'पहाडियाँ' नामक कविता में कवि गोविन्द मिश्र बताते हैं कि घातक प्रदूषण के कारण असहाय लोग भाग रहे हैं। उनको अपना जीवन यापन बिताने के लिए एक इंच स्वच्छ भूमि आज की दुनिया में नहीं है। प्राकृतिक संसाधनों की अपार भंडार है पहाडियाँ। आज यह पहाडी के उपजाऊ भूमि भी रेगिस्तान हो गयी है। वहाँ की संपदाओं के दोहन के कारण अनेक जीवनदायी नदियों का वजूद भी संकट में है। अब वहाँ न वृक्ष संपदा है, न शांति है, न शीतलता है। पहाडी प्रांतों में मिलनेवाले दुर्लभ पेड़ों का अस्तित्व भी संकट में है। कवि ने 'पहाडियाँ' नामक कविता में आर्थिक एवं पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पहाडों के दुःख-दर्द को प्रस्तुत किया है। कवि के शब्दों में -

> "अब न वृक्ष संपदा,
> न शांति न शीतलता।"[३६]

पॉलिथिन की समस्या आज के विश्व की एक प्रमुख समस्या बन गयी है। चारों ओर पॉलिथिन की थैलियाँ देख सकते हैं। बहुत आकर्षक पॉलिथिन पर्यावरण एवं मानव के लिए खतरा बना रहता है। सैलानियों ने टिन के डिब्बे, खाली बोतलों एवं पॉलिथिन की थैलियों से सुंदर-स्वच्छ पृथ्वी को चंद सालों से कूडाघर बना दिया है। फेंकी हुई पॉलिथिन के अपशिष्ट तालाब जैसे जलस्रोतों में पहुँचकर जल-भराव की समस्याएँ पैदा करती हैं। इससे जलस्रोतों में पानी कम होकर तेज़ी से सूखने की स्थिति पैदा होगी। कवि ने 'पैसेवाले सैलानी' नामक कविता में लिखा है-

> "फिकने लगे टिन के डिब्बे
> खाली बोतलें / पोलिथिन के थैले

सुन्दर जगह को भी वे / चंद सालों में बना देंगे
कूडाघर।"[३७]

प्रदूषण से उत्पन्न सारी समस्याओं को प्रकृति एक माता की तरह सहन करती है। कवि गोविंद मिश्र ने अपनी कविताओं में प्रदूषण से त्रस्त पर्यावरण तत्वों के साथ धरती माँ की उदारशीलता भी व्यक्त किया है -

"प्रकृति उदार है / तो वह पहचानती भी है
अकृतज्ञों को।"[३८]

३.१७. गंगाप्रसाद विमल

गंगाप्रसाद विमल की 'वृक्ष', 'ढलानों पर हवा', 'काश पेडों के पाँव होते', 'पेड़ जडों से शुरू होता है' आदि कविताओं में पर्यावरणीय चेतना देख सकते हैं। 'वृक्ष' नामक कविता में कवि ने वृक्ष की महत्ता को प्रस्तुत किया है। कवि वृक्ष से पूछते हैं कि तुम्हारे पास मुँह नहीं है, फिर भी चारों ओर कैसा देखता है ? वृक्ष बिना हाथ से हमें फल देता है। इसकी गुणवत्ता के प्रति आज के मानव चिंतित नहीं हैं। वृक्ष अचल है। अचल होकर भी पेड़ इन्सान को हवा एवं सृष्टि को प्राणतत्व देते हैं। कवि पूछते हैं -

"अचल हो तुम / फिर भी चलाते हो हवा
पेड़ तुम / देते हो इन्सान को
सृष्टि को / प्राण तत्व।"[३९]

पेड़ पर्यावरण को संचालित कर गतिशील बनाती है। पेड जडों से धरती के भीतर अपना एक संवाद स्थापित करते हैं। पेड़ का गुण मानव जैसे बुद्धिजीवि लोगों के पास नहीं है। मानव जीवन के लिए आवश्यक संसाधन बिना थके पेड़ दे रहा है। यह स्वार्थ लोलुप मानव भूल गए हैं। कवि बताते हैं कि मानव को पेड़ की तरह दानवान होना चाहिए। पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण पेड़ पर भी निर्भर है। जडों से शुरू होनेवाला पेड़ बढ़कर आसमान की तरफ ऊँचाइयाँ ताकता है। पेड़ जडों से धरती एवं ऊँचाइयों से आसमान के साथ अपना रिश्ता कायम रखते हैं। सभी

क्रियाकलापों को देखकर पेड़ सदा मौन में रहते हैं। ‘पेड़ जडों से शुरू होता है’ नामक कविता में कवि बताते हैं कि पेड़ आदमी की तरह नहीं है।

पेड को पाँव है तो कैसा होगा ? इसका संकेत ‘काश पेडों के पाँव होते’ नामक कविता में मिलता है। पेड़ को पाँव है तो कथा, कविता के साथ दुनिया भी बदल होगी। सब जगह रहनेवाले उनको काटना मुश्किल होगा। कवि बताते हैं कि जलते सूरज के तपन को सहन करनेवाली पेड अत्यंत क्षमावान है। अचल होने के कारण मानव जैसे अपाहिज लोग बेरहमी से हरे-भरे पेडों को अंधाधुंध काटा जा रहा है। एक पेड असंख्य पशु-पक्षियों एवं जीव-जंतुओं का आश्रय स्थान भी है। ये अपाहिज लोग पेड को मात्र ही नहीं पक्षियों के आवास एवं प्रकृति के सदाबहार यौवन को भी काट देते हैं। कवि के शब्दों में -

“उन्हें काटते हैं लोग / तो काट देते हैं
पक्षियों के आवास / प्रकृति का सदाबहार
यौवन / काट देते हैं लोग।”[४०]

‘ढलानों पर हवा’ नामक कविता में कवि गंगाप्रसाद विमल ने रिश्तों की तरह विश्व के सभी जीव-जंतुओं पर पसरनेवाली हवा की गुणवत्ता को प्रस्तुत किया है। यह हवा पर्यावरणीय तत्वों पर कृपा करने के साथ-साथ आक्रमण भी करती है।

३.१८. चंद्रकांत देवताले

प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर सोचनेवाले कवि हैं चंद्रकांत देवताले। उनकी ‘हिंसक समय में’, ‘नागझिरी’ आदि कविताओं में अन्य सामाजिक विडंबनाओं के साथ-साथ बदलते पर्यावरणीय संघर्ष भी देख सकते हैं। पेड़, पक्षी, जल, नदी, जंगल, ज़मीन जैसे सभी पर्यावरणीय संसाधन आज अपना अस्तित्व खो रहे हैं। कवि देवताले बताते हैं कि आज बच्चों एवं पक्षियों के आँखों पर आशा की किरण नहीं है, सब उदास हो गया है। हमारे लिए एक भी संसाधन बचा नहीं है। बदलते समय के अनुसार प्राकृतिक तत्व एवं गरीब मानव के आँखों के खुशियों का

खून जम गया है। प्राचीन काल में लोग प्रकृति को पूजा कर रहे हैं, वर्तमान के मानव उसका शोषण कर रहे हैं। कवि इस शोषण को भी पूजा कहते हैं। उनके अनुसार प्राकृतिक संपत्तियों का शोषण युद्ध से भी बदतर है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"और इसे भी पूजा कहा जा रहा है
और युद्ध से भी बदतर युद्ध है।"[४१]

सभ्यता के विकास के साथ-साथ पर्यावरणीय संबंधों में भी बदलाव आया। प्राचीन काल के लोग प्रकृति के साथ आत्मीय संबंध स्थापित करते थे। लेकिन वर्तमान काल में विकास दौड़ में चलते मानव ने प्रकृति के साथ बेरहमी का भाव फैलाया। इस प्रकार का भाव 'नागझिरी' नामक कविता में मिलता है। कवि बताते हैं कि आज नाग विलुप्त हो रहे हैं। नागों को धार्मिक एवं पर्यावरणीय दृष्टि से समाज में महत्वपूर्ण स्थान है।

३.१९. जयप्रकाश कर्दम

विकास के नाम पर किया पर्यावरण-परियोजना है - बाँध निर्माण। नदी के बहाव रोककर करनेवाली यह बाँध परियोजना एक ओर वैश्विक स्तर पर एक अनुतरित समस्या बन गयी है। दूसरी ओर मानव के लिए खतरे की घंटी बनते जा रहे हैं। इसका संकेत दलित कवि जयप्रकाश कर्दम की 'बाँध' नामक कविता से हमें मिलता है। बाँध परियोजना से सर्वाधिक लाभ बिजली उत्पादन में मिलेगा तो सर्वाधिक नष्ट मानव सहित जीव-जंतुओं की आवास व्यवस्था को भी। कवि अपनी 'बाँध' नामक कविता में नदी से पूछते हैं लोगों को क्यों बेघर करती है ? बाँध विघटन से फसल, मकान, मवेशी सब पानी के साथ बह जाती है। अंत में बाँध निर्माण से उत्पन्न नदी प्रकोप असंख्य महामारी एवं व्यापक विनाश मात्र ही देता है। फिर कवि पूछते हैं कि -

"तुम क्यों भूल जाती हो
बाँध-बनाने आ गये हैं अब लोगों को
कितनी ही वेगवती नदियों पर
बना लिए गए हैं बाँध।"[४२]

केरल के मुल्लाप्पेरियार बाँध से हो रहे वाद विवाद आज भी हमारे सामने हैं। इस बाँध निर्माण को संरक्षित न किया जाये तो केरल के विभिन्न शहरों के पूरी आवास व्यवस्था नष्ट हो जायेगी। कविता के अंत में कवि नदी से पूछते हैं कि किसी न किसी दिन आप पर भी विकास के नाम पर बाँध बन जायेगा। उस समय तुम क्या करोगी ? किधर से बहोगी ? यह कविता भविष्य में सभी नदियों में बाँध विघटन से हो रही विनाश-लीलाओं की ओर इशारा करते हैं। केरल के कवि पी.वी.विजयन की कविता 'नदी को बहने दो' में भी इस प्रकार की भावना मिलती है।

३.२०. जयप्रकाश धूमकेतु

हमारे प्राणवायु का भंडार है वन। भारतीय संस्कृति विशेषकर अऱण्य संस्कृति एवं जीवन मूल्य वन के शांत वातावरण में विकसित हुआ है। इसलिए भारतीयों के लिए पृथ्वी के समान वन भी आराध्य है। जयप्रकाश धूमकेतु की 'चिपको आंदोलन' नामक कविता चिपको आंदोलन एवं वन-विनाश से उत्पन्न संकट पर केंद्रित है। कवि की राय में वन हमारे अस्तित्व और अस्मिता का पर्याय है। १९७३ में उत्तर प्रदेश के चमोली जिले में प्रारंभ हुआ आंदोलन है चिपको आंदोलन। कर्नाटक में इसको अप्पिको आंदोलन कहते हैं। इस आंदोलन का लक्ष्य है - वृक्ष संरक्षण, वृक्षारोपण, समुचित उपयोग। कवि का लक्ष्य भी यह है। कवि बताते हैं कि हमारे उपभोक्तावादी, बाज़ारवादी संस्कृति में मानव की आवश्यकताएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। इस बदलती संस्कृति में प्रकृति नंगे होकर प्राकृतिक संसाधन भी घटने लगती है। क्योंकि प्राकृतिक संसाधनों पर वर्तमान में हो रहे शोषण उतना गहरा है। इसलिए कवि कविता के आरंभ में बताते हैं कि -

"चिपको आंदोलन
प्रकृति से
बदलती संस्कृति से
वनराजी के एक हुक्म पर
सारे शहर जंगल हो चले।"[४३]

कवि बताते हैं कि जंगल की कमी का प्रमुख कारण जनसंख्या बढ़ाव एवं बदलते औद्योगिक-नागरिक संस्कृति है। जंगल की कमी मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए विनाशकारी सिद्ध होता है। विभिन्न पशु-पक्षियों के जैविक-कोष है जंगल। उनकी कमी से कई जानवर बेशुमार बन जाते हैं।

"आदमी की तादात / बडी तेज़ी से
और बढ़ने लगे हैं / बेशुमार जानवर।"[४४]

विभिन्न प्रकार के जानवरों की मृत्यु भी पारिस्थितिक असंतुलन का कारण बन जाते हैं। फिर कवि बताते हैं कि जंगल की कमी वर्तमान मानव के लिए अत्यंत भयानक होता है क्योंकि हिंसक पशुओं को छुपाने के लिए जगह नहीं है। इससे भी प्रकृति असंतुलित हो जायेगी। इस दृष्टि से देखा जाये तो चिपको आंदोलन हमारे लिए बहुत लाभदायक है। क्योंकि प्रकृति संतुलित हो जायेगी, हिंसक पशुओं, पक्षियों तथा अन्य जानवरों को आवास स्थान मिलेगा। वनों की कमी के कारण हमारे लिए स्वच्छ वायु मिलना मुश्किल हो गया है। साथ ही इससे उत्पन्न वैश्विक तापन, जलवायु परिवर्तन आदि पारिस्थितिक समस्याओं को दूर करना आज असंभव-सा बन गया है। जनताओं के मन में वन संरक्षण के प्रति जागरूकता पैदा करने में जयप्रकाश धूमकेतु की कविता सक्षम है।

३.२१. धर्मवीर शर्मा

धर्मवीर शर्मा 'दूषित पर्यावरण' नामक कविता में पर्यावरणीय संतुलन की आवश्यकता की बात बताते हैं। कवि कहते हैं कि पर्यावरण के बिना तुम्हारा जीवन मुश्किल होगा। पहले बाग में चिडियाओं की चहचहाहट होती थी। आज वहाँ कुल्हाडी की आवाज़ चल रही है। प्रकृति के साथ आज के मानव ने अधिक छेड़छाड़ शुरू कर दिया है।

कवि ने कारखानों से उत्पन्न औद्योगिक पर्यावरणीय संकट को भी प्रस्तुत किया है। कारखानों से उत्पन्न विषैली गैस मिश्रित धुआँ समस्त पारिस्थितिकी को भी प्रदूषित कर रहा है। ओज़ोन परत में छिद्र, अम्ल वर्षा जैसे अनेक घातक

बीमारियों का कारण बन जाता है। वे यमुना नदी की वर्तमान स्थिति के बारे में बताते हैं। औद्योगिक प्रदूषण से त्रस्त यमुना नदी आज मृत्यु आसन्न है। साथ ही संवेदनशील कवि ने जलवायु परिवर्तन का भी संकेत दिया है। ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव के कारण आज विश्व में निरंतर तापमान में वृद्धि देख सकते हैं। गर्मी में न गर्मी है सर्दी में न सर्दी।

आज का हकीकत है जलवायु-परिवर्तन। यह सभी जीव-जंतुओं के लिए अहितकर है। साथ ही अनेक पारिस्थितिक संकटों का कारण बनकर उसके संतुलन को भी तेज़ी से बिगाड़ती जा रहा है। कवि कहते हैं कि प्रकृति के दोहन से मानव को अनेक प्रकार की विपदाओं को सामना करना पडेगा। वनों की अंधाधुंध कटाई नभ, जल एवं थल के पारिस्थितिक संतुलन को भी बुरी तरह से प्रभावित किया। कवि ने यहाँ वन-संरक्षण पर बल दिया है। वनों की कटाई से ही विश्व की समस्त पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ जाता है। साथ ही पृथ्वी की तापक्रम बढ़ाने में भी सहायक है। जिसके कारण पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में सहायक कई जीवों की प्रजातियाँ विनष्टि के कगार पर पहुँच गयी है। भावी समस्याओं के प्रति हमें सचेत करनेवाले कवि धर्मवीर शर्मा पारिस्थितिक संकटों को दूर करने के लिए पृथ्वी की ओर लौटने की प्रेरणा देते हैं -

> ‘‘अगर चाहे जीवन मं सुख-चैन पाओ।
> सभी छोड़ कुदरत की गोदी में जाओ।’’[४५]

३.२२. नंद चतुर्वेदी

नंद चतुर्वेदी की ‘भूकम्प के बाद’ में कवि ने अनिरुद्ध पटेल के माध्यम से भूकम्प से होनेवाली सर्वनाश स्थिति को प्रस्तुत किया है। कहा जाता है कि भूकम्प मूलतः पृथ्वी के ऊपर होनेवाली भूगर्भीय घटनाओं का परिणाम है। आज उसमें मानवीय क्रियाकलाप भी शामिल है। कवि बताते हैं कि सतरह मंजिलवाली ‘द्वाराका’ का मालिक था अनिरुद्ध पटेल। आकाश को करीब जानेवाली अनिरुद्ध पटेल की सतरह मंजिलोंवाली इमारत भी भूकम्पी तरंगों से ढह गया। भूकम्प से आनेवाली विभीषिकाओं से भयभीत उसने एक मंदिर के छत पर प्रार्थना एवं मल्टीनैशनल कंपनी

से याचना की है। इस आपदा से कई बच्चा मर गया है, कुछ लोग विकलांग एवं मूर्च्छित हो गये हैं, कुछ स्त्रियाँ इमारत की फटी टुकडे-टुकडे होती दीवारों में से भाग रही हैं। मानव की दयनीयावस्था के साथ-साथ कवि ने पेड़, पक्षी एवं पहाड जैसे पर्यावरणीय तत्वों की स्थिति को भी प्रस्तुत किया है। सभी पर्यावरणीय तत्व सूने एवं निर्जन हो गये हैं। कवि के शब्दों में -

"पेड़ों की क्लांत, थकी-छायाएँ / पक्षियों की तृषातुर खुली चोंचवाले शव
पहाडों से लुढ़की असंख्य चट्टानें
धूल और मलबा हो गए घर।"[४६]

३.२३. नवल शुक्ल

पृथ्वी की रक्षा की चिंता नवल शुक्ल की कविताओं में द्रष्टव्य है। 'खड़े-खड़े देखेंगे', 'खुशी' और 'धरती से विदा' नामक कविताएँ उदाहरण हैं। आज की पृथ्वी में पेड़ कम है, चिडिया भी कम। कवि को भी पता नहीं वह कहाँ चला गया? पर्यावरण का संतुलन भी बिगड़ गया है। 'खुशी' नामक कविता में कवि बताते हैं कि आज के सत्ता-लोलुप मानव को गाँव गाँव, खेती और उसकी स्थितियों के बारे में सोचने के लिए समय नहीं है। 'धरती से विदा' नामक कविता में कवि बताते हैं कि कुछ प्राकृतिक चीज़ें लगातार कम हो रही हैं। धरती में पीने का पानी तक का अकाल हो रहा है। जलस्रोतों में गंदगी युक्त पानी है। पेड़-पौधों के कटाव के दुष्प्रभाव जलवायु परिवर्तन पर भी पडा है। जंगल, ज़मीन, पेड़-पौधे, फूल, जीव, नदी जैसे प्राकृतिक संसाधन मुनाफाखोर लोगों के हाथ में है। उनको पृथ्वी नष्ट हो जाने की चिंता नहीं है। कवि के शब्दों में -

"पेड़-पौधे कम हो रहे हैं
कम हो रही हैं ऋतुएँ
लुप्तप्राय हो गयी कुछ नदियाँ, कुछ फूल, कुछ जीव ।"[४७]

कविता के अंत में कवि बताते हैं कि धीरे-धीरे काँपते हुए हाथ जोड़कर उन सबके झुंड धरती से विदा ले रहे हैं। कवि ने इस कविता में मानव जीवन के लिए आवश्यक प्राकृतिक चीज़ें नष्ट होने की आशंका व्यक्त की है।

३.२४. निर्मला पुतुल

निर्मला पुतुल की 'बूढी पृथ्वी का दुख', 'गंगा' आदि कविताओं में पारिस्थितिक चेतना विद्यमान है। 'बूढी पृथ्वी का दुख' नामक कविता के आरंभ में कवयित्री ने पेड़ की वर्तमान दशा के बारे में बताया है। क्योंकि आज पेड़ को इस धरती में जीने के लिए डर है। अपनी आवश्यकताओं के लिए किसी न किसी दिन मानव उसे भी काटेगा। दिन-प्रतिदिन पेड़ को काटनेवाले मानव से कवयित्री पूछती हैं कि चमकती कुल्हाडियों के भय से पेड़ों का चीत्कार क्या तुमने कभी सुना है ? पेड़ की हिलती टहनियों को भी उन कुल्हाडियों के वार को सहन करना पड़ता है। साथ ही निर्मला पुतुल यह भी पूछती हैं - धरती पर कोई भी पेड़ कटकर गिरते समय तुम्हारे भीतर धमस क्या होती है ? पेड़ों के दुख की तरह कवयित्री ने 'बूढी पृथ्वी का दुख' में नदी के दुख को भी प्रस्तुत किया है। आज नदी को कल-कल बहते समय सन्तोष नहीं है। उसे सदा समय केवल दुख ही दुख है। कवि नदी को प्रदूषित करनेवाले शक्तियों से पूछती हैं - रात के सन्नाटे में अँधेरे से मुँह ढाँप किस कदर रोती हैं नदियाँ ? यह कभी भी आपने सुना है ? कवयित्री प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध करनेवाले विभिन्न कार्यकलापों का विरोध करती हैं। नदी, पेड़ जैसे पर्यावरणीय तत्वों के दुख बताने के साथ-साथ कवि ने पृथ्वी के बारे में इस प्रकार लिखा है -

> "थोडा-सा वक्त चुराकर बतियाया है कभी
> कभी शिकायत न करनेवाली
> गुमसुम बूढी पृथ्वी से उसका दुख ?"[४८]

आज धरती मानव की सभी निष्ठूर प्रवृत्तियों को सहन करती है। फिर भी मानव उसकी सहनशीलता को जाने-अनजाने दिन-प्रतिदिन धरती को शोषण करने में व्यस्त हैं। इसके प्रति कवयित्री 'बूढी पृथ्वी का दुख' में रोष प्रकट करती हैं।

'गंगा' नामक कविता में कवयित्री ने गंगा की वर्तमान दशा को प्रस्तुत किया है। कवयित्री बताती हैं कि 'गंगा तेरा पानी अमृत' जैसे गीतों का अर्थ भी बदल गया है। अमृत के स्थान पर आज गंगा में विषाक्त पानी भर गया है। आज की विषाक्त गंगा के बारे में क्या कहूँ ? आज भागीरथ ज़िंदा है तो उसकी वर्तमान स्थिति को

देखकर गंगा में डूबकर आत्महत्या कर लेंगे या लम्बा जेहाद छोड़ देंगे। आज उसका आँचल भी मैला हो गया है फिर भी सब कुछ सहकर सदा बह रही है। कवयित्री बताती हैं सबको मुक्ति देनेवाली गंगा आज अपनी मुक्ति के लिए अँधेरे में मुँह ढाँपकर रो रही है। लेकिन उसकी सिसकियाँ सुनने के लिए कोई नहीं है। क्योंकि हमारी पुण्य नदी गंगा मानव के समस्त पापों को धोकर शहर की गन्दगी को भी पचाती है -

"कैसे-कैसे सितम झेली तुम
कभी पापों को धोया
तो पचाया कभी शहर की गन्दगी।"[४९]

कवयित्री निर्मला पुतुल ने अपनी कविताओं में जीवनदायिनी धरती के प्रति असीम स्नेह प्रकट किया है।

३.२५. नीलाभ

कवि नीलाभ 'नदी', 'सरस्वती - १', 'सरस्वती - २' आदि कविताओं में नदी की महत्ता को प्रस्तुत कर वर्तमान नदी संकट के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है। 'नदी' में कवि बताते हैं कि नदी को अपना एक शासन है, वह नियम आदिकाल से लेकर आज तक पालन करती है। नदियाँ दिन-रात सागर से मिलने के लिए दौड़ रही हैं। नदी को समुद्र से मिलने की इच्छा तीव्र है। कभी-कभी अपने किनारे को छोड़कर नदी समुद्र बन जाती है। आज उस नदी में दोबारा स्नान करना असंभव-सा हो गया है। क्योंकि नदी दिन-प्रतिदिन प्रदूषित होकर मर रही है।

'सरस्वती - १' नामक कविता में कवि नीलाभ खोयी हुई सरस्वती नदी की तलाश करने में व्यस्त है। वर्तमान में सरस्वती की गुणवत्ता पण्डे-पुरोहितों की कथाओं में मात्र ही सुनते हैं। जंगल-पहाड छानकर, रेत के विस्तार को नापकर कवि नदी को खोज रही है। कवि को भी पता नहीं है कि यह नदी कहाँ गयी है ? उस नदी की नीली निर्मल काया दूर तक चमकनेवाली है। उस नदी तट पर सघन पेडों के झुण्ड, हिला-हिलाकर बुलानेवाली हरे-भरे पत्ते एवं तट की ओर आमंत्रित करनेवाली पगडण्डियाँ भी हैं। लेकिन आज आदिवासी औरत की तरह नदी लुप्त होती जाती है।

वहाँ रेत के अलावा कवि को भी खोयी हुई नदी नज़र नहीं आती है। 'सरस्वती - २' नामक कविता में कवि बताते हैं कि नदी के स्थान पर खण्डहर शहर एवं रेत मात्र ही है। इतिहास में भी इस नदी का स्थान खोजना है। भारत कृषि प्रधान देश है। इस पर आज देश की अर्थ व्यवस्था बनी है। लेकिन आज खेतों को सिंचित करनेवाली नदी जैसे जलस्रोत समाप्त होते जा रहे हैं। कवि लिखते हैं कि सरस्वती नदी में यज्ञ हुआ था, यहाँ से मंत्र भी रच गये थे। पितरों का तर्पण भी इस नदी में किया था। आज यहाँ रेत एवं तपती चट्टान मात्र ही देख सकते हैं। उसका नामोनिशान तक मिट चुका है। नीलाभ के शब्दों में -

"अब यहाँ कुछ नहीं है
सिर्फ रेत का विस्तार
        और तपती चट्टानें
सारे निशान गायब हो चुके हैं
        कहीं कोई सुराग नहीं।"[५०]

३.२६. प्रेमशंकर शुक्ल

प्रेमशंकर शुक्ल 'सूखी झील', 'पानी का मतलब', 'पानी एक आवाज़ है' आदि कविताओं में पानी की महत्ता को प्रस्तुत कर वर्तमान जल संकट की ओर इशारा करते हैं। 'सूखी झील' नामक कविता में कवि बताते हैं कि सूखी झील को देखकर आसमान के चेहरे पर गहरी बेचैनी है। उनका चेहरा भी बिवाई की तरह फटा होकर रूखा हुआ है। दुनिया की कई महत्वाकांक्षी योजना एवं परियोजनाओं ने झीलों को भी महाविनाश कर दिया है। प्राचीन काल में इस झील के पानी ने पूरे शहर का पालन-पोषण किया है, लेकिन आज वही झील अपनी व्यास में छटपटाता है। कवि के शब्दों में -

"जो झील का पानी / पालता था पूरा शहर
वही झील आज / अपनी व्यास में छटपटाती है।"[५१]

कवि 'पानी का मतलब' नामक कविता में बताते हैं कि आदमी को बचाकर दुनिया को मतलब देना है पानी का मतलब। एक तिहाई भू-भाग के पानी को

संरक्षण करना वर्तमान मानव के सामने सबसे बडी चुनौती बन गयी है। एक घूँट भर की प्यास को दूर करने में पानी नहीं है, स्थिति इस तरह हो जाये तो बिना पानी के भविष्य की तस्वीर बडी भयानक होगी। पानी की वर्तमान एवं भावी दशा के प्रति कवि चिंतित हैं। कविता के अंत में कवि बताते हैं कि ठंडा मतलब कोकाकोला नहीं है। पेप्सी, कोककोला जैसे बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भारत भूगर्भीय जल-स्रोतों का शोषण कर रही हैं। इसका विनाशकारी प्रभाव आज केरल के प्लाच्चिमडा में देख सकते हैं। आज भारत में पानी के बाज़ारीकरण की प्रवृत्ति देख सकते हैं। कवि प्रेमशंकर शुक्ल इसका विरोध करते हैं -

> "पानी का मतलब / ठंडा मतलब कोककोला नहीं
> प्यास की वर्तनी को / बाज़ार बना देने की प्रवृत्ति के
> खिलाफ होना है / सख्त खिलाफ !"[५२]

वृक्ष, खेत, पशु, पक्षी, मानव जैसे सभी पारिस्थितिक तत्व के लिए आवश्यक संसाधन है पानी। 'पानी एक आवाज़ है' नामक कविता में कवि कहते हैं कि सृष्टि की पहली आवाज़ है पानी। सभी पर्यावरणीय तत्वों की प्यास मिटाता है। वृक्षों को हरा-भरा बनाकर पारिस्थितिक तंत्र को संतुलित बनाये रखता है। इस पानी ने पंचवटी में सीता और राम के प्यास को मिटाया है। केरल के धान के खेत एवं यूक्रेन की घास मैदान की हरियाली भी पानी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कविता के अंत में इस प्रकार लिखते हैं कि पानी में सबकी आवाज़ बचाने का स्वर-गंगा बह रही है। कवि के शब्दों में -

> "पानी एक आवाज़ है
> जिसमें सबकी आवाज़ बचाने की स्वर-गंगा
> बह रही है।"[५३]

३.२७. बद्री नारायण

तापमान में वृद्धि पारिस्थितिक विनाश का सूचक है। 'गर्मी' नामक कविता में बद्री नारायण बताते हैं कि इस धरा पर सावन की गर्मी भी असहनीय है। पारिस्थितिक तंत्र के जैविक एवं अजैविक तत्वों में कुहराम मच गया है। क्योंकि आज

पर्यावरणीय घटकों के बीच के संतुलन भी नष्ट हो गयी है। दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे परमाणुओं के क्रोध का नतीजा है यह गर्मी, यानी तापमान की वृद्धि। पृथ्वी के नीचे के सर्पों की फुफकार के फलस्वरूप उत्पन्न है यह प्राकृतिक परिणाम। इस विनाशकारी परिणाम ने पारिस्थितिकी के लिए विपत्ति को निमंत्रण दे दिया है। इससे जीव-जंतुओं की प्रजातियाँ भी विलुप्त हो जाती है। पृथ्वी पर खूनी प्रतीकों की सत्ता के अश्वटापों से डरकर ताज़ी हवाएँ भी विलुप्ति की ओर अग्रसर है।

कवि ने सोचा कि अगली सुबह में गर्मी से थोडी-सी मुक्ति मिलेगी। लेकिन कवि का यह विचार भी व्यर्थ हो गया है। क्योंकि इस गर्मी ने कवि के स्वप्न-पंखों को पुरछार कर डाला है। बढ़ता तापमान कवि को भी असहनीय बन जाता है। भविष्य में पृथ्वी की औसत तापमान आज से अधिक बढने की संभावना है। इसका संकेत कवि ने अपनी कविता के माध्यम से दिया है। किसी किताब में लिखा है मजलूमों की हाय बढ़ने से पृथ्वी पर गर्मी बढ़ जाती है। कवि ने किताबों में भी इसका कारण खोजने का प्रयास किया है। बढ़ते तापमान से धरा का अक्षयिनी अमृत कुण्ड भी सूख जाता है। भारत के कुछ प्रदेश भी हर साल इस सूखे से प्रभावित है। इस भयानक समस्या की चिंता आज किसी को भी नहीं है। कवि 'गर्मी' में बताते हैं -

"सृष्टि में इतनी बडी घटना घट जाती है
और कहीं से कोई भी आवाज़ नहीं आती है
तो धरा पर भयानक उमसवाली गर्मी बढ़ जाती है।"[५४]

कवि ने यहाँ जलवायु परिवर्तन की वर्तमान स्थिति के बारे में बताया है। आज आकाश में कई विप्लवी तारे देख सकते हैं। नक्षत्र पर भी ग्रीन हाउस गैसों का दुष्प्रभाव पड़ता है। आकाश गंगा को भी आकाश का रंग बदलना मुश्किल हो गया है। बढ़ते तापमान के परिणाम स्वरूप आनेवाले बाढ़, सूखा जैसे प्राकृतिक प्रकोप के कारण पृथ्वी के अधिकांश भाग रेगिस्तान बन जायेगा। गर्मी को कम करने के लिए कार्बन कटौती अनिवार्य हो गया है। कवि ने इसके प्रति सचेत कराया है।

हमारी सभ्यता, संस्कृति एवं राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है मोर। दिन-प्रतिदिन हो रहे शिकारों से आज मोर भी संकटग्रस्त हैं। 'मोर नाच' नामक कविता में

कवि बद्रीनारायण बताते हैं कि नव-धनाढ्य शेयर बाज़ार के दल्ला, न्यायिक अधिकारी, कोई शंकराचार्य, कोई सन्यासी में कोई भी हो सकता है शिकारी। आज के मोर ध्वज मोरों को बचाने के स्थान पर मोर को मारकर उनके मांस स्वाद को बहुराष्ट्रीय विज्ञापन के माध्यम से प्रचार-प्रसार कर रहा है। कवि के शब्दों में -

"कि कौन मोरध्वज मोरों को बचाने की जगह
उनके मांस के स्वाद के प्रचार के लिए किसी
बहुराष्ट्रीय विज्ञापन एजेंसी के साथ कांट्रेक्ट
साइन करने की योजना बना रहा है।"[५५]

आज संसार बदल गया है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में पुराने ज़माने के समान कोई भी प्रेमी और विरहिणी नहीं है। इसलिए कवि पूछते हैं कि कौन रानी अपने बिल्डर प्रेमी से मोर की आँख माँग रही है ? और कौन विरहिणी मोर की पंख माँग रही है ? जनतांत्रिक, गाँधीवादी या अंबेड़करवादी ढंग से मोर को बचाना आज असंभव-सा बन गया है। आज चोर, अपराधी, हत्यारे, मंत्री के रिश्तेदार, फिल्म ऐक्टर, पुरोहित आदि लोग भी बेशकीमती लकडियाँ बेचने की वजह से हिरण के सींगों का भी व्यापार कर रहा है। इसका उल्लेख बद्री नारायण की 'कौतुक कथा' नामक कविता में मिलता है। सूखे हुए पेड़ में चिडिया आकर बैठे तो उस वृक्ष हरा-भरा बन जाता है। उस पेड़ से चिडिया जाती तो फिर भी सूखा बन जाता है। चिडियाओं की आवास स्थान है वृक्ष। वर्तमान लोग उनको भी व्यवसाय करने के लिए आरा से काटते हैं। वृक्षों का कटाव चिडियाओं के लिए बहुत दुखद बात है। व्यवसायी लोग वृक्ष के साथ चिडिया को भी जाल बिछाकर कैदकर बाज़ार में बेचने में व्यस्त है। कविता के अंत में उनके व्यवसाय में लगे लोगों को उनको हत करने से दुख होता है। कवि ने यहाँ प्राकृतिक संसाधनों के व्यवसाय में लगे लोगों के मानसिक परिवर्तन के बारे में बताया है। उनके लिए भी यह चिडिया सिर्फ चिडिया न होकर स्मृति-पुंज है। पंक्तियाँ हैं -

"उसे हतने के व्यवसाय में लगे लोग काफी बाद में समझ पाए
कि यह चिडिया सिर्फ चिडिया न होकर
स्मृतियों का पुंज है
जिसे न तो हता जा सकता है

न मारा जा सकता है
न ही जलाया जा सकता है।"[५६]

यहाँ कवि मोर, चिडिया, वृक्ष जैसे प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने की आवश्यकता के बारे में बताते हैं। मोर के मांस का व्यवसाय भारतीय संविधान के अनुसार दंड मिलनेवाला कार्य है। उनका संरक्षण पारिस्थितिक संतुलन के लिए भी अनिवार्य है।

३.२८. बलदेव वंशी

बलदेव वंशी का 'धरती हाँफ रही है' नामक काव्य-संकलन पारिस्थितिक चेतना से ओतप्रोत है। कवि बताते हैं कि मानव की सभी पीडाएँ धरती चुपचाप सहन करती है। सबको सहन करनेवाली हमारी नाव है धरती। आज के विकरालतम समस्याओं में से एक है - औद्योगिक-रासायनिक कूडा करकट एवं घरेलू कचरे का निपटान। इन चीज़ों को वर्षों से मिट्टी के ढेर के नीचे दबाते हैं। यह अपशिष्ट मिट्टी को मात्र ही नहीं जल, वायु जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को भी प्रदूषित कर देते हैं। कवि बताते हैं कि मनुष्य जीवन के आधुनिक आयामों के सामने धरती लज्जित होती है। विकास के नाम पर होनेवाली प्रगति ने धरती को एक वेस्ट बॉक्स बनाया है। इस कूडा-कचरे के कारण धरती अपना धर्म निभाने में असमर्थ हो गयी है। कवि बताते हैं कि नव-उपनिवेशवादी एवं पूँजीवादी सभ्यता के उत्पाद है - रासायनिक और पॉलिथिन। वर्तमान मानव को इसके बिना जीना मुश्किल हो गया है। कवि की राय में महानगरीय कचरे में महाभूत हैं - रासायनिक और पॉलिथिन। इससे उत्पन्न विभीषिकाओं को संकेत करते हुए 'कूड़ा-कचरा और कोंपलें' में कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"महानगरीय कचरे में
महाभूतों के ऐसे-ऐसे सम्मिश्रण
नए सभ्य उत्पाद-रासायनिक
और पॉलिथीन-
धरती पचा नहीं पाई।"[५७]

नगर एवं महानगरीय सभ्यता ने संपूर्ण विश्व में कारखानों, फैक्टरियों एवं सूखे बरसाती नालों का जाल बिछाया है। कवि बताते हैं कि औद्योगिक एवं वैज्ञानिक प्रगति ने पर्यावरण के सभी तत्वों में विषाद मात्र ही दिया है। उसमें कुलबुलाते रेंगते कीट, घाव, टीसें मात्र ही नहीं आँसू भी हैं। कवि ने अपनी कविताओं में धरती की सहनशीलता एवं व्यथा को प्रस्तुत किया है। आज धरती के धमक क्षणांश में बमों से बने कुओं में समा गया है। परिंदे भी आज तड़प रहे हैं।

कवि धरती से पूछते हैं कि इन सभी क्रियाकलापों को कैसे सहती है? आज उनकी पसलियों तक लगातार युद्ध चल रहा है। धरती के प्रति संवेदनशील कवि बलदेव वंशी के लिए यह असहनीय बात है। कवि बताते हैं कि सभी पर्यावरणीय तत्वों में एक चेतन सत्ता विद्यमान है। वृक्ष से टूटे फल को पता नहीं कि वृक्ष ने अपने जीवनकाल में कितनी ऋतुएँ झेली हैं या सही हैं। आज समय पर न वर्षा है, न गर्मी है, न मौसम है। जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न दुःख-दर्द को भी उनको सहना पड़ता है। आज के मानव ने अपने आर्थिकोपार्जन के लिए दिन-प्रतिदिन हज़ारों वृक्षों को काट रहे हैं।

बेमौत मरे पेडों के पंजरों में पक्षियाँ अब भी घोंसला बना रहे हैं। पेडों के कटाव उनके अस्तित्व को ही संकटग्रस्त बना दिया है। कवि बलदेव वंशी पेडों से पूछते हैं कि ये पंजर अपने सूने जीवन को अगले मौसम तक कैसे बहकायेंगे ? कवि आज के मानव से कहते हैं कि सारा क्रियाकलाप पर्यावरणीय तत्वों के अनुकूल होना चाहिए। अपने को धरती से जोड़कर देखो उस समय मालूम होगा कि सारी धरती सजल है। धरती माता हमें अमृत मात्र ही दिया है। वृक्ष एवं झाडों का समूह उनके रोम है। आज उनको उखाड़कर महानगरों एवं मंज़िलों का निर्माण कर रहे हैं। इसका संकेत उनकी कविताओं में द्रष्टव्य है।

कवि बताते हैं कि पेड़, पशु, पक्षी, पहाड़-जंगल एवं मानव जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को अपने-अपने संकेंद्रक है। वध-शालाओं में दिन-प्रतिदिन बँधे कटे हज़ारों पशु छटपटाते हैं। पशुओं का वध भी पारिस्थितिक असंतुलन का कारण बन जाता है। किसी वस्तु की कमी पर्यावरणीय तत्वों का समस्त क्रियाकलापों को

बिगाड़ती है। यह बिगड़ाव समस्त विश्व के विनाश की आहट है। विज्ञान एवं सूचना-प्रौद्योगिकी के माध्यम से आज मानव ने पृथ्वी के संकेंद्रक तक को ही छूकर बेध रही है। कवि बताते हैं कि हर हाल में धरा का धैर्य उनके संकेंद्रक में निहित है। यह ब्रह्माण्ड बहुत बडा है। इसमें सभी तत्व एक-दूसरे पर भी निर्भर है। कवि बताते हैं कि पारिस्थितिक विनाश के साथ-साथ अनेक सभ्यताएँ भी मर जाती हैं। आज आसमान में हवाई जहाज़ मात्र ही है, उड़ते पक्षी को देखना असंभव-सा हो गया है। 'युद्ध प्रदर्शनी : तीन चित्र' नामक कविता में कवि ने कहा है -

"आकाश में पक्षी नहीं
दूर-दूर तक नंगे आसमान में
चीलों-से मँडराते हवाई जहाज़
इक्का-दुक्का ....।"[५८]

इस विश्व बाज़ार में धरती, आकाश, नदी, पहाड़, आलू, हल्दी, नीम आदि बिकने का साधन बन गये हैं। कवि बलदेव वंशी बताते हैं कि सभी प्राकृतिक संसाधन आज बिक रहे हैं, भावी पीढ़ी के लिए कुछ भी नहीं है। आज जंगल में भी बाज़ार पसर गया है। गुजरात भूकम्प के संदर्भ में लिखी कविता है 'लगातार झटकों के बीच'। कहा जाता है कि भूकम्प एक प्राकृतिक आपदा है, लेकिन आज का भूकम्प मानवीय एवं प्राकृतिक क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न है। इससे मकान, बड़ी-बड़ी इमारतें आदि सब धूल-धूसरित हो गया है। गुजरात में आए भूकम्प अत्यधिक विनाशकारी है। यह भूकम्प हज़ारों लोगों की मृत्यु का कारण भी बन गया है। इससे उत्पन्न जनहानि, प्राकृतिक एवं आर्थिक हानि आज भी देख सकते हैं। इस कविता में कवि ने भूकम्प जैसे प्राकृतिक आपदा से उत्पन्न विभीषिकाओं को चित्रित किया है। 'भूकम्प' नामक कविता में कवि बताते हैं कि धरती पर घट रही शीत वारदातों में बूचड़खानों-आरामशीनों से निकली मर्मबेधी चीखों के कारण धऱती पर भूकम्प आता है। इस प्राकृतिक क्रियाकलाप से मुक्ति वर्तमान पीढ़ी के विकास के लिए अनिवार्य है।

विश्व के अधिकांश भागों में तेजाबी वर्षा की खतरे को सामना करना पड़ता है। कार्बन डाई ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड एवं नाइट्रोजन डाई

ऑक्साइड ने वायुमण्डल के बरसात के जल पर मिलकर अम्ल मिश्रित जल का निर्माण करते हैं। इसके बाद वह वर्षा के रूप में पृथ्वी में गिरती है। कवि ने इससे उत्पन्न विभीषिकाओं के बारे में 'तेजाबी वर्षा' नामक कविता में स्पष्ट किया है। कवि बलदेव वंशी बताते हैं कि बादलों से कभी-कभी तेजाबी जल बरसता है। इससे मरी मछलियों का ढेर देख सकते हैं। इससे उत्पन्न विष पचाने में धरती की अमृत कोख भी असमर्थ एवं अवाक् हो गयी है। क्योंकि प्लास्टिक के रूप-अरूप, रसायनों के नए-नए उत्पाद आदि भी धरती के पेट में पड़ गये हैं। यह सब हमारी धरती माता को प्रदूषित कर बांझ बना दिया है।

कवि बताते हैं कि पेड़ तक हतप्रभ हो गया है, उनको भी पता नहीं ये अंधी दीवारें कहाँ से उग आयी है। धरती के नीचे की पारदर्शी का अवकाश किसने छीन लिया है ? यह तेजाबी जल ने पेड़ के अस्तित्व को खतरे में डाल दिया है। आकाश भी साँसों से सजा गुनगुन से जख्मी हो गया है। इससे धरती अपना धर्म तक भूल गयी है। तेजाबी वर्षा के कारण जर्मनी, स्वीडन आदि प्रदेशों में हुए प्राकृतिक वनों का विनाश हम आज भी देख सकते हैं। कवि की राय में आकाश एवं धरती इस अम्लीय वर्षा की मार झेल रहे हैं। पेड़-पौधे, जीव-जंतु, प्राणी, पक्षी पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अम्लीय वर्षा से प्रभावित वनस्पतियों की रोग प्रतिरोध की क्षमता घट जाती है। 'तेजाबी वर्षा' में कवि ने इस पर लिखा है -

"फैल रहे विष धरती पर
और नीचे-ही-नीचे
रिस रहे शिराओं में
व्यर्थ हुआ सारा निःसर्ग का संज्ञान
वनस्पतियों का संविधान।"[५९]

कवि बताते हैं कि आसमान भी धुआँख परदों के पार से जार हो रहा है। पारदर्शी पानियों की आब दिन-प्रतिदिन चीख रही है। क्योंकि इस तेजाबी वर्षा के बुरा प्रभाव ने नदी और झीलों को तबाह करके रख दिया है। साथ ही उसके रासायनिक धातुएँ जल में घुलमिलाकर पानी को भी अम्लीय बनाती है। यह अम्ल जल सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों में घातक बीमारियों का कारण बन जाता है।

कविता के अंत में कवि इस प्रकार कहते हैं कि यह विषैला तेजाब बीते शताब्दी की औद्योगिक रासायनिक धातुओं के मिश्रण से उत्पन्न कचरा है। इसका विषैला प्रभाव आज चारों ओर फैल रहा है। भविष्य में इससे उत्पन्न संकट बढ़ जायेगा। कवि अपनी कविताओं में अनेक पर्यावरणीय समस्याओं को प्रस्तुत कर पर्यावरण के प्रति अपनी आस्था व्यक्त की है।

३.२९. बी.एल.आर्य

हमारे चारों ओर के पहाड, नदियाँ, समुद्र, पेड़-पौधे, जीव-जंतु आदि सभी पर्यावरणीय तत्व प्रदूषण के चंगुल में फँस गये हैं। इन सभी तत्व पर्यावरण संतुलन के लिए आवश्यक है। औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक उन्नति के नाम पर होनेवाले प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन विश्व के समूचे पारिस्थितिकी को विनाश की ओर पहुँचा दिया। यह सब 'प्रकृति की पुकार' नामक कविता में देख सकते हैं। प्रकृति ने जग को सींचकर लंबा जीवनदान दिया है। समूचे विश्व को केवल उपकार मात्र ही किया है।

कवि कहते हैं कि पीने एवं सींचने के लिए नदियों ने हमें अथाह जल दिया है। बड़े-बड़े शहरों एवं अनेक सभ्यताओं का विकास भी नदी-तट पर से हुआ है। हिमालय से निकलनेवाली गंगा, जमुना, सतलज आदि सभी नदियों ने बड़ी-बड़ी नहरें बनवाकर प्रगति के पथ की नींव डाली। औद्योगिक अपशिष्ट, मल-मूत्र, कूडा-करकट आदि विषैले अपशिष्टों को आज के मानव ने नदियों में त्यागकर उसे प्रदूषित किया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने इन नदियों का सारा पानी खींच लिया है। मानवीय क्रियाकलापों एवं जलवायु परिवर्तन ने इन सभी नदी स्रोतों को रेतों में तब्दील कर दिया है। मोर, पपीहा, कोयल जैसे पशु-पक्षी पानी के बिना त्रस्त हो गये हैं।

कवि 'प्रकृति की पुकार' में कहते हैं कि जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण ग्रीन हाउस गैसों की वृद्धि है। इससे समय पर वर्षा नहीं मिलेगी। वर्षा न मिलने से खेती सूख जाती है। वह हमारे अर्थ व्यवस्था को भी बदल डालेगा। कवि कहते हैं कि ग्रीन हाउस गैसों के प्रभावों ने मंदिर को मोस बनाया है। क्योंकि ग्रीन

हाउस गैसों की वृद्धि का एक प्रमुख कारण वन विनाश है। कवि की राय में पेड जीवन और आत्मा है। उनके सीने को काटनेवाले आज के मानव पेड लगाना भूल गये हैं। वृक्षारोपण धरती के तापमान की वृद्धि को रोकने में सहायक है। कवि के शब्दों में-

"तापमान बढ़ता ही जाता वर्षा नहीं है आने को
पोखर नदियाँ कुएँ सूख गए पानी नहीं है पीने को।।
पेड़ लगाना भूल गये हैं काटा है उनके सीने को।
मोर पपीहा कोयल कूके देवो पानी पीने के।।"[६०]

३.३०. बोधिसत्व

बोधिसत्व ने अपनी 'गाँव में सूर्यास्त', 'हरसिंगार के नीचे', 'यह पृथ्वी' और 'पलामू' जैसी कविताओं में प्राकृतिक जीवन की महत्ता को प्रस्तुत किया है। बगीचे के पेड़ों से गिरनेवाले पत्ते चक्रवातों से उड़कर अंत में मिट्टी में मिल जाते हैं। कवि बताते हैं कि भोगवादी संस्कृति से ही अच्छा है पर्यावरणीय संस्कृति। भोगवादी संस्कृति से प्रभावित मानव को मिट्टी एवं सूर्य की महत्ता मालूम नहीं है। 'गाँव में सूर्यास्त' नामक कविता में कवि सूर्यास्त की महत्ता की बात बताते हैं। कवि की राय में घास के किसी ओर मैदान में शिकार करने के लिए सूरज जा चुका है। आज के मानवीय क्रियाकलाप सूर्य का भी शोषण कर रहा है। इसको सहकर आज का सूर्य भी ग्लानि से खून की तरह लाल हो गया है। उपभोक्तावादी संस्कृति से प्रभावित आज के मानव दिन-प्रतिदिन पर्यावरण से दूर होता जा रहे हैं। जैसे -

"आसमान में पता नहीं किसके
खून का धब्बा रह गया है
जिसे मिटाना भूल गए हैं लोग।"[६१]

'हरसिंगार के नीचे' नामक कविता में पिता को प्रकृति के प्रति लगाव है। जिस हरसिंगार के पेड़ को यौवन में पिता ने लगाया था, वह उसी के नीचे अंत तक रहना चाहता है। नगरीय एवं महानगरीय फ्लैटों में रहनेवाले उनके बच्चे पिता को ग्रामीण-सांस्कृतिक रिश्ते से अलग करने का प्रयास कर रहे हैं। इस कविता में

कवि ने ग्रामीण प्राकृतिक रिश्ते को प्रतिपादित कर सांस्कृतिक प्रदूषण का संकेत दिया है।

'यह पृथ्वी' नामक कविता में कवि बोधिसत्व ने मानवीय सभ्यता के विकास की इतिहास गाथा को प्रस्तुत करने के साथ-साथ मानव एवं प्रकृति के आदिम रागात्मक संबंध को पुर्नरूपायित करने का प्रयास किया है। प्राचीन काल में यह पृथ्वी दहकती हुई अग्निपिण्ड मात्र थी। इस काल के मानव ने पृथ्वी के संरक्षण में लग्न है। उन्होंने तृणविहीन स्थान में वनस्पतियों को रोपकर सींच कर हरा-भरा बनाया। वनस्पति, जीव जंतु सहित एक स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण करने में उनका योगदान अमूल्य है। वर्षों-वर्षों तक के श्रम फल है आज की पृथ्वी। कवि बताते हैं कि प्रकृति मानव की सहचरी है। उनके सुख-दुःख में प्रकृति साथ रहती है। यह प्रकृति वियोग की रात में भी महबूबा की तरह पुकारती थी। कवि के शब्दों में -

"यह महबूबा की तरह
पुकारती थी मुझे वियोग की रातों में।"[६२]

बोधिसत्व की राय में मनुष्य और प्रकृति का रागात्मक संबंध अधिक गहरा है। ममतामयी धरती माँ में मानव की मंगल कामना निहित है। कवि बताते हैं कि कितने अकालों-भूचालों की उथल-पुथल के बाद भी पृथ्वी मानव के लिए अधिर्ज है। मानव कल्याण की कामना मात्र करनेवाली यह पृथ्वी आज तरह-तरह के प्रदूषणों का शिकार हो चुकी है। मानवीय एवं प्राकृतिक क्रियाकलापों से उत्पन्न बाढ़ की विभीषिकाओं का संकेत 'पलामू' नामक कविता में देख सकते हैं। कवि बताते हैं कि कोईल नदी की बाढ़ ने पलामू जैसे स्थान को भी डुबो दिया है। इससे पलामू जिले अंतर्गत आनेवाले सभी गाँव कब्रिस्तान बन गये हैं। कवि ने यहाँ बाढ़ से उत्पन्न धन-जन की अपार क्षति को प्रस्तुत किया है।

पृथ्वी के अस्तित्व के प्रति चिंतित कवि बोधिसत्व की कविताओं में मानव एवं पर्यावरण के बीच एक अद्वैत संबंध स्थापित करने की कामना निहित है। उनकी कविताओं में पृथ्वी से मनुष्य का चिर पुरातन संबंध प्रकट हुआ है। कवि बताते हैं कि मानव जन्म से लेकर मृत्यु तक पृथ्वी पर आश्रित है। आज यह पृथ्वी का जीवन

चक्र दिन-प्रतिदिन असंतुलित हो रही है। इससे कुएँ की छूही पर बैठनेवाली चिड़ियाओं को अब नहीं दिखाई पड़ रही है। सब प्रदूषण की मार से त्रस्त हो गये हैं। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरण को स्वच्छ बनाने का संदेश भी देते हैं।

३.३१. मदन कश्यप

'पृथ्वी दिवस, १९९१', 'तूफान ... भूकम्प .... ज़िंदगी', 'सर्प संवाद', 'नदी संवाद' एवं 'धूप में बारिश' आदि मदन कश्यप की पर्यावरणीय कविताएँ हैं। भारतीय विचारधारा के अनुसार धरती हमारी माँ है। इस माता की संकटग्रस्तता को कवि ने अपनी कविताओं में प्रतिपादित किया है। 'पृथ्वी दिवस, १९९१' में कवि बताते हैं कि आज पृथ्वी अवाक् है। मानव जैसे हत्यारों के अमानवीय क्रियाकलापों से त्रस्त है। यह कविता तीन भागों में विभक्त है। आर्थिक दृष्टि से अमूल्य प्राकृतिक संसाधन है वृक्ष। आज हरे-भरे वृक्ष को देखना असंभव-सा हो गया है। कवि बताते हैं कि यूरोप के सारे बूचड़खानों के स्थान पर सौंदर्यशालाओं के बोर्ड मात्र ही देख सकते हैं। जिसने पृथ्वी के एक आँख में फोड़ डाली है और दूसरी आँख में संगीन से सुरमा लगा रही है। ये सब सौंदर्य वर्द्धक वस्तुएँ हमारी शस्य श्यामल धरती के लिए अहितकर है। पृथ्वी की रक्षा कवच है - ओज़ोन। सूर्य से आनेवाली पारबैंगनी विकिरण सभी जीव-जंतुओं के लिए हानिकारक है। ओज़ोन परत इन विकिरणों को रोकता है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न ग्रीन हाउस गैसें ओज़ोन की रक्षा-परत को दिन-प्रतिदिन छेद रहे हैं। ओज़ोन परत में आनेवाले छेद से सभी पर्यावरणीय तत्व नष्ट हो जायेंगे। नदियों के स्वच्छ जल को भी विषाक्त बनाने की शक्ति पराबैंगनी विकिरणों में निहित है। इन विकिरणों का प्रभाव हमारी लाभदायक सभी प्राकृतिक संसाधनों के लिए हानिकारक है। कवि मदन कश्यप के शब्दों में -

"जिनकी आकांक्षाएँ छेद रही हैं
ओज़ोन की रक्षा-परत
जिनकी एषणाएँ रौंद रही हैं
पर्वतों की छातियाँ
जिनकी तृषा पी जाती है
सारी नदियों के स्वच्छ जल।"[६३]

आज पृथ्वी को बचाने की परियोजनाएँ मिट्टी की रूखी देह में लगाकर उसके नर्म-विचारों को उबटन कर रहे हैं। ये परियोजनाएँ आज नाममात्र हो गयी हैं। संरक्षण के नाम पर धरती की रक्तपिपासाओं को क्षत-विक्षत कर रही है। कवि अपनी इस कविता में बार-बार पृथ्वी को बचाने के लिए कहते हैं। सबसे पहले संरक्षण के नाम पर दोहन करनेवाले लोगों से भी पृथ्वी को बचाना है। वो लोग बम बरसाकर धुएँ की चिंता करते हैं, जंगल को काटकर भूस्खलन पर शोध कराते हैं। भूस्खलन जैसी आपदा गुरुत्वाकर्षण द्वारा प्राकृतिक रूप में भी होती रहती है, लेकिन वर्तमान में मानवीय कारक भी सम्मिलित है। फिर भी असंख्य लोग भूस्खलन पर शोध कराते हैं, जंगल संरक्षण पर ध्यान नहीं देते हैं। कवि ने यहाँ जंगल संरक्षण पर ध्यान देने की आवश्यकता को प्रस्तुत किया है।

'ओज़ोन परत में छेद', 'अम्ल वर्षा', 'भूस्खलन', 'सागर व नदी प्रदूषण', 'खेतों में होनेवाले विभिन्न प्रकार के रासायनिक प्रदूषण' आदि सभी पर्यावरणीय समस्याओं को कवि एक ही कविता 'पृथ्वी दिवस, १९९१' में प्रस्तुत कर पर्यावरण को प्रदूषित करनेवाले लुटेरों से पृथ्वी को बचाने का आह्वान करते हैं। वे लोग प्राकृतिक संसाधनों को बार-बार चुरायेंगे। इससे प्राकृतिक संसाधन के शब्द कोष से ज़मीन, जंगल एवं पानी आदि सब संसाधन कम होते जा रहे हैं। कवि की राय में पृथ्वी को तरबूज की तरह हरा और रसदार बनाना है। इसके लिए महाबराह के दाँत को निकालकर शेषनाग के फण को मारना है। कवि कविता के अंत में पृथ्वी से इस प्रकार कहते हैं कि महाकच्छप के पीठ पर दरक जाकर हम हज़ार मुट्ठियों पर तुम्हें थाम लेंगे।

ओडीसा के चक्रवात एवं गुजरात की भूकम्प की त्रासदी पर लिखी कविता है 'तूफान .... भूकम्प ..... ज़िंदगी'। १९९९ अक्तूबर में घटित समुद्री चक्रवात ने उडीसा के तटीय एवं मध्यवर्ती क्षेत्रों को श्मशान के रूप में परिवर्तित कर दिया। मदन कश्यप बताते हैं कि मानव जीवन के लिए आधारभूत पर्यावरणीय घटक है हवा और पानी। वह घटक कभी-कभी हमें मारती है। तेज हवा एवं मूसलाधार वर्षा जब चक्रवात का रूप धारण कर लेती हैं, जिनसे अपार धन-जन की क्षति होती है। इससे उत्पन्न मौत की कल्पना के बारे में सोचना असंभव-सा हो गया है। उस समय

उडीसा में मरनेवाले मनुष्यों से अधिक जीवित लोग मौत का दंश झेला है। इसके बारे में कवि लिखते हैं -

"जो मारे गये उड़ीसा के तूफान में
उनसे ज़्यादा मौत का दंश झेल रहे हैं वे
जो किसी प्रकार बचे रह गये।"[६४]

'नदी संवाद' नामक कविता में कवि ने कोसी और बागमती नदियों में घटित बाढ़ की भयानक परिणाम एवं उससे पीड़ित लोगों की दयनीय दशा को प्रस्तुत किया है। कवि नदी से पूछते हैं कि अचानक यह क्या हुआ है ? एक ही साँस में आपने हमारे घर, चूल्हा, चक्की, बोरिया-बिस्तर सब कुछ नष्ट कर दिया है। आप समुंदर जाने के बदले हमारे गाँव ज्वार को क्या समुंदर बना दिया है ? भारतीय विचारधारा में आस्था का प्रतीक है नदी। सभी आस्थावान लोग नदी के नाम के गीत गाते रहे हैं। आपको माँ मानकर किनारों को प्रणाम करते हैं। आपने हमें राह दिखाया, उष्ण जल से हमारा अभिषेक भी किया, पुश्त-दर-पुश्त पानी के साथ बसना सिखाया। फिर भी बाढ़ जैसे प्रकोप की विभीषिकाओं को हमें देने में अचानक क्या हुआ ? कवि मदन कश्यप 'नदी संवाद' नामक अपनी इस कविता में मानव के क्रूर क्रियाकलापों के प्रति नदी से क्षमायाचना करते हैं।

'सर्प-संवाद' नामक कविता में बाढ़ से घिरी हुई पृथ्वी में साँप भी बसेरा ढूँढते हैं। बाढ़ से बाल-बच्चे, ढोर-डांगर आदि सभी पर्यावरणीय तत्व पीडित हो गये हैं। बचे हुए सूखी ज़मीन में अडोसी-पडोसी एवं माल-मवेशी हैं। इसके अतिरिक्त रहने के लिए शरणार्थी साँप को भी कवि बुलाते हैं। कवि साँप से निवेदन करते हैं कि आप हमारे बाल बच्चों एवं ढोर-डांगरों पर कृपा रखिए। क्योंकि साँप विषधर है। उनको भी भागने के लिए जगह नहीं है। चारों तरफ पानी मात्र है। कवि के शब्दों में-

"चारों तरफ तो पानी ही पानी है
न कहीं कोई बिल न झाडी।"[६५]

हर साल होनेवाली बाढ़ राहत की राजनीति पर क्षोभ एवं व्यंग्य 'राहत पैकेट' नामक कविता में द्रष्टव्य है। कवि कहते हैं कि प्रकृति को अपनी एक गति है। जब गति बढ़ा लेती है तब प्रलय होता है।

आज वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन को लेकर अनेक चर्चाएँ हो रहे हैं। इसके प्रति चिंतित कवि हैं मदन कश्यप। 'धूप में बारिश' में कवि कहते हैं कि आज बादल गरजते समय दूसरे हिस्से में नकली निश्चिंतता ओढी है। इस अजूबे देखकर वातानुकूलित कमरों में बैठे बुद्धिजीवि भी चिंतित हो जाते हैं। वैज्ञानिक एवं रासायनिक चीज़ों ने बादलों से लड़कर मौसम का मनोमिज़ाज़ भी बदल दिया।

कवि ने अपनी कविताओं में भूकम्प, बाढ़, तूफान, जलवायु परिवर्तन एवं ओज़ोन परत में छेद आदि अन्य अनेक पर्यावरणीय समस्याओं पर विचार प्रस्तुत किया है। विकास के नाम पर होनेवाली परियोजनाएँ प्रकृति की गति के अनुकूल होनी चाहिए। कवि यह भी बताना चाहते हैं कि मानव प्रकृति के साथ एक संतुलित सामंजस्य स्थापित हो सके तो एक हल तक पर्यावरणीय समस्याओं का निपटान हो जायेगा।

३.३२. मंगलेश डबराल

'मंगल', 'अनुपस्थिति', 'तस्वीर' आदि कविताओं में मंगलेश डबराल ने सांस्कृतिक बदलाव के साथ आये पर्यावरणीय बदलाव को प्रस्तुत किया है। 'मंगल' नामक कविता में कवि बताते हैं कि आनेवाले सदियों में पृथ्वी पर जीवन की संभावना नहीं होगी। उस समय जीवन की संभावना मंगल ग्रह में मात्र होगा। कवि उस मंगल ग्रह में रहना चाहते हैं क्योंकि वहाँ पृथ्वी की तरह प्रदूषण नहीं फैलाया है। कवि को यह शंका है कि मानवीय क्रियाकलापों से वहाँ भी प्रदूषण फैलेगा ?

'अनुपस्थिति' नामक छोटी-सी कविता में कवि ने बचपन के पर्यावरण एवं वर्तमान के पर्यावरण के बीच तुलना की है। कवि के बचपन में पर्यावरण स्वच्छ और साफ था। उस समय मानव ने प्राकृतिक तत्वों के नियमों के अनुसार जीवन बिताया था। लेकिन आज के मानव ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए पारिस्थितिक संतुलन को भी बिगाड़ दिया है। आज उनका असंतुलन अपनी चरम बिंदु पर पहुँच चुका है। आज ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन के कारण बर्फ तेज़ी से पिघल रहा है। इससे समुद्र का जलस्तर बढ़ जाएगा। यह दुनिया के कई हिस्से जलमग्न होने का

कारण बन जाता है। बदलते पर्यावरण के प्रति चिंतित कवि मंगलेश डबराल इस प्रकार लिखते हैं -

“देखा बर्फ को पिघलते हुए
कुछ देर चमकता रहा पानी
अंततः उसे उडा दिया धूप ने।”[६६]

आज विकास के नाम पर मनुष्य प्रकृति को भी परिवर्तित कर दिया है। इसमें पेड़, चिडिया बोलने की आवाज़ आदि कम हो गये हैं। अब यह कवि की स्मृति में तस्वीर की तरह हो गया है। कवि ने अपनी कविताओं में पारिस्थितिक चेतना पर बल दिया है।

३.३३. रमेशकुंतल मेघ

गंगा, यमुना जैसी पवित्र नदियाँ जलस्त्रोत मात्र नहीं है, हमारी भारतीय सांस्कृतिक अस्मिता का प्रतीक है। कवि मेघ ‘प्रेम की नदी है यमुना !’ नामक कविता में बताते हैं सौर मण्डल का रासलीला की संगिनी एवं प्रेम की मदमाती नदी है यमुना। उसके दो कर्ण कुण्डल हैं - गोकुल और ताज। विरह की नदी नीली यमुना आज प्रदूषण से काली एवं ज़हर घुलनेवाली नदी बन गयी है। इस नदी से कवि पूछते हैं कहाँ से आती, कहाँ को जाती है ? कवि को यह भी कहना कठिन हो गया है कि यह यमुना नदी है या गंदा नाला है। लोग कहते हैं कि दिल्ली के गंदा नाला है यमुना नदी। इसमें प्रदूषणकारी कॉलीफार्म बैक्टीरिया की मात्रा दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे हैं। दिल्ली से आगरा तक के यमुना जल घोर विषमय है। कवि बताते हैं कि हमारे अंतर्यमुना अभी तक मृत्युंजय है। यहाँ घुँघरू नहीं है, उनके स्थान पर आतंकी राइफिलों से गूँजती गोलियाँ हैं। आतंकवाद से आज यमुना तट भी असुरक्षित हो गया है। बाँसुरी सी सड़क को भी बदल गया है। प्राचीन काल में जहाँ कृष्ण बाँसुरी बजाते हैं, वहाँ आज सोने के भ्रष्ट सांप फुँफकारते हैं। यहाँ के लोग बदलने के साथ-साथ यमुना तट भी बदल गया है। कवि यमुना से पूछते हैं कि यह कैसे संभव है ? मुझे बताओ। कवि बताते हैं कि नदी की धारा जीवनधारा है। इसको बदलने या मुड़ने से

सभ्यता, संस्कृति एवं ज्ञान सौंदर्य मिट जाते हैं। महान राष्ट्र भी खंड-खंड में विघटित हो जायेगा। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"नदी का धारा ही जीवन-धारा है
इसके बदलने से, मुड़ने से
सभ्यताओं के सूर्यकमल
संस्कृतियों के कल्पवृक्ष
ज्ञानसौंदर्य के सहस्रदीप मिट जाते और
महान राष्ट्र खण्ड-खण्ड विघटित हो जाते।"[६७]

कवि सोचते हैं कि यमुना के साथ कितनी जातीय स्मृतियाँ हैं, उस यमुना ने प्राचीन काल में कुषाणी-यक्षिणियों को बांझ बना दिया है। कृष्ण की मीरा को भी तीर-तीर टेर गया है। इन स्मृतियों के स्थान पर आज कुछ छूँछे आद्यबिंब मात्र ही बचे हैं। यहाँ की चंद्रमा रुग्णजाल भी निष्प्रभ है। कवि की राय में यह सब भ्रामक जादुई यथार्थ बन गया है। कवि मेघ यमुना से बताते हैं कि ओ नीली नदिया ! सरस्वती भी गाते-गाते भागकर विलुप्त हो गयी थी। उनका कोई भी स्मृति चिह्न वहाँ नहीं है। धार्मिक क्रियाकलाप एवं औद्योगिक क्रियाकलाप ने हमारी पुण्य नदी गंगा को भी प्रदूषित किया है। कवि ने बताया है कि गंगा भी पापों से भर रही है। गंगा की प्रदूषित जलधारा मानव सहित सभी जीव जंतुओं को मौत के मुँह में धकेल देगी।

३.३४. रमेश मयंक

रमेश मयंक ने 'अरावली से अलकनंदा तक' नामक कविता में वहाँ के पर्यावरणीय समस्याओं को प्रस्तुत किया है। कवि अपनी इस कविता में अरावली से अलकनंदा तक यात्रा कर रहे हैं। शाही बाग एवं रक्त तलाई कवि को रास्ता दिखाते हैं। दुनिया की प्राचीनतम पर्वत श्रृंखला है अरावली की पर्वत श्रृंखलाएँ। पर्यावरणीय एवं आर्थिक दृष्टि से उनका योगदान अमूल्य है। आज अरावली का क्षेत्र रेतीला मरुभूमि हो गया है। कवि के शब्दों में आज यह क्षेत्र पत्थरों का रेगिस्तान है। कवि के पाँवों की छाप अरावली के चट्टानों पर अंकित है। नंगी पहाडियों को देखकर दुखित कवि से गंगा अलकनंदा से मिलने के लिए कहती है। साथ ही गंगा की तरफ प्यार के

दो शब्द बोलने का जिम्मेदार भी दिया है। इसके बाद कवि सरस्वती के बारे में बताते हैं। आज सरस्वती सूखकर या प्रदूषित होकर अपना अस्तित्व खो रही है। वहाँ नदी के स्थान पर रेतीला निशान मात्र ही है -

"मेरी सरस्वती तो पहले ही कहीं खो गयी
मेरे पास ही रेतीले निशान बो गई।"[६८]

अरावली एवं अलकनंदा के प्राकृतिक संपदाओं के दोहन से अनेक जीवनदायी नदियाँ संकट में है। वहाँ के संतुलन के बिगडाव से अनेक लोगों के जीवन यापन की अर्थ व्यवस्था नष्ट हो जायेगी। साथ ही कवि वहाँ के जंगल कटाव से उत्पन्न समस्याओं को भी प्रस्तुत किया है। अरावली की पहाडियाँ हरियाली के साथ रहने के लिए अलकनंदा कवि से निवेदन करती है -

"यदि बन्द करोगे जंगल काटने का गोरख-धंधा
तो आसपास ही रहेगी - अलकनंदा।"[६९]

जंगल की कटाव को रोके तो वहाँ की सभी पारिस्थितिक समस्याओं की समाधान हो जायेगी। अरावली एवं अलकनंदा के प्राकृतिक संपदाओं के दोहन से वहाँ की पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ने के साथ-साथ एक बडी आबादी के जीवन यापन खतरे में पड़ गया है। इसके विनाश के साथ-साथ वहाँ के लोगों की धार्मिक-सांस्कृतिक धरोहरों का भी विनाश होगा। कवि यहाँ अरावली की जैव विविधता संरक्षित करने का आह्वान करते हैं।

३.३५. राग तेलंग

'प्लास्टिक' नामक कविता में कवि राग तेलंग पूछते हैं कि यह प्लास्टिक कहाँ से आया है ? सारी की सारी ताज़ी हवा को अपने पारदर्शी थैले में बंद कर कहाँ चले जा रहे हैं ? कवि को पता नहीं। आज संपूर्ण विश्व प्लास्टिकमय हो गया है। इस प्लास्टिक ने संसार के नक्शे को भी मढ लिया है। रंगहीन एवं पारदर्शक प्लास्टिक को काँच एवं धातू के स्थान पर भी प्रयुक्त होता है। कवि प्लास्टिक प्रदूषण के प्रति चिंतित हैं। कवि कहते हैं कि प्लास्टिक का समुद्र सारे ज़मीन पर बहने लगा है। भविष्य में पृथ्वी का बडा भूभाग में केवल अनुपयुक्त

प्लास्टिक मात्र ही होगा। पेड़, फूल, चेहरे, रिश्ता, भाषा, बोली एवं प्यार आदि सब प्लास्टिकमय हो गये हैं। जैसे -

"प्लास्टिक के पेड़, प्लास्टिक के फूल
प्लास्टिक के चेहरे, प्लास्टिक के रिश्ते,
प्लास्टिक की भाषा, प्लास्टिक की बोली
और तो और प्यार भी हुआ प्लास्टिक का
प्लास्टिक है सब प्लास्टिक।"[७०]

३.३६. राजकुमार कुंभज

राजकुमार कुंभज ने 'यहाँ एक वृक्ष रहता था' नामक कविता में वन विनाश से उत्पन्न दुष्परिणामों के प्रति अपनी आशंका व्यक्त की है। कवि कहते हैं कि चिडियाओं का घर है वृक्ष। कल तक उस चिडिया की चहचहाहट जारी थी। पेड़ और चिडिया का आपसी रिश्ता गहरा है। जिस वृक्ष में उस चिडिया की छोटा सा घर-परिवार रहता था वहाँ एक बिल्डर आकर घर बनाने से पहले वृक्ष को कटवाया। पेडों को काटकर आज के मानव ने वहाँ बेशकीमती बहुमंज़िला शानदार घर बनाया है। वह घर एक चिडिया के घर-परिवार को हत्या कर बनाया गया है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई एवं चिडिया के अस्तित्व के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि कहते हैं कि -

"वृक्ष की हत्या पर चिडिया की आँखों में आँसू है
और यदा कदा बोलनेवाले मनुष्य भी चुप हैं,
अब तो
यही होता है आजकल चिडिया के साथ।"[७१]

वृक्ष विनाश से चिडिया की अनेक प्रजातियाँ आज विलुप्त हो रही हैं। पारिस्थितिकी संतुलन को बनाये रखने में वृक्ष एवं चिडिया की अहम् भूमिका है। आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण संसाधन है वन। वृक्ष नहीं है तो मानव तथा सभी जीव-जंतुओं का अस्तित्व संकट में पड़ जायेगा।

३.३७. राज्यवर्द्धन

कवि राज्यवर्द्धन ने 'खो जाएगा एक दिन धरती का संगीत', 'साजिश' आदि कविताओं में पारिस्थितिक चेतना को प्रस्तुत किया है। 'खो जाएगा एक दिन धरती का संगीत' नामक कविता में उन्होंने जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग से उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि भरतपुर में साइबेरियाई सारस एवं सर्दियों में आँगन में फुदकनेवाली गौरैया अब नहीं आते हैं। कवि को भी पता नहीं ये सब कहाँ चला गये हैं ? जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ दिया। जिसके कारण जीवों की कई जातियाँ मिट रही हैं। मृत जानवरों को खाकर पर्यावरण को शुद्ध करनेवाले गिद्ध भी आज विलुप्त हो रहे हैं। कवि की शंका है इसका अस्तित्व मिट जाये तो पर्यावरण को कैसे शुद्ध बनाये रखें? मसूरी की पहाडियों में देखनेवाले पर्वतीय बटेर अब वहाँ नहीं है। तापमान की बढोत्तरी से होनेवाली विभीषिकाओं के बारे में कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"तुम्हारी अतिसंतृप्त वासना ने
बढा दिया है -
पृथ्वी का तापमान
घातक हो गयी है प्राणवायु -
जीवजंतुओं और वनस्पतियों का।"[७२]

कवि पूछते हैं कि खुबसूरत पंखोंवाली चिडियाओं के बिना पृथ्वी कितनी रंगहीन हो जायेगी ? इसके बारे में आपने किसी भी समय में सोचा है ? कवि अंत में बताते हैं कि एक दिन धरती का संगीत नष्ट होकर आपने अपना अस्तित्व खो जायेगा। 'साजिश' नामक कविता में कवि बताते हैं कि अब मिनरल वाटर के बोतल लेकर लोग सफर करते हैं, क्योंकि उनको पता नहीं कि कहाँ व कब लगे प्यास ? प्यास लगते समय भारत में पानी मिलना वर्तमान में मुश्किल है। इस कविता में कवि ने आज के पानी की व्यावसायिकता पर व्यंग्य किया है। बाज़ारवादी संस्कृति से प्रभावित लोगों के लिए नदी, पानी जैसे प्रकृति-प्रदत्त उपहार बिकने का साधन मात्र है। कवि राज्यवर्द्धन के शब्दों में -

“साजिश में
रख दी गयी हैं नदियाँ गिरवी
बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पास
अब नहीं मिलता है -
खेतों को पानी।”[७३]

३.३८. राजेंद्र नागदेव

राजेंद्र नागदेव ‘गौरैया नहीं आती अब’ नामक कविता में गौरैया की वर्तमान एवं भविष्य को प्रस्तुत किया है। वही गौरैया कहाँ गये हैं ? आज उनको पता नहीं है। हवा भी आज खाली है। चीन और हॉलैंड में गौरैया नामक चिडिया की प्रजाति का अस्तित्व मिट चुका है। ये गौरैया फसलों को नष्ट करनेवाले कीडे-मकडे को खाकर पारिस्थितिक संतुलन को कायम रखते हैं। वन नष्ट होने के साथ-साथ पशु-पक्षियों की आवास भी तेज़ी से नष्ट होती जा रही है। कवि कहते हैं कि भविष्य में चहचहाहट एवं उनके अंडों को चूते समय होनेवाली अजीब रोमांच आनेवाली पीढ़ी को किस तरह से समझायेंगे ? शायद आनेवाली पीढी को इसका शोर-शराबा सुनने का भाग्य नहीं है। कवि राजेंद्र नागदे लिखते हैं -

“हमने वहाँ गौरैयों के अंडे
पंखों, तिनकों और सुतलियों के बीच रखे देखे थे
हमने अंडों को चुपचाप छूकर देखा था
हम छूते ही अजीब रोमांच से भर गये थे
वह रोमांच आनेवाले पीढ़ियों को
किस तरह से समझाएँगे हम ?”[७४]

कवि कहते हैं कि गौरैये के घोंसले को रोशनदानों एवं लकड़ी की पुरानी अलमारी पर भी देखा है। भावी पीढ़ी को यह सुविधा भी नहीं है। उनको इसके बारे में जानने के लिए एकमात्र माध्यम है अनिमल प्लानट जैसे टी.वी चैनल। अस्तित्व मिटने का खतरा मँडरानेवाले इन गौरैयाों की आवाज़ नागरिक, राजनेता, जीव-विज्ञानी एवं पर्यावरणविद् जैसे कोई भी नहीं सुनते हैं। यह कवि के लिए अत्यंत दुःखद बात

है। जैविक संपदा की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। भावी कॉन्फ्रेंस में गौरैयाों पर शोध पत्र पढ़ जायेंगे। कवि भी इस कॉन्फ्रेंस में जाने के लिए तैयार है। कवि 'गौरैया आती नहीं अब' नामक कविता के अंत में इस प्रकार कहते हैं -

"फिर गौरेया के डी.एन.ए से रचे जाएँगे नये गौरेया।"[७५]

भविष्य में डी.एन.ए से रचनेवाले नए गौरैये को देखने को मिलेगा। कवि इस कविता के माध्यम से पक्षी संरक्षण के प्रति उत्तरदायित्व करना चाहते हैं।

३.३९. राजेश जोशी

राजेश जोशी ने 'विलुप्त प्रजातियाँ', 'उमस', 'किस्सा उस तालाब का', 'टेलिफोन' आदि कविताओं में वैश्विक स्तर पर होनेवाली पर्यावरणीय समस्याओं पर चर्चा की है। 'उमस' एवं 'किस्सा उस तालाब का' नामक कविताओं में कवि ने पानी से जुडी समस्याओं को प्रस्तुत किया है। आर्थिक विकास की अंधाधुंध दौड़ में मानव पानी के संरक्षण एवं उसकी गुणवत्ता को नज़र अंदाज़ कर रहा है। 'किस्सा उस तालाब का' नामक कविता में कवि मिनरल वाटर का एक बोतल खरीदकर असमंजस में पड़ जाते हैं। प्रकृति प्रदत्त उपहार पानी को मिनरल वाटर के बोतल से पीना कवि के लिए असहनीय बात है। कवि बताते हैं यह पानी पीने से गला तर होकर आत्मा सूख जाती है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"और पानी कहता तो गुस्ताखी होती उसकी शान में
पीने से कुछ होठ गीले हुए कुछ गला तर हुआ
पर आत्मा ज़रा भी नहीं भीगी।"[७६]

यहाँ कवि विश्व बाज़ार में होनेवाले मिनरल वाटर के व्यापार का संकेत दिया है। आज राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कंपनियाँ पानी का व्यापार कर रही है। उनका लक्ष्य सभी जलस्रोतों को दोहन कर अधिक से अधिक लाभ कमाना मात्र है।

अखबार में तालाब सूखकर लगातार नष्ट हो जाने का कुछ रंगीन चित्र है। यह वर्तमान में हो रहे तालाब जैसे जलस्रोतों की मृत्यु के संकेत करते हैं। तालाब का यह दृश्य देखकर कवि असमंजस में पड़ जाता है, क्योंकि तालाबों के शहर भोपाल में रहनेवाले कवि को यह दुखद बात है। इसके बाद कवि अपने शहर के तालाब के बारे में सोचते हैं। उस चित्र में तालाब जंजीरें तक सूखकर दूर तक पपडाई हुई ज़मीन नज़र आते हैं। कवि राजेश जोशी बताते हैं आज सूखे तालाबों के स्थान पर पापड़ और हलुआ बिक रहा है। इसके बाद कवि पानी से संबंधित एक सूफी फ़कीर की कहानी बताते हैं। लेकिन वर्तमान में उस सूफी फ़कीर की मज़ार पर लोग पानी की दुआएँ माँग रहे हैं। वर्तमान में पानी के संकट से उत्पन्न संवेदना को 'किस्सा उस तालाब का' में कवि ने इस प्रकार व्यक्त किया है -

"कब, कब वह पानी देखूँगा
जिसे पानी कहने की तसल्ली हो
और जल कहने से मन भीग जाए !"[७७]

'सुब्हे बनारस' नामक कविता में कवि बताते हैं कि पटना या इलाहाबाद में गंगा को देखने से अलग है बनारस की गंगा को देखना। यह कहने के लिए कवि के पास भाषा भी नहीं है। नदियों के प्रति श्रद्धावान होने का कारण भी कवि बताते हैं -

"मैं तालाबों के शहर का नागरिक था इसलिए नदियाँ
मुझे हमेशा ही अपने पास खींचती थीं।"[७८]

कवि बताते हैं बनारस की पानी मटमैला है। वहाँ की नदी एवं घाट के पानी में लाश हिचकौले खा रहा है। इसके पास ही कुछ लोग निर्विकार भाव नदी में डुबकियाँ लगाकर सूर्य को अर्घ्य दे रहे हैं। लोक मुक्ति के नाम पर लाशों को नदी में बहा देता है, इन लाशों ने नदी को प्रदूषित कर मानव सहित सभी जलीयजीव जंतुओं एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को महाविनाश के कगार पर खडा कर दिया है।

'उमस' नामक कविता में कवि ट्रेन यात्रा में जो दृश्य देख रहा है, उस दृश्य के पीछे निहित विषमता को प्रस्तुत किया है। कवि इस कविता में बताते हैं

कि देश की अर्थ व्यवस्था पानी पर भी निर्भर है। एक विभाग के लोग पानी को व्यावसायीकृत कर रहे हैं। दूसरी ओर के लोग एक बूँद स्वच्छ पानी के लिए आतुर हो रहे हैं। क्योंकि ट्रेन में किसी के पास एक घूँट पानी नहीं है, बिना पानी से सबका गला सूख रहा है। कवि के शब्दों में -

> "उमस इतनी ज़्यादा थी कि सबके गले सूख रहे थे
> और किसी के पास नहीं था एक घूँट भी पानी।"[७९]

कृषि प्रधान देश है भारत। जल के अभाव में दिन-प्रतिदिन अनेक खेत सूखते जा रहे हैं। ट्रेन में यात्रा करते समय राजेश जोशी की दृष्टि इन सूखे खेतों पर भी पड़ा है। खेत में आज कृषि नहीं है, जिसके मेड़ पर खडे असंख्य अधनंगे बच्चे ट्रेन की ओर देखकर हाथ हिला रहे हैं। कवि की दृष्टि उस पर नहीं है, सूखे खेत पर है। यह सूखे खेत भविष्य में होनेवाले खेती संकट को सूचित करते हैं, जिससे खेती पर आधारित विश्व की लगभग आधी आबादी संकट में पड़ जायेगा।

'टेलिफोन' नामक कविता में कवि परिंदों और नदियों से बात करना चाहते हैं। विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी की देन है मोबाइल। आज हर आदमी के पास मोबाइल है। कवि की दुखद बात यह है कि परिंदों और नदी जैसे प्राकृतिक तत्वों के पास मात्र ही मोबाइल नहीं है। उनसे टेलिफोन पर बात करना असंभव है। अर्थात् टेक्नॉलजी की दुनिया मानव को प्रकृति से काट रहे हैं।

प्रकृति में होनेवाले निरंतर परिवर्तन एवं प्रदूषण से कई जीवों को अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इस संघर्ष से दिन-प्रतिदिन कई जीव समाप्त होते जा रहे हैं। विलुप्त हो रही प्रजातियों को बचाने की आकुलता 'विलुप्त प्रजातियाँ' नामक कविता में देखने को मिलती है। प्रगति की दौड़ में पेड़ों, पशुओं, परिंदों की कितनी प्रजातियाँ कब विलुप्त हो गयी हैं ? यह कवि को भी पता नहीं। क्योंकि अब उनकी स्मृति भी बाकी नहीं है। इस पर कवि ने लिखा है -

> "पेडों पशुओं और परिंदों की न जाने कितनी प्रजातियाँ
> विलुप्त हो गईं न जाने कब
> अब तो उनकी कोई स्मृति भी / बाकी नहीं।"[८०]

कवि अपनी कविताओं में पेड़, पशु, पक्षी, परिंदे, नदी, तालाब, खेत, पानी जैसे पर्यावरणीय तत्वों के संरक्षण की बात बताते हैं। ये पर्यावरणीय तत्व नष्ट होने से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत भी यहाँ देख सकते हैं। कवि यह भी बताना चाहते हैं कि प्राकृतिक संसाधनों पर होनेवाले नव-उपनिवेशवादी एवं पूँजीवादी लोगों का आधिपत्य को रोकना है, साथ ही पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त करना है।

३.४०. रामदरश मिश्र

रामदरश मिश्र ने 'आदत', 'फूल', 'कुछ देर तो', 'खाली प्लाट', 'असमय राग', 'पेड़' आदि अनेक कविताओं में वर्तमान पारिस्थितिक समस्याओं को प्रस्तुत किया है। कवि 'आदत' नामक कविता में बताते हैं कि सभी प्राकृतिक वस्तुओं को अपना अलग महत्व है। यह हमारे लिए सोने और चाँदी के समान हैं। विज्ञान के माध्यम से आविष्कृत नये-नये उपादान प्रकृति के लिए विषाक्त खतरा बन जाते हैं। भौम तापवृद्धि, जलवायु परिवर्तन, ओज़ोन परत छेद सभी प्राकृतिक असंतुलन के दुष्परिणाम हैं। विभिन्न प्रकार के केमिकल्स के प्रयोग से पौधे झुलस गये हैं, वनस्पतियाँ ऐंठ गयी है एवं नदियों की पानी तेजाब हो गया है। वर्तमान पर्यावरणीय परिवर्तन प्राकृतिक नियमों के अनुसार नहीं है, यह मानवीय करतूतों से प्रभावित है। वर्तमान पर्यावरणीय त्रासदी पर 'आदत' नामक कविता में कवि ने लिखा है -

"उसने सोने चाँदी के पहाड़ पर
बारूद के पेड़ लगाए हैं
जिनकी विषाक्त साँसों से
झुलस गई हैं हवाएँ
ऐंठ गई हैं वनस्पतियाँ
टूट गये हैं चिडिया के पंख
तेजाब-सा खलबला रहा है नदियों का पानी
जल गए हैं मौसम के रंग।"[८१]

मानव को अनेक सुविधाएँ प्रदान करनेवाले पेड को वर्तमान स्वार्थी मानव प्रतिदिन काट रहे हैं। फिर भी मानव की सभी क्रूर प्रवृत्तियों को पेड़ सहन

करते हैं। इसके बारे में 'पेड़' नामक कविता में बताते हैं। आज मानव पेडों को काटकर शहतीरें और किवाडें बनने में व्यस्त हैं। उनके बहुमंज़िलीय इमारतों को देखकर हमारी धरती माता भी डर रही है। क्योंकि उसको सहने की शक्ति धरती को नहीं है।

'खाली प्लाट' नामक कविता में कवि बताते हैं कि आज मोहल्ले भर कूडा-कचरा मात्र है। सब्जीवाला सडी सब्जियों को फेंककर पर्यावरण को अशुद्ध बनाते हैं। आसपास की गृहणियाँ मोहल्ले भर घरेलू कचरे को फेंकती हैं। यह खाने के लिए मोहल्ले भर के आवारा पशु आते हैं। इन अपशिष्ट पदार्थों को खाने से पशुओं की मृत्यु जल्दी होती है। कवि बताते हैं कि वर्तमान मानव रोज़ पर्यावरण पर भाषण सुन रहे हैं। यहाँ से गुज़रनेवाले सरकारी फरिश्ता उनको असहाय आँखों से देख रहे हैं। उन लोगों को पर्यावरण पर कोई चिंता नहीं है। कवि बताते हैं कि पशु अपशिष्ट पदार्थों को खाकर मोहल्ले को साफ करते हैं, मानव यह देखकर अनदेखे चल रहे हैं। इस कूडेखाने में रद्दी कागज़, प्लास्टिक की थैलियाँ, लोहे के टुकडे, फटे जूते जैसे अनेक प्रदूषक चीज़ है। यह देखकर कवि पर्यावरण के किसी मसीहे का इंतज़ार करते हैं -

"कुत्ते भूँकते रहते हैं
और मैं इंतज़ार कर रहा हूँ
पर्यावरण के किसी मसीहा का .....।"[८२]

आज बाज़ार में प्लास्टिक के फूलों का बाग भी है। मानव अपने घर के प्राकृतिक उद्यानों के स्थान पर इसे स्थापित करते हैं। कवि 'फूल' में बताते हैं कि इसको न मिट्टी, न खाद और न पानी चाहिए। चिडियाओं से रखवाली एवं मौसम के इंतज़ार के बिना ये फूल एक ही भाव से हमेशा दहकते रहते हैं। कवि ने अपनी इस कविता में फूलों पर पड़नेवाले बाज़ारीकरण के दबाव को प्रस्तुत किया है। इससे हवा फूलों की गंध, मधुमक्खियों रस एवं तितलियाँ उनके कोमल स्पर्श से वंचित हो गयी है। कवि बताते हैं कि आज के बच्चे प्राकृतिक नियमों के अनुकूल हो रहे परिवर्तनों से भी अपरिचित है। कवि के शब्दों में -

"बच्चे फूलों की पहचान से वंचित हो गये।"[८३]

आज की युवा पीढी प्राकृतिक फूलों के अलावा प्लास्टिक के फूलों से अधिक परिचित है। कवि कविता के अंत में बताते हैं कि प्लास्टिक उद्यान देखकर अनेक मौसम उदासीन होकर गुज़र गया है। 'कुछ देर तो' नामक कविता में नगरीकरण से त्रस्त कवि रामदरश मिश्र अपने गाँव के जीवन का स्मरण करते हैं। बचपन में कवि को पता नहीं जीवन से कोयल का नाता क्या है। लेकिन आज कवि कोयल का गीत सुनना चाहते हैं। कवि बताते हैं यहाँ प्राकृतिक जंगलों के स्थान पर कांक्रीट के हसीन जंगल ही है। वहाँ न मौसम है, न ऋतुपरिवर्तन है। कोयलों की आवाज़ के स्थान पर सदाबहार यंत्र संगीत एवं सदाबहार रोशनी मात्र है। कांक्रीट के जंगल में जाडे की धूप एवं गर्मी की छाँह मिलना मुश्किल हो गया है। कवि इस प्रकार लिखते हैं -

"लगातार धँसता ही चला गया कांक्रीट के हसीन जंगलों में
जहाँ न मौसम थे न ऋतुएँ
न जाडे की धूप थी न गर्मी की छाँह
वहाँ सदाबहार रोशनी थी / सदाबहार यंत्र संगीत थे।"[८४]

शहरीकरण, प्रदूषण आदि ने ग्रामीण परिवेश को नष्ट कर दिया है। इसकी दुखद अभिव्यक्ति 'वसंत में' और 'असमय राग' में देख सकते हैं। आज गाँवों में कोयल को अपना गीत गाने में मुश्किल हो गया है। क्योंकि वर्तमान प्रदूषण ने उनको भी त्रस्त कर दिया है। आज कोयल को बैठने के लिए स्थान नहीं है, क्योंकि विकास के नाम पर पेडों को काट दिया गया है। आज कोयल को नहाने में भी डर है, मानव ने जलस्त्रोतों के पानी को भी विषमय बना दिया है। कोयल बताते हैं कि आपकी ठंडी छाँहें फेफडों में भर ली है, इसलिए मेरा स्वर बंद हो गया है। मानवीय एवं वैज्ञानिक क्रियाकलापों के केमिकल्स की विषैली गैसें एवं गोलियों की आवाज़ कोयल को अधिक संकटग्रस्त बनाया है। कोयल बताता है कि -

"तुम्हारी विषैली गैस भरी साँसों से टकरा कर
और छटपटा रही हैं
दिशाएँ तुम्हारी गोलियों की आवाज़ से
घायल हो रही हैं।"[८५]

कवि ने अपनी कविताओं में पेड़-विनाश, मौसम परिवर्तन, शहरीकरण जैसे अनेक पारिस्थितिक त्रासदियों का विवेचन किया है। प्रकृति की एक-एक छोटी सी घटना या परिवर्तनों पर चिंतित हैं कवि रामदरश मिश्र। प्रदूषण को न रोक जाये तो धरती में जीवन की कल्पना असंभव है। इसका संकेत कवि अपनी कविताओं के माध्यम से दे रहे हैं।

३.४१. लीलाधर जगूडी

वर्तमान दुनिया की पारिस्थितिक विभीषिकाओं की अभिव्यक्ति लीलाधर जगूडी की 'तुम रोबो नहीं हो' नामक कविता में मिलती है। सभी मानव को किसी एक सांस्कृतिक आपदा से गुज़रना है। इसका प्रभाव आज के बच्चों पर भी पडा है। वैज्ञानिक संस्कृति बच्चों के विकासमान जीवन को बदल दिया है। आज के बच्चे एक रोबोट की तरह है। कवि अपनी कविता 'तुम रोबो नहीं हो' में बच्चों से प्राकृतिक संसाधनों का महत्व बताते हैं। कवि कहते हैं कि आज के बच्चों को खेती उद्योग के बारे में जानना है। गेहूँ लोहा, धातु, प्लास्टिक और कागज़ की लुग्दी से नहीं बन सकता है। गेहूँ के निर्माण के लिए खेती उद्योग आवश्यक है। आज खेत मर रहे हैं। आज के खेती विनाश को रोकना अनिवार्य है।

कवि आज के बच्चों से यह भी सूचित करते हैं कि घना जंगल और घास के मैदान पार्सल से उपलब्ध नहीं है। धान और गेहूँ की खेती नहीं है तो चावल और रोटी बनाने के लिए गेहूँ भी नहीं है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन उपभोक्तावाद की एक प्रमुख प्रवृत्ति बन गयी है। प्राकृतिक संसाधन वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के लिए आवश्यक है। 'तुम रोबो नहीं हो' नामक कविता में कवि प्राकृतिक संसाधनों को बचाने की चिंता प्रकट करते हैं। उपनिवेशवादी नीति को दूर कर वर्तमान एवं भावी पीढी की भलाई के लिए प्राकृतिक संसाधनों को सुरक्षित रखना है। भावी पीढी एवं युवा पीढी से प्राकृतिक संसाधनों के महत्व के बारे में कवि इस प्रकार कहते हैं -

"मेरे बच्चे यह भी जान लो कि प्राकृतिक संसाधन
भोजन के मूल स्रोत हैं टेक्नॉलजियाँ नहीं
जो कच्चा माल है उसमें एक पका हुआ फल भी है।"[८६]

३.४२. लीलाधर मंडलोई

लीलाधर मंडलोई की 'उनका होना न होना', 'कि जान पाते रहस्य हम', 'शर्मनाक' और 'न के बराबर' आदि कविताओं में पारिस्थितिक चेतना विद्यमान है। आज नदी, चिडिया, वनस्पति, पहाड, जानवर जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों में प्रदूषण का खतरा मँडरा रहा है। जैविक संपन्न हमारी यह प्रकृति आज प्रदूषण से मृतप्राय हो चुकी है। आज वनस्पति के बिना पशु भूख से भटकते फिरता है। भूख के कारण पशु मात्र ही जानते हैं वनस्पतियों का महत्व। कवि 'उनका होना न होना' में बताते हैं कि आसपास का सभी पहाड नंगा हो गया है। इसका प्रमुख कारण विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के नाम पर होनेवाले अंधाधुंध प्राकृतिक शोषण है। इससे भविष्य में न पेड, न पहाड, न नदी होगी। कवि पर्यावरण सभी तत्वों के प्रति चिंतित हैं। पहाडों के गंजापन से वहाँ कोई प्राकृतिक आवाज़ नहीं है। इसके कारण अनेक जीवनदायी नदियाँ सूखती कराहती हैं। चिडिया और झरनों का शोकगीत मात्र ही कवि सुनते हैं। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

"न कोई बादल अपना
नदी जो है तो यहाँ सूखती कराहती
बची-खुची चिडियों की बची-खुची आवाज़
अंतिम झरनों का सिसकता शोकगीत।"[८७]

आज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के माध्यम से चावल, कपास की नई-नई किस्में विकसित कर ली गयी हैं। अमेरिकन बहुराष्ट्रीय कंपनी मोनसान्टो बासिलस तूरिन जीनसिस से बॉलगार्ड का विकास किया है। बॉलगार्ड ने कपास के खेतों एवं पारिस्थितिकी को भी प्रदूषित कर दिया। बी.टी कपास के समर्थन से खेती विनाश के साथ-साथ कई किसान आत्महत्याएँ कर लेते हैं। कवि 'शर्मनाक' नामक कविता में कहते हैं कि इस मामले में सरकार नज़र अंदाज़ कर रहे हैं -

"सरकार बी.टी कपास के समर्थन में
इस हद तक पागल
कि भूल गई
अपने खेत
अपने किसान।"[८८]

बॉलगार्ड तथा बी.टी जीन मानव कल्याण के काम में आनेवाले मृदा की उर्वर शक्ति को नष्ट करते हैं। उनको अंतक बीज कहते हैं। कपास की फसलों की कोशिकाओं पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से यह भी कहना चाहते हैं कि उपजाऊ खेतों को खराब करनेवाले बी.टी के उपयोगों पर प्रतिबंध लगाना है।

कवि लीलाधर मंडलोई 'न के बराबर' नामक कविता में कहते हैं कि गौरैया की महत्ता के बारे में हमारे पूर्वज मात्र ही जानते हैं। आज उनकी प्रजातियाँ विलुप्ति के निकट हैं। वे स्वयं घर बनाते हैं, जिसमें झरोखे, रोशनदान और धन्नियाँ भी हैं। उस समय उनको घोंसले बनाने में अनगिनत पेड़ हैं। वहाँ उनका जीवन सुरक्षित था। यह पुराने ज़माने की बात है। लेकिन इक्कीसवीं सदी में स्थिति बदल गयी। शहरीकरण एवं वन विनाश से उनकी आवास व्यवस्था भी ध्वस्त हुई। आज जंगल के स्थान पर फ्लैट है और पेड के स्थान पर डी.टी.एच छतरियाँ हैं। इंटरनेट के महासंजाल के युग में फैलता प्रदूषण के कारण उनको साँस लेना एकदम मुहाल हो गया है। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं-

"इधर अब फ्लैट हैं
और / मोबाइल फोन
डी.टी.एच छतरियाँ, केबल और
इंटरनेट का महासंजाल
और घातक बहोत आसपास अदृश्य
और फैलता प्रदूषण इस क़दर
कि साँस लेना मुहाल।"[८९]

कवि ने 'कि जान पाते रहस्य हम' नामक कविता में दिन प्रतिदिन दुर्लभ हो रहे पानी के वर्तमान एवं भविष्य का संकेत किया है। कवि अपनी इस कविता में पानी की किताब में लिखित बात को प्रस्तुत करते हैं। किताब में इस प्रकार लिखा है कि विश्व स्तर पर कुल जल संपदा का ढाई प्रतिशत शुद्ध पानी है, मानवीय एवं औद्योगिक अपशिष्टों से उसमें ढेर सा अशुद्ध हो गया है। कवि की राय में वर्तमान में पानी मर गया है। क्योंकि ज़हर बुझे नीले कच्च से त्रस्त है पानी। जलस्रोतों को

विषाक्त करनेवाली शक्तियों के पास आनेवाली सदी में पानी के अशुद्ध होने से उत्पन्न विभीषिकाएँ प्रस्तुत डब्ल्यू.एच.ओ की रपट भी थी। यह अशुद्ध पानी विश्व के अधिकांश लोगों की मृत्यु एवं घातक बीमारियों का कारण बन जाता है। कवि बताते हैं कि मृत्यु से भी सबसे आशंका है आनेवाले सदी में होनेवाले पानी की अशुद्धता।

कवि बताते हैं कि आज की दुनिया की चारों ओर बोतलबन्द पानी मात्र ही है। शुद्ध एवं स्वच्छ पानी मिलने के स्थान पर आज बोतलबन्द पानी भर गया है। मिनरल वाटर बिकनेवाले लोग दिन-प्रतिदिन पानी में सबसे अधिक मुनाफा कमाते हैं। वास्तव में दुनिया विकल्पहीन हो गया है। इसकी सही अभिव्यक्ति उनकी 'कि जान पाते रहस्य हम' नामक कविता में मिलती है -

"इससे पहले कि जान पाते रहस्य हम
दुनिया भरने लगी बोतलबन्द पानियों से
कि इसमें इतना अधिक मुनाफ़ा
और सब विकल्पहीन इतने।"[९०]

३.४३. विजेंद्र

भविष्य में पानी संकट भयानक खतरा बन सकता है। इस समस्या की अभिव्यक्ति विजेंद्र की 'तलाश' नामक कविता में देख सकते हैं। 'तलाश' नामक कविता में कवि बताते हैं कि निर्जन में भी लोगों की आँखें पानी की तलाश कर रही हैं। कवि ने पहली बार इस मौसम में ओस की बूँद झुलसने की स्थिति को देखा है। बिना पानी से लोगों का शुभ्र बदन काला होकर चेहरे पर झुर्रियाँ आयी हैं। यहाँ कवि ने पानी की खोज करनेवाले मानव की दर्दनाक दशा को प्रस्तुत किया है। भारतीय गाँवों में पानी के लिए हज़ारों मील चलनेवाले लोगों को आज भी देख सकते हैं। पशु-पक्षियों पर भी पानी संकट का प्रभाव पड़ा है। एक बूँद पानी के लिए पशु अपने मालिक से याचना करते हैं। इस मौसम में पानी न मिलने के कारण धतूरा न खिला है। कवि बताते हैं कि औद्योगिक एवं रासायनिक अपशिष्टों ने स्वच्छ पानी गन्दला बना दिया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए नदी, तालाब जैसे जलस्रोत अपशिष्ट पदार्थों को डालने का वेस्ट बॉक्स है। विश्व की सभी नदियाँ इनके प्रदूषण से त्रस्त

हैं। इससे हरियाली मटमैली हो गयी है। हरियाली का आधार भी पानी है। कवि इस पर लिखते हैं -

"धरती का पानी चुक रहा है
नदियों का पानी गंदला है
हरियाली मटमैली।"[९१]

मल्टी नैशनल कंपनियों द्वारा प्रदूषण का प्रसार रसायनों और शहरों भर के कचरे और गंदे नालियों के कारण सभी जलस्रोत अत्यंत भयानक रूप से प्रदूषित हो चुके हैं। कवि बताते हैं कि लोग पानी के इंतज़ार में कराह उठे हैं। कवि सबसे पहले एक बूँद पानी के लिए बेचैन आदमी को देखा है। झरनों की विलुप्ति के कारण पशु भी धरती पर पानी के लिए तड़प रहे हैं। कवि बताते हैं पानी पत्ती का प्राण एवं साँसों की नमी है। जीव जगत् एवं वनस्पति जगत् के क्रमिक विकास एवं अस्तित्व के लिए पानी एवं रोशनी के लिए खुला आकाश आवश्यक है। कवि जल के बिना सूखते तालाबों में सन्नाटा मात्र ही सुना है। आज धान के खेतों में भी पानी के बिना भयावह दरारें देख सकते हैं। भारतीयों के जीवन का प्रमुख आधार है धान की खेती। यह सूखने का प्रतिकूल प्रभाव भारतीय अर्थ व्यवस्था एवं किसानी जीवन पर पडेगा। कवि कहते हैं कि भारत में अनेक सदाबहार नदियाँ हैं, फिर भी लोग पानी के लिए तरसते हैं। सदा बहनेवाली किसी भी नदी में आज पीने योग्य पानी नहीं है। जलस्रोतों का संकट दिन-ब-दिन गहराता जा रहा है। कवि विजेंद्र 'तलाश' के अंत में कहते हैं -

"आँखें पानी तलाशती हैं
जैसे हरि पत्तियाँ / रोशनी, हवा और ताप -"[९२]

३.४४. विनोदबिहारी लाल

आज के लोग प्रगति के नाम पर अपने प्राकृतिक संसाधनों को किसी न किसी राष्ट्र की मल्टी नैशनल कंपनियों को बेच रहे हैं। विनोदबिहारी लाल की 'प्रगति : एक सांस्कृतिक उछाल' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है। संचार क्रांति से संबंधित प्रौद्योगिकी का विकास प्राकृतिक संपदा पर आश्रित है। इसके कारण विकसित राष्ट्र अपने राष्ट्र की आर्थिक विकास के लिए विकासशील राष्ट्रों की

प्राकृतिक संसाधनों पर अपना आधिपत्य स्थापित करते हैं। वर्तमान आर्थिक विकास नीति का आधार है ज़्यादा से ज़्यादा प्राकृतिक संपदाओं का दोहन। कवि बताते हैं भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा के अनुसार नदी माता है। नदी हमारा पालन पोषण भी करती है। नदी जैसे प्राकृतिक संसाधन पब्लिक प्रॉपर्टी होने के कारण सबको समान अधिकार है। लेकिन वर्तमान में सरकार या अन्य लोग हमारे आर्थिक वैज्ञानिक तकनीकी विकास के नाम पर पूँजीवादी लोगों को बेच रहे हैं। वे अपनी संस्कृति के अनुरूप वहाँ प्राइवेट प्रॉपर्टी लिखकर बोर्ड लगाते हैं। भारत के लोग वंचित उससे हो जाते हैं। कवि के शब्दों में -

"आज वहाँ धमकाता बोर्ड लग जाएगा
प्राइवेट प्रॉपर्टी, कीप ऑफ ....।"[९३]

आज लोग पानी को लेकर वाटर-पार्क डेवलप करने में व्यस्त हैं। यह निजीकरण की आर्थिक विकास नीति का आधार है। कवि बताते हैं कि माइदास के स्पर्श से सभी वस्तु सोना हो जाती है। हमारे जीवन के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण घटक है पानी। प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण के बिना सोने की धरती में जीना मानव के लिए असुरक्षित एवं असंभव हो जायेगा। पूँजीवादी एवं बाज़ारवादी संस्कृति से प्रभावित यह लोग नदी को गोल्ड माइन बनाने चाहते हैं। क्योंकि उनकी राय में गोल्ड माइन बनाने से यहाँ सोना बरसेगा। पब्लिक को सब्सिडी के साथ पानी देना मानवाधिकार के विरुद्ध है। विकास के असीम संभावनाओं को देखकर कवि हैरान हो गये हैं। पूँजीवादी लोगों की क्रियाकलापों को सहनेवाली नदी एवं पानी की दुर्दशा पर प्रस्तुत करते हुए कवि बताते हैं कि प्रगति एक सांस्कृतिक उछाल मात्र ही है, साथ ही स्वयं अपने विनाश का निमंत्रण दे रहा है। प्रकृति प्रदत्त उपहार नदी में विकास के नाम पर होनेवाले अत्याचारों को संकेत करते हुए कवि 'प्रगति : एक सांस्कृतिक उछाल' में इस प्रकार लिखते हैं -

"हम यहाँ डेवलप करेंगे एक वाटर पार्क
एक बोटिंग लेक / एक यॉटिंग स्ट्रैक
बरसेगा सोना यहाँ
नदी गोल्ड माइन है
पब्लिक को पानी मिलेगा सब्सिडी के साथ।"[९४]

३.४५. वीरेन डंगवाल

वीरेन डंगवाल की 'दुश्चक्र में स्रष्टा', 'विद्वेष', 'फरमाइशें', 'मानसून का पहला पानी' आदि कविताओं का प्रमुख स्वर पारिस्थितिक चिंतन है। कवि 'फरमाइशें' नामक कविता में बताते हैं कि प्रकृति का दोहन करने के बिना प्रेम, ममता जैसे गुण जंगली जानवरों एवं जीव जंतुओं से सीखो। क्योंकि इन सभी जीव-जंतुओं में त्याग एवं परोपकार की भावना निहित है। ये सभी जीव-जंतु अपने छोटे-छोटे प्रयासों से पारिस्थितिकी की रक्षा करते हैं, लेकिन मानव मुनाफे के लिए इसके विनाश में लग्न हैं। यह कवि के लिए अत्यंत दुःखद बात है। पर्यावरण के प्रति ममता, प्रेम जैसे गुण मानव मन में है तो हमारी प्रकृति माता शस्य-श्यामल हो जायेगी। कवि पर्यावरण के सभी जीव-जंतुओं को ममतामयी एवं आदरपूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

आज के औद्योगिक एवं रासायनिक क्रियाकलाप सभी जलस्रोतों को दिन-प्रतिदिन प्रदूषित कर रहे हैं। साथ ही शहर के गंदे मल-मूत्र एवं अन्य अपशिष्ट ले जानेवाली नालियों के जल भी जलस्रोतों में मिलाकर उसे प्रदूषित करते हैं। इसका संकेत भी वीरेन डंगवाल की 'विद्वेष' नामक कविता में देख सकते हैं। कवि बताते हैं कि जलस्रोतों को प्रदूषित करने में बहुत बड़ा हाथ मनुष्य का है। इसको प्रदूषित करनेवाला मानव हाथ-पैर धोने के लिए नदी तट पर ही आते हैं। कवि के शब्दों में -

"यह बूचड़खाने की नाली है।
इसी से होकर आते हैं नदी के जल में
खून / चरबी, रोयें और लोथड़े !"[९५]

कवि ने यहाँ दिन-प्रतिदिन विकराल होती जा रही पानी समस्या को प्रस्तुत किया है। इस समस्या का समाधान नहीं किया जाये तो नदी जैसे जलस्रोत अपशिष्ट पदार्थ डालने का एक वेस्ट बॉक्स बन जायेगी।

प्रकृति हमारी प्रगति के लिए अनेक संसाधन दिया है, लेकिन आज मानव विज्ञान एवं टेक्नॉलजी के माध्यम से पारिस्थितिक चक्र को बदल डालने पर तुले हुए हैं। पारिस्थितिक चिंतन की दृष्टि से काफी सशक्त कविता है 'दुश्चक्र में

स्रष्टा'। इस कविता में कवि पहाड, नदी, छिपकली, हाथी, चींटी, मछली, कुत्ते, आदमी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों की महत्ता प्रस्तुत करने के साथ-साथ वर्तमान में हो रहे उसकी संकटग्रस्तता को भी प्रस्तुत किया है। इन सभी तत्वों को अपना-अपना नियम भी है। इन नियमों का बदलाव पारिस्थितिक असंतुलन का कारण बन जाता है।

प्रगति का रास्ता खोलनेवाले विज्ञान एवं टेक्नॉलजी वर्तमान मानव के लिए भगवान की तरह है। कवि बताते हैं कि छिपकली छत पर उल्टा सरपट भागती है, नदियाँ बगैर बिजली को चालू कर दी है, यह सब सृष्टि के हर स्वाद की मर्मज्ञ हैं। आज ये सभी तत्व मानव की अँतडियों और रसायनों का तंत्रजाल में फँस गया है। कवि को भी समझ में नहीं आता है कि ये सब कारनामे फिर क्यों बंद कर दिया है ? क्योंकि आज प्राकृतिक बदलाव सृष्टि के नियमों के विरुद्ध चल रहा है। फिर भी कवि वर्तमान मानव से पूछते हैं -

"नहीं निकली नदी कोई पिछले चार-पाँच सौ साल से
जहाँ तक मैं जानता हूँ
न बना कोई पहाड अथवा समुद्र
एकाध ज्वालामुखी ज़रूर फूटते दिखाई दे जाते हैं
कभी कभार।"[९६]

सबको बिकने का साधन बनानेवाले वैश्वीकरण एवं बाज़ारवाद ने मानव को प्रकृति से मिलने वाले सभी संसाधनों को दोहन करने की प्रेरणा दी है। इससे दिन-प्रतिदिन प्राकृतिक संपदाएँ समाप्त होती जा रही है। आज जिस प्रकृति से हम आवश्यकता और क्षमता से अधिक धन प्राप्त कर लेना चाहते हैं, दोहन से प्रभावित वही प्रकृति हमें बाढ़, अकाल, तूफान एवं भूकम्प जैसे प्राकृतिक आपदाएँ मात्र ही देगी। इसका संकेत भी वीरेन डंगवाल की कविता में द्रष्टव्य है। आज के पूँजीवादी लोग पूरे ब्रह्माण्ड के सृष्टि नियम को बेदखल कर देते हैं। वर्तमान मानव को इसके प्रति सचेत होना है।

३.४६. शशि सहगल

तेजाबी वर्षा से उत्पन्न संकट को शशि सहगल ने 'ज़हर' नामक कविता में प्रस्तुत किया है। आज की बारिश से पेड़ भी डरे हुए से दीखते हैं। क्योंकि आज की बारिश साधारण बारिश नहीं है। इसमें जल का पी.एच मान सात से कम हो जाता है। वायुमण्डल को प्रदूषित करने वाले गैसें वर्षा की शुद्ध पानी को अम्लीय बना देते हैं। पेडों और फसलों के लिए यह अत्यधिक हानिप्रद है। इसके दुष्प्रभाव को संकेत करते हुए शशि सहगल ने लिखा है -

"धरती देख रही हैं
भय फैल गया है उनकी शिराओं में
बारिश थमते ही
फिर से पीना होगा ज़हर।"[९७]

शशि सहगल ने लिखा है कि धुएँ के कारण पेड़ आज झूमना भूल गया है। क्योंकि धुआँ, कार्बन मोनो ऑक्साइड, हाइट्रोजन सल्फैड जैसे अन्य रासायनिक पदार्थों के राख अन्य हानिकारक छोटे कणों से मिलकर पृथ्वी के चारों ओर के वायुमण्डल को प्रदूषित कर रहे हैं। विषैली गैसों के दुष्प्रभाव आज पेड़ भी झेल रहे हैं। यह पेडों में भी विक्षप्तियाँ पैदा करते हैं। इससे कई औषधीय पेड़ विलुप्ति की ओर अग्रसर हैं।

३.४७. शैल रस्तोगी

शैल रस्तोगी की 'एक उदास आशा', 'कल बगीचे में', 'सुदूर जंगल में', 'पथ के साथी' आदि कविताओं में पर्यावरणीय चेतना देख सकते हैं। एक उदास आशा नामक कविता का प्रमुख प्रतिपाद्य राप्ति नदी में घटित बाढ़ का भयानक रूप है। दिन-रात के विनाश की तांडव लीला में गाँव, मकान, झोंपडे, गाय, खेत, खलिहान, हाट, बाज़ार सब बह गया है। लोग के साथ पशु-पक्षी की भी मृत्यु हुई। कवि बताती हैं कि वहाँ की मुर्दा ज़िंदगियों के लिए हेलिकोप्टर से भोज्य सामग्रियाँ गिरा रहे हैं। यह समस्त विनाश नदी के क्रोध के कारण है।

'कल बगीचे में' नामक कविता में कवयित्री ने पशु-पक्षियों की व्यथा - कथा को प्रस्तुत किया है।पत्ते, चिडिया, बिल्ली सब कुछ जीने में डर रहे हैं। सारी प्रकृति वेदना स्नात है। उनके दुख को समझने के लिए कोई नहीं है। कवयित्री मानव से पूछती हैं कि मानव के अलावा सारे पर्यावरणीय तत्वों का दुख कौन समझेगा -

"हवा ने मेरे पाँवों में लिपटकर कुछ याचना की थी
मैंने सुनी नहीं।
मुझे लगा चिडिया आहत है,
नन्ही बिल्ली दुख-कातर है,
पेड रोया है अभी अभी
पत्ते मुझसे कुछ कहना चाह रहे हैं।"[९८]

धरती में रहनेवाले चिडिया, मछली, पैंग्विन, डॉल्फिन, बिल्ली, कछुए जैसे सभी तत्व कवियित्री के लिए एक ही पथ के साथी हैं। सभी का जीवन एक दूसरे पर निर्भर है। फुटपाथ पर जीनेवाले, राजमहलों के बाशिंदे, पेड पर रहनेवाली चिडिया, महानगर के तट पर रहनेवाले पैंग्विन, समुद्र की डॉल्फिन जैसे सभी प्राकृतिक उपादानों का सपना एक जैसा है। सभी जैविक तत्वों के सोच विचार एवं सपना सब में समानता देखते हैं। इन सभी का संकेत 'पथ के साथी' नामक कविता में मिलता है।

'सुदूर जंगल में' कवयित्री शैल रस्तोगी बताती हैं कि जिस प्रकार पारिस्थितिक त्रासदियों से मानव आतंकित है उसी प्रकार जंगली जानवर भी इससे त्रस्त हैं। बाढ़, आँधी, तूफान जैसे पारिस्थितिक विपदाओं के समय में मानव के समान जंगली जानवर भी भयभीत है। क्योंकि ये विपदाएँ समस्त पारिस्थितिक तंत्र को नष्ट करते हैं। इसके प्रति वर्तमान मानव को सचेत होना है। सभी जैविक अजैविक तत्व मिल जुलकर विश्व के समस्त पारिस्थितिक तंत्र को संचालित करते हैं। इस पारिस्थितिक तंत्र में सबका अपना-अपना अलग महत्व है। कवयित्री ने अपनी कविताओं के माध्यम से मानव एवं पर्यावरण के बीच एक आत्मीय संबंध स्थापित करने का प्रयास किया है।

३.४८. शैल सक्सेना

विषैली युद्धास्त्रों के आविष्कार, परमाणु बमों के विस्फोट एवं प्रयोगों ने पारिस्थितिकी को विनाश के द्वार पर खड़ा कर दिया है। शैल सक्सेना ने 'विकल्प' नामक काव्य में युद्ध की विभीषिकाओं के साथ-साथ युद्धोपरांत के पारिस्थितिक विनाश को भी प्रस्तुत किया है। आज के यांत्रिक, रासायनिक अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से प्रदूषण की समस्या जटिल से जटिलतर होती जायेगी। युद्ध में प्राकृतिक संतुलन बिगडा है, इसके परिणामस्वरूप आये प्राकृतिक आपदाओं की संख्या में वृद्धि हुई। विषैले युद्धास्त्रों के प्रयोग से जल, भूमि एवं वायु जैसे सभी तत्व प्रदूषण से त्रस्त है। कवयित्री कहते हैं कि नदी सूख गयी है, उसके तटवर्ती वृक्ष ठूँठ बनकर खडा है। जलचर भी भस्मीकृत हुए। प्राकृतिक आपदाएँ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए हानिकारक हैं। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़ जैसे प्राकृतिक आपदाओं का मूल कारण कवयित्री को भी मालूम नहीं है। लगता है कि रासायनिक अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग का दुष्परिणाम होगा। अतिवृष्टि-अनावृष्टि मंडराते समय चारों ओर वर्षा हुई, वह साधारण वर्षा नहीं है, अम्ल वर्षा है। विगत कई सालों से विश्व के कुछ देशों को इस खतरे को सामना करना पड़ता है। सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पियों को यह नुकसान पहुँचाती है। अम्ल वर्षा से उत्पन्न विभीषिकाओं पर कवयित्री ने लिखा है -

"वर्षा हुई रासायनिक अम्लों की
क्षार हुए थे वर्षा वन अनायास ही
किसी स्थान पर बरसे थे जलचर आकाश से
विषाक्त हुआ था वातावरण
श्वास रुद्ध-सी होती थी प्रदूषित वायु से।
वृद्धि हुई थी अकस्मात धरा के तापमान में।"[९९]

कवयित्री ने जलवायु परिवर्तन का संकेत करते हुए निखा है कि वर्तमान में है। जलवायु में होनेवाला परिवर्तन प्राकृतिक नहीं है। भूमि तल से वसंत विदा हो गया है। ग्रीष्म ऋतु में कभी हिमपात होता है। जिससे बाढ़, ज्वालामुखी, भूकम्प जैसी अनेक समस्याएँ उत्पन्न हुई है। वर्षों से बसे नगर, ग्राम निमिष मात्र में धराशायी हो जाते हैं। यह जलवायु परिवर्तन मानव तथा सभी जीव-जंतुओं के अस्तित्व

के लिए घातक बन जाता है। शैल सक्सेना की राय में यह मानव बोझ से आये प्रकृति की विनाश लीला है। रासायनिक अस्त्र शस्त्रों के घातक प्रभाव से मृदा एवं वनस्पतियाँ भी विषाक्त हुईं। रासायनिक एवं परमाणु विकिरणों ने भूगर्भीय जल को भी प्रदूषित कर दिया है। ये युद्ध पृथ्वी के अस्तित्व के लिए भी खतरा बन जाते हैं। भविष्य में भूमि की उर्वरता नष्ट होकर बिना वनस्पतियों से धरती बंजर हो जायेगी। शैल सक्सेना के शब्दों में-

"उग नहीं सकती थीं वनस्पतियाँ पूर्ववत्
बंजर हुई थी धरती अभिशाप ग्रस्त
निरंतर वृद्धि हो रही थी अनुर्वर भुखण्डों में
लगता था भविष्य कुछ नहीं उगेगा यहाँ।"[१००]

आज के मानव ने विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से स्वामिनी प्रकृति को दासी बनाया है। कवयित्री की राय में प्रकृति के संतुलन को नष्ट करने का या विकृत करने का आयाचित वरदान है विज्ञान। विज्ञान ने मानव जीवन को सुखमय बनाया है, साथ ही संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को भी बिगाड़ दिया है। वसुधा की गोद में मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए समान अधिकार है। एक क्षण में विनाश करनेवाले प्राकृतिक संसाधनों का पुनर्निर्माण संभव नहीं है। पारिस्थितिक समस्याओं को दूर करने का उपाय भी कवयित्री बताती हैं -

"प्रकृति की, पंचतत्वों की रक्षा करनी है,
समर्थ रहें ताकि वे सृष्टि परिपालन में।"[१०१]

३.४९. श्रीकांत जोशी

प्रकृति का संरक्षण करना मानव का कर्तव्य है। इसके कारण कवि श्रीकांत जोशी अपनी कविताओं में प्रकृति के श्रेष्ठतम अवदानों को रेखांकित करते हैं। 'देखते हुए शिखर', 'अनुरोध', 'सूर्य से', 'विराट विवश से', 'वसंत इस बार', 'सत्य वहाँ सुरक्षित है', 'बलचनमा सीमांतों का अकेला नागरिक कहता है' आदि कविताओं में किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय चेतना देख सकते हैं।

पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने के साथ जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में जंगलों की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसलिए जंगल हमारे लिए महत्वपूर्ण संसाधन है। कवि बताते हैं कि वर्तमान एवं भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं के लिए मानव की अमानवीय क्रियाकलापों से जंगलों के हरापन को बचाकर रखना है। श्रीकांत जोशी 'देखते हुए शिखर' नामक कविता में मानवीय संस्कृति की अनवरत यात्रा पर विचार प्रस्तुत कर जंगल संरक्षण की आवश्यकता पर बल देते हैं -

"अब मनुष्य के जंगलीपन से
बचा कर रखना है
जंगलों का हरापन।"[१०२]

'विराट विवश से' नामक कविता में कवि कहते हैं कि प्रकृति के शास्ताः एवं समय के सृष्टाः सूर्य है। आदित्य, आफताब, मार्तण्ड, दिनमणी उनका पर्याय है। अग्नि के सबसे बडा आक्षितिज उत्तराधिकार सूर्य है। उनकी आत्मजा हैं ऋतुएँ, नातिन फसलें हैं, मार्ग अंतरिक्ष एवं समुद्र सेवक हैं। यहाँ कवि सूर्य एवं अनेक पर्यावरणीय तत्वों के बीच के संबंध को प्रतिपादित करते हैं। सृष्टि तत्व सूर्य नहीं तो समूचा विश्व अंधकार में पड़ जायेगा। सृष्टि को संचालित एवं गति देनेवाला तत्व है सूर्य। इसका संकेत भी उनकी कविता में द्रष्टव्य है। 'अनुरोध सूर्य से' नामक कविता में कवि लिखते हैं कि सूर्य के नन्हीं तन्वंगी किरण फूलों पत्तों, फुनगियों, टहनियों, शाखाओं, रंग बिरंगी पक्षियों एवं जलचरों जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों को छू लेते हैं। सूर्य ने अपनी विशेष किरणों से कवि को भी छुआ है। तितलियों, भ्रमरों, रंगीन पक्षियों, सामने बहते प्रवाह के जलचरों को कवि आँखें भर देखना चाहते हैं। क्योंकि आज सभी पर्यावरणीय तत्व मृत्यु के निकट हैं। कवि अपनी इस कविता में तितलियों, भ्रमरों, रंगीन पक्षियों एवं जलचरों सहित एक स्वच्छ पर्यावरण पर बल देते हैं। इसलिए कवि प्रकृति से प्रार्थना करते हैं -

"मैं ने प्रार्थना की प्रकृति से -
लौटने मत देना मुझे -" [१०३]

'बलचनमा-सीमांतों का अकेला नागरिक कहता है' नामक कविता में कवि श्रीकांत जोशी अन्य सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत करने के साथ-साथ एक

स्वस्थ पर्यावरण की आवश्यकता की बात बताते हैं। कवि बताते हैं कि आकाश में न सूर्य है न चंद्रमा है। आज के प्राकृतिक क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप फसलों की आँखें भी बुझ गयी हैं। एक संपूर्ण सदी के उत्तरार्द्ध के शास्त्रों ने तमाम भूखण्डों को श्मशान के रूप में बदल दिया है। कवि बताते हैं कि इक्कीसवीं सदी के हाँकने पर आदिम अँधेरों की तरफ सूर्य और चंद्रमा लौट रहे हैं। पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं -

> "लौट रहे हैं सूर्य और चंद्रमा
> आदिम अँधेरे की तरफ।"[१०४]

'वसन्त इस बार' नामक कविता में कवि ने दिन-प्रतिदिन बदलते जलवायु के बारे में बतया है। वायुमण्डल में दिनोंदिन बढ़ रहे हरितग्रह गैसें मौसम के संतुलन चक्र को गड़बड़ाते हैं। इससे भूमण्डल में तापमान वृद्धि होती है। ध्रुवों और भूमध्य क्षेत्रों के बीच के तापमान में होनेवाले अंतर का बुरा प्रभाव ऋतुओं पर भी पड़ता है। 'वसंत इस बार' नामक कविता में कवि को वसन्त आने की सूचना पत्र से ज्ञात होता है। आज के माहौल में ऋतुपरिवर्तन का संकेत पत्रों से ही प्राप्त होते हैं, प्रकृति से यह सूचना नहीं मिलती है। कवि बताते हैं कि इस वर्ष वसंत का सलूक बदल गया है। सुबह की हवाओं में नाराज़गी है, फूल भी इज़ाज़त की मुद्राओं में है। इक्कीसवीं सदी में वसन्त आयातित उद्योगों की तरह आयेगा। बहुराष्ट्रीय उद्योगों के परिणाम स्वरूप हमारी ऋतुएँ महँगे दामों में लौट रहे हैं। इस ऋतु परिवर्तन से किसान भूख एवं प्यास से तड़प रहे हैं। आज के बाज़ार में अन्य वस्तुओं की तरह कृत्रिम वसन्त का उपहार भी है। कवि बताते हैं कि आज बोतलों में फल है, वृक्षों में नहीं उसी प्रकार तमाम पक्षियों की आवाज़ टेप में है, दीवारों में लालपन-हरेपन है। इस तरह हो गया है आज का वसंत। यह सब प्रकृति प्रदत्त नहीं, मानव निर्मिति मात्र है। इन सभी क्रियाकलाप कवि के लिए क्षोभ एवं दुख का कारण बन जाता है। वर्तमान एवं भविष्य के वसंत का संकेत करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

> "ओफ्फ ! मेरा चिर-परिचित वसन्त खरीदा जा चुका है
> अब उसका आयात होगा
> आनेवाले वर्षों में।"[१०५]

ज़मीन, पहाड़, नदी जैसे सब पर्यावरणीय तत्व भविष्य को बचाना चाहते हैं, लेकिन आज के मानव इन तत्वों को दुरुपयोग कर भविष्य को संकटग्रस्त बनाने का प्रयास कर रहे हैं। प्रकृति सौंदर्य का सौंदर्य है। आदमी की तरह अपने को स्वयं ढँकता नहीं। इसका संकेत करते हुए 'सत्य वहाँ सुरक्षित है' नामक कविता में कवि श्रीकांत जोशी ने लिखा है -

"प्रकृति ढँकती नहीं स्वयं को आदमी की तरह
सत्य वहाँ सुरक्षित है आदिम भव्यता में,
प्रकृति सौंदर्य का सौंदर्य है।"[१०६]

३.५०. श्रीकृष्णकुमार त्रिवेदी

'आग पेडों को नहीं पहचानती है', 'प्रभु हे प्रभु, महा प्रभु !' आदि कविताओं में श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी स्वच्छ पर्यावरण की आवश्यकता की बात बताते हैं। धरती पर घाव लगाने वाले भस्मासुरों की अविवेकपूर्ण प्रवृत्तियों से सभी जीव-जंतुओं का अस्तित्व मिट जायेगा। लाभ के पीछे चलनेवाले आज के मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन कर कुपथ पर आरुढ हो रहे हैं। उनको कवि चेतावनी देते हैं अंतःकरण की आवाज़ को अनसुनी मत करो। प्राकृतिक असंतुलन का दुष्परिणाम मानव, जीव-जगत् एवं वनस्पति जगत् पर भी पड़ता है। इसकी ओर इशारा करते हुए कवि 'आग पेडों को नहीं पहचानती है' में परिंदों से बताते हैं -

"ओ परिंदो !
दूसरों के घोंसलों को आग देकर
कब तलक छुपते रहोगे बादलों में ?
छोड़कर धरती भला कब तक उडोगे ?
नीड़ अपना बचा पाओगे कहाँ तक ?
भेद अपने या पराए में नहीं करती तनिक भी
आग पेडों को नहीं पहचानती है।"[१०७]

व्यक्ति के सामाजिक और आर्थिक विकास हेतु विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी का विकास बहुत ही महत्वपूर्ण है। लेकिन आज के विकसित राष्ट्रों ने

औद्योगिकीकरण हेतु विज्ञान के माध्यम से पर्यावरण को विध्वंस एवं दोहन करने में व्यस्त है। इसका संकेत उनकी 'प्रभु, हे प्रभु, महा प्रभु !' नामक कविता में मिलता है। कवि बताते हैं कि वैज्ञानिक विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से ग्रहों-उपग्रहों को खोजकर उनके अंतर्भूत रहस्यों का उद्घाटन किया है। यह एक ओर हमारे लिए शुभकामना है दूसरी ओर अशांति का भूस्खलन है। कवि की राय में वैज्ञानिकों की यह खोज सुरक्षित मानवता में विषाद के विषदन्त फैलाने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो गया है। साथ ही कवि प्रभु से निवेदन भी करते हैं कि इन लोगों को जन्म न देना है। इसका कारण भी कवि बताते हैं। उन्होंने जंगलों जडों को खोदकर पहाडों को नंगा किया है। यह वैज्ञानिक खोज के नाम पर अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए सभी पर्यावरणीय तत्वों को दूषित कर रहे हैं। नदियों के जल को विषाात्त करने के साथ-साथ बार-बार प्रकृति को धोखा दिया है। इसकी अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में मिलती है -

"खोदी हैं जडें जंगलों की,
नंगा किया है पहाडों को
विषात्त किया है नदियों का जल।"[१०८]

कवि बताते हैं प्रकृति के संपूर्ण रहस्यों को उद्घाटित करनेवाला विज्ञान में समस्त मानवता के विनाश के बीज छिपे हुए हैं। इसलिए वैज्ञानिकों की खोज पर्यावरणीय-नियमों के अनुकूल होना चाहिए। प्रकृति के साथ मनुष्य का सामंजस्य या भावात्मक संबंध होना चाहिए। मानव का कल्याण धरती के संरक्षण से ही होगी। धरती संरक्षण के प्रति जागरूकता पैदा करने में श्रीकृष्णकुमार त्रिवेदी की कविताएँ सक्षम हैं।

३.५१. सदानंद साही

कवि सदानंद साही ने अपनी कविता 'कुएँ' में दिन-प्रतिदिन मृतप्राय होते कुएँ को प्रस्तुत किया है। वे कहते हैं कि पृथ्वी के अंतकरण की गहनता एवं शीतलता का भान करानेवाली कुएँ पृथ्वी की तरलता के अंतकरण का आख्यान है। कवि ने यहाँ कुएँ की महत्ता प्रस्तुत की है। लेकिन आज की स्थिति बदल गयी है। उपभोक्तावाद एवं बाज़ारीकरण ने आज के मानव को प्रकृति का दोहन करना सिखाया

है। जब भूमिगत जल हैंड पंप के माध्यम से निकालना शुरू कर दिया उस समय से ही हमारी कुएँ मृतप्राय होते जा रहे हैं। आज के मानव ने औद्योगिक एवं रासायनिक क्रियाकलाप से भूमिगत जल को विशेषकर कुएँ के जल को प्रदूषित कर दिया है। आज विश्व में कुएँ का अस्तित्व समाप्त होता-सा दिखलायी दे रहा है। वर्तमान में कुएँ का पानी सूखकर या प्रदूषित होकर मुहल्ले का कूडेदान बन गया है। कवि के शब्दों में -

"धीरे-धीरे सूखते गए
मुहल्ले के कूडेदान बने वे।"[१०९]

३.५२. सुनीता जैन

सुनीता जैन 'वह और बात है' नामक कविता में पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता की बात बताती है। कवयित्री बताती हैं औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण के नाम पर होनेवाले मानवीय क्रियाकलाप गाँवों को भी शहर बनाया है। इस शहर में जीवन के संपोषित विकास के लिए एक ओक पानी भी नहीं मिल पा रहा है। बावली में भी सिर्फ रेत ही रेत है। प्रगति के नाम पर होनेवाली कई परियोजनाएँ विकास के साथ-साथ जलस्रोतों को रेगिस्तान बनाया है। मानव का विकास भी प्रकृति के विराट् स्पंदन का परिणाम है। उसके सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक विकास में पर्यावरण का योगदान अमूल्य है।

इस प्रकार पारिस्थितिकी के संतुलन के लिए वनस्पति, जल एवं जलचर आदि का संरक्षण अति आवश्यक है। इसके संरक्षण एवं विकास की कामना करनेवाले मानव को प्रकृति की ओर लौटना है। यही पारिस्थितिक समस्याओं का समाधान का मार्ग है। जैसे-

"सुरक्षित होगी वनस्पति
होगा जल, जलचर भी -
वह ओर बात कि तुम
लौट आओ फिर भी।"[११०]

३.५३. सुशांत सुप्रिय

कवि सुशांत 'सूरज चमको न' कविता में शहर के विकास एव पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में सूरज को चमकने के लिए कहते हैं। क्योंकि सूरज के बिना शहर बीमार हो गया है। इस बीमार को दूर करने केलिए सूरज चमकना ज़रूरी है। कवि गुजरात एवं बुझे हुए इराक का संकेत करते हुए वहाँ के सृष्टि-विकास के लिए सूर्य से चमकने का भी निवेदन करते हैं -

"बुझे हुए इराक पर / जगमगाते पल के लिए
अरुणाई भरे कल के लिए
सूरज चमको ना / आज !"[१११]

इक्कीसवीं सदी की सबसे बडी आवश्यकता है सूर्य शक्ति। वह ऊर्जा का स्त्रोत है। इसके बिना की धरती अंधकारमय है। मानव जाति को विनाश से बचाने के लिए एवं पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने सूर्य की महत्ता को कवि ने प्रस्तुत किया है।

३.५४. सूरजप्रसाद पचौरी

सूरजप्रसाद पचौरी अपनी कविता 'बाढ़-२००५' में मध्यप्रदेश में हुए बाढ़ की भयानक परिणामों को संकेत करते हैं। कवि अपनी कविता में बताते हैं कि इस तरह का बाढ़ इससे पहले कभी नहीं देखा है। घर-द्वार सब बाढ़ में डूब गया है। कुछ लोग वृक्षों के ऊपर जाकर अपनी जान बचाई है। सारे गलियाँ बाढ़ से घिरी हुई हैं। लोग अन्न न मिलने के कारण भूख से तड़प रहे हैं। कवि बताते हैं कि नदी, नाले जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व अतिवृष्टि से दुखित हैं। बाढ़ से उत्पन्न भयानक विभीषिकाओं पर कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"उतरी बाढ़ उजाड़ छोड़कर
गाँव हुए दुर्गंध-युक्त सब
वीरानी छा गई बस्ती में।"[११२]

आज भारत में 'सेंट्रलवाटर कमीशन' बाढ़ संबंधी समस्याओं को देखरेख करने में कार्यरत है। प्राकृतिक जन्य कारणों के अलावा आज मानव जन्य कारण भी बाढ़ को अधिक विनाशकारी बना दिया है।

३.५५. संजय कुंदन

संजय कुंदन 'विस्थापित' नामक कविता में कहते हैं कि नदियों की स्वच्छ जल आज प्रदूषण से गन्दगीयुक्त हो गया है। नदी एवं शहर की जडों को तलाश करना आज असंभव-सा हो गया है। कल-कल छल-छल बहनेवाली नदी के स्थान पर आज उनकी समाधि मात्र है। इस कविता में कवि ने नदी की गाथा को प्रस्तुत किया है। आज की नदी ने स्वयं अपना अस्तित्व खो रही है। लगातार जल में डूबने वाली नदी में आज जल के स्थान पर सिर्फ रेत की माया है। कवि के शब्दों में-

"वह तो डूब रही लगातार
अपने ही जल में
यह जो सामने है
वह रेत की माया है।"[११३]

विश्व की कई नदियाँ किसी न किसी रूप में दिन-प्रतिदिन अस्त हो रही हैं। कवि ने 'विस्थापित' नामक अपनी कविता में नदी के प्राचीन वैभव का स्मरण कर उसके संरक्षण पर बल दिया है।

३.५६. हरीशचंद्र पाण्डे

प्रकृति के साथ आज के छेड़छाड़ से सबको विध्वंस करनेवाला प्रदूषण या असंतुलन का अतिभयानक खतरा पैदा हो गया है। दिन-प्रतिदिन होनेवाले प्राकृतिक दुर्घटनाएँ इसके असंतुलन का परिणाम है। इसके प्रति सचेत कवि हैं - हरीशचंद्र पाण्डे। उन्होंने 'मंच', 'शेर बचाओ (अभियान)', 'हथियाई गयी ज़मीन', 'खम्भा', 'पानी' आदि कविताओं के माध्यम से पारिस्थितिक दुर्घटनाओं का चित्र प्रस्तुत किया है। वन-विनाश से उत्पन्न दुष्परिणामों की अभिव्यक्ति उनकी 'मंच' नामक

कविता में देख सकते हैं। कवि कहते हैं कि पेड़ को न काटो। क्योंकि एक पेड़ असंख्य पशु-पक्षियों का आवास स्थान है। कवि के शब्दों में पक्षियों का मंच है पेड़। आज यह पक्षी वन-विनाश के कारण अपना घर या आवास स्थान खो रहा है। कवि के लिए चिंता एवं दुख का विषय है वर्तमान में शहरीकरण एवं औद्योगिक प्रगति के नाम पर मानव ने बेरहमी से हरे-भरे वृक्षों को अंधाधुंध काटा जा रहा है। जीवमण्डल के सभी पर्यावरणीय तत्वों में पेड़ से कल्याण ही कल्याण मात्र होता है। इसके विनाशकारी कटाव ने पारिस्थितिक तंत्र को विपत्ति का आमंत्रण दे दिया है। कवि बताते हैं कि मानव वन संरक्षण पर बहस करते हैं, फिर वही आदमी अपनी आर्थिक पूर्ति के लिए पेड़ को काट रहे हैं। उससे कवि पूछते हैं कि आपकी बहस से क्या फायदा ? पेड़ विनाश के खतरे पर कवि ने 'मंच' में लिखा है -

"न काटो पेड़ / पेड़ मंच है पक्षियों के
पक्षी यहाँ से अपनी बात पूरी आज़ादी से उठाते हैं
न काटो पेड़ / एक बहस करता हुआ आदमी कटता है .... "[११४]

आज चारों ओर पेड़ के स्थान पर बिजली या टेलिफोन का खम्भा मात्र ही है। कवि हरीशचंद्र पाण्डे 'खम्भा' नामक कविता में बताते हैं कि पारिस्थितिकी को विनाश करनेवाली यह हवा में लटकानेवाली खम्भा नहीं अचम्भा है। उसमें भैंस भी अपना बदन रगड़ नहीं पाता है, चिडिया उस खम्भे को देखकर बिना बैठे उड़ गया है। कवि की राय में चारों ओर के खम्भे को काटकर उसके स्थान पर जल, वायु जैसे पर्यावरणीय तत्वों के चक्र को संतुलित करनेवाले पेड़ों को रोपना है।

'हथियाई गयी ज़मीन' नामक कविता में कवि बताते हैं कि पूजा के बिना धरती माता हमें फूल-फल जैसे अनेक उपहार दिया है। फिर भी मानव सर्वाधिक संसाधनों को प्राप्त करने के लिए ज़मीन की हत्या कर रहे हैं। धरती का लक्ष्य मानव की प्रगति एवं विकास मात्र है विनाश नहीं। आज विश्व में ऋतु परिवर्तन भी देख सकते हैं। वसंत, गर्मी, बारिश जैसे ऋतु समय पर न मिलने से विश्व की अर्थ व्यवस्था पूरी तरह गड़बड़ हो जायेगी। इसलिए कवि बताते हैं कि वर्तमान में वसंत के पहले ही वसंत आ जाता है। यहाँ बादलों की प्रतीक्षा करते समय बादल नहीं बरसता है। सारी ऋतुएँ अनियमित रूप से आती हैं। कवि के शब्दों में -

"फुहारें नहीं करतीं बादलों की प्रतीक्षा यहाँ
वसन्त आ जाता है वसन्त के पहले
ऋतुएँ सारी परवान चढ़ सकती है एक बाड के भीतर।"[११५]

वन-विनाश एवं ऋतु परिवर्तन से यहाँ के पशु-पक्षी लुप्त हो गये हैं। अपनी जगह की चिडिया को देखने के लिए आतुर है कवि। औद्योगिक-वैज्ञानिक क्रांति से पर्यावरण के कई सहज तत्व नष्ट हो गये हैं, दूसरी ओर मानव की स्वार्थलिप्सा भी प्रतिदिन बढ़ रही है। 'शेर बचाओ (अभियान)' नामक कविता में कवि शेर के संरक्षण की बात बताते हैं। ये शेर आज नष्ट प्राय हैं। कवि लिखते हैं कि उनकी पुतलियाँ ब्रह्माण्ड सा सिर दुर्भेद्य है। जंगल में जो अनुपम है, उसे नष्ट होने के पहले ही बचाना है। कवि बताते हैं कि प्रकृति के सभी पर्यावरणीय तत्वों को अपना एक नियम है, इनमें से किसी एक की कमी या अधिकता पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। आज के मानव से कवि शिकारियों के हाथों से शेर को बचाने का निवेदन करते हैं -

"ऐसे कूट को बचाया ही जाना चाहिए
बचाया ही जाना चाहिए।"[११६]

'पानी' नामक कविता में कवि हरीशचंद्र पाण्डे ने पानी की महत्ता को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि आग से धरती के भीतर का पानी भी लड़ रहा है। औद्योगिक, रासायनिक एवं मानवीय क्रियाकलापों के कारण आज भूगर्भीय जलस्रोत भी प्रदूषित हो गया है। कवि बताते हैं पानी के अलग-अलग रूप हैं। इसके बिना सृष्टि के बारे में सोचना कल्पनातीत है। पानी के कारण मात्र ही बगीचे में लाल-सेब झूम रहे हैं। गुलाब खिल रहा है। पानी के बिना यह सब सूख जायेगा। पानी के बिना दुनिया का मतलब क्या है ? इसका उत्तर भी कविता में विद्यमान है। कवि कहते हैं कि पानी न होने का मतलब पतझड़ है, रेगिस्तान है। पानी संकट के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि ने अपनी कविता 'पानी' में इस प्रकार लिखा है -

"उसके न होने का मतलब ही
पतझड़ है / रेगिस्तान है
उसी को सबके किफ़ायती ढंग से बरतने का नाम हो सकता है,
वुज़ू।"[११७]

३.५७. हरीश गोयल

हमारे लिए नदी एवं सागर प्रकृति प्रदत्त अमूल्य संसाधन है। ये आज मिट रहे हैं। 'नदी की व्यथा' एवं 'समुद्र मंथन' नामक कविताओं में हरीश गोयल ने नदी एवं समुद्र की वर्तमान दुरवस्था को प्रतिपादित किया है। कवि 'नदी की व्यथा' में आज के मानव से पूछते हैं - नदी क्यों उदास से बह रही है। आज की नदी बोझिल मन से बह रही है। इसका प्रमुख कारण बहुराष्ट्रीय उद्योगों एवं मानवीय क्रियाकलाप है। आज के विभिन्न बहुराष्ट्रीय उद्योगों ने हानिकारक अपशिष्ट पदार्थों को नदियों में छोड़ देता है। कवि कहते हैं कि नदी का उद्‌भव पर्वत की गोद से है। मानव को पिलाने के लिए वह स्वच्छ, निर्मल जल कल-कल से नदी में बहा रही है। लेकिन आज के मानव ने नदी को व्यर्थ ज़हरीली पदार्थ डालने का वेस्ट बॉक्स बनाया है। कवि कहते हैं कि यह दर्द नदी का मात्र नहीं है मानव का भी है। कवि नदी में ज़हरीली पदार्थ डालने का विरोध कर रहे हैं। कवि बताते हैं भारतीय संस्कृति में नदी माँ की तरह है। बच्चे को दूध पिलाने की तरह नदी पूरे मानव को प्रदूषित जल पिलाती हैं। इसलिए नदी को दर्द है। क्योंकि एक ममतामयी माँ पूतना का दूध बच्चे को कैसे पिला दे ? यहाँ पूतना का दूध नदी का प्रदूषित जल है। कवि नदी से पूछते हैं बहुराष्ट्रीय उद्योगों की अपशिष्ट पदार्थों से उत्पन्न कीच-भरा जल लेकर किस मुँह से सागर के पास जा रही है ? नदी आज सागर से मिलना नहीं चाहती है, क्योंकि नदी का पूरा जल प्रदूषित है। स्वच्छ निर्मल-जल देनेवाली नदी की व्यथा को प्रस्तुत करते हुए 'नदी की व्यथा' कविता के अंत में कवि लिखते हैं -

"नदी का तो स्वभाव है
स्वच्छ निर्मल जल देना।
अब वह जाये तो जाये कैसे
विषकन्या बन
अपने ही सागर से मिलने ?"[११८]

आज का समुद्रीय प्रदूषण सागर की जैव संपदा के लिए विष तुल्य है। आज के वैज्ञानिक युग ने टेक्नॉलजी द्वारा समुद्रीय पर्यावरण को भी परिवर्तित किया। मौसम व जलवायु की गति-विधियों को नियंत्रण करने में समुद्रों का विशेष योगदान

है। आज के लाभेच्छु मानव सागरीय संकट से उत्पन्न दुष्प्रभावों के बारे में चिंतित नहीं है। इससे संपूर्ण जीव-जाति का अस्तित्व आज खतरे में पड़ गया है। इसका संकेत करते हुए कवि 'समुद्र मंथन' में लिखते हैं -

"यह दुष्कर्म है मानव का
किया है विषैला समन्दर को मानव ने
लगे बरसने अंगारे आँखों से देवताओं के
होने लगी अम्बर से विष-वर्षा।"[११९]

मानव से बने हुए संकटों को सागर ने आज अपने छोटे-छोटे प्रकोपों से सजा दी है। सुनामी, ज्वालामुखी जैसे सागरीय प्रकोप आज भी देख सकते हैं। इन प्रकोपों का कारण प्राकृतिक एवं मानव जनित भी है। पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने में समुद्र की भूमिका महत्वपूर्ण है।

३.५८. त्रिजुगी कौशिक

आज कई नदियाँ मृत्यु की ओर जा रही हैं। त्रिजुगी कौशिक ने 'नदी' नामक कविता में नदी की महत्ता को प्रस्तुत किया है। कवि बताते हैं कि मिथकथाओं से निकलनेवाली नदी धरती की जीवन में बहती जाती है। नदियाँ नहीं है तो मानव-विकास भी असंभव होगा। कवि बताते हैं वर्तमान मानव को पवित्र, निर्मल एवं संवेदनशील बनाने की क्षमता नदी में है। मानव के दुःख में ही वह भाग लेती है। आज यह नदियाँ कल-कारखानों से निकलनेवाली विषाक्त कचरों से उत्पन्न प्रदूषण से त्रस्त हैं। नदी हमारे लिए प्राणदायिनी है, उसे प्रदूषित करना उनको मारने के समान है। अनेक सभ्यताओं एवं संस्कृति का विकास उसके किनारे से ही हुआ है। अनेक लोकगीतों एवं लोकनृत्यों में इसकी पूजा की है। नदी के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"पृथ्वी की तमाम नदियों की तरह
स्वच्छ निर्मल व प्राणदायिनी है
उसके किनारे सभ्यताएँ पनपती हैं
लोकसंस्कृति आकार लेती है।"[१२०]

३.५९. ज्ञानेंद्रपति

प्राकृतिक नियमों को अतिक्रमण करनेवाली विज्ञान एवं संचार का सर्वोच्च प्रगति के दुष्परिणाम अनेक प्राकृतिक प्रकोपों के रूप में प्रकट होता है। इसके कारण प्राकृतिक संसाधनों के अक्षय भंडार से नदी, जंगल, पेड आदि पर्यावरणीय तत्व कम होते जा रहे हैं। संपूर्ण विश्व के संकटग्रस्त पारिस्थितिकी को बचाने के लिए सभी लोगों का सामूहिक प्रयास वर्तमान काल में अत्यंत आवश्यक हो गया है। उनकी 'गंगास्नान', 'नदी और साबुन', 'रेत के द्वीप पसर आये हैं', 'एक शोकाकुल स्वागत', 'टेडी बियर में बचे हुए भालू', 'वसंत विध्वंस', 'झारखण्ड के पहाडों का अरण्यरोदन', 'धुएँ के पेड़ की तरह उगी हैं', 'संगम-तीरे जुडा माघ-मेला', 'पालिथिन', 'बीज व्यथा', 'युद्ध के विरुद्ध' आदि कविताओं में पारिस्थितिक चेतना देख सकते हैं।

'गंगा स्नान' नामक कविता में कवि बताते हैं कि हमारे आस्था के केंद्र गंगा नदी बूढी मैया हो गयी है। साथ ही उनकी सारी नदियाँ भी अपवित्र एवं विषाक्त हो गयी हैं। मानवीय, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्रियाकलाप हृत्पिंड की गंगोत्री सूखने का कारण बन जाती है। पुण्य खोजनेवाले लोगों को उस नदी में नहाने को डर लगती है, क्योंकि उस पवित्र नदी का जल उतना विषाक्त एवं मलिन हो गया है। यह विषाक्त जल प्राणियों के अस्तित्व के लिए हानिकारक है। कविता के अंत में गंगा विषाक्त होने का कारण भी है। शहर के गन्दे मल-मूत्र ले जानेवाली नालियों के जल गंगा के पवित्र जल में मिलाकर उसे दिन-प्रतिदिन प्रदूषित करती रहती है। आज उसके किनारे कूडे-कचरे का ढेर, सड़ान एवं बदबू के अलावा कुछ नहीं है।

'नदी और साबुन' नामक कविता में कवि बताते हैं कि आज की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के साबुन जैसे औद्योगिक एवं रासायनिक चीज़ों के तेजाबी पेशाब झेलकर गंगा की शुभ्र त्वचा बैंगनी हो गयी है। साबुन की टिकियाओं से युद्ध कर आज हमारी गंगा हार गयी है। इस समय कवि गंगा से पूछते हैं कि तू इतनी दुबली एवं मैली-कुचैली क्यों है ? इसका उत्तर भी कवि बताते हैं कि गंगा पहाड़ की बेटी है लेकिन आज पूँजीवाद की बेटी है साबुन की टिकिया। सौंदर्य वर्द्धक चीज़ साबुन में

निहित रासायनिक चीज़ गंगा के जलीय जीवों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व के लिए खतरा है। यह रासायनिक चीज़ गंगा जल को प्रदूषित करने के साथ ही उनकी अपनी पारिस्थितिक तंत्र को बिगाड़ते हैं। रासायनिक क्रियाकलापों से उत्पन्न संकट को प्रस्तुत करते हुए कवि ने गंगा की वर्तमान स्थिति के बारे में इस प्रकार लिखा है -

"और कल की उसकी अमरित-बूँद आज
चंगे को बीमार करनेवाली
और बीमार के लिए तो
सचमुच मोक्षदा साबित होनेवाली अकाल ही।"[१२१]

रसायन के दुर्दंत कणों एवं कीटाणुओं से गंगा का जी दिन-प्रतिदिन काँप रहा है। असंख्य दुर्लभ मछलियों एवं कछुओं का आवास स्थान भी है गंगा। गंगा जल में निहित ज़हरीले धातुएँ उनके शरीर के लिए अत्यधिक हानिप्रद हैं। आज के पूँजीवादी एवं नव-उपनिवेशवादी लोगों की दृष्टि बाज़ारोन्मुख हो गया है। उनको गंगा की गुणवत्ता के बारे में सोचने के लिए समय नहीं है।

कवि ज्ञानेंद्रपति कहते हैं कि पूँजीवादी एवं नव-उपनिवेशवादी संस्कृति ने नदी की जलीय तंत्र को मटियामेट कर दिया है। इस जलीय तंत्र में आये बदलाव विश्व की पूरे पारिस्थितिक तंत्र को बिगाड़ दिया है। आज गंगा नदी की पानी कम होकर वहाँ रेत के द्वीप पसर आये हैं। नदी के बीच-बीच में उभरनेवाले रेत के टीलों ने उसमें रहनेवाले जलीय जीवों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को कष्ट पैदा कर दिया है। जल-जीवों के गुज़रने के स्थान पर अब सिर्फ सन्नाटा मात्र बिछा है। वहाँ शंखों, सीपियों, घोंघों के कायकवच भी नहीं है। 'रेत के द्वीप पसर आये हैं' नामक कविता में कवि बताते हैं कि-

"अब नहीं मिलते रेत में
शंखों, सीपियों, घोंघों के कायकवच
वे जैविक कलाकृतियाँ / अद्‌भुत अभिराम।"[१२२]

रेत के जमाव से कलकल-छलछल करनेवाली पीली तितलियों, अलमस्त भौरों एवं आवारा फूल भी संकटग्रस्त हैं। जल की कमी से वे धीरे-धीरे

समाप्ति की ओर जा रहे हैं। मछलियाँ एवं कछुए की अनेक प्रजातियाँ हैं, जो सिर्फ गंगा नदी में मात्र ही देख सकते हैं। गंगा नदी में यदा-कदा ही देखनेवाले दुर्लभ जीव डॉल्फिनों की भव्य उछालें भी रुक रही हैं। गंगा के उर तक रेत ही रेत है। गंगा में फैलनेवाली रेत के द्वीप को देखकर बिल्डर्स, बिल्डिंग मैटिरियल के विक्रेता, रेत पर शिल्प उकारनेवाले कलाकार, शहर के सहृदय चैनल, अखबार, सांस्कृतिक संवाददाता आदि मुनाफे पर केंद्रित पूँजीवादी लोग खुश हैं। कवि कहते हैं कि इससे नदी का नियंत्रण भी विदेशी पूँजी के हाथों में होनेवाला है। भूमण्डलीकरण एवं नव-उपनिवेशीकरण से प्रभावित पूँजीवादी लोगों के क्रियाकलापों को देखकर गंगा भय से सिकुडी जा रही है। कवि के शब्दों में -

> “भूमण्डलीकरण की सुशोभन सौगात
> आबादी-वर्जित गंगबरार में सुखासीन
> गंगाशिकस्त पर गड़ाता आँख
> कि गंगा भय से भी सिकुडी जा रही है।”[१२३]

नव-उपनिवेशवादी पूँजीवादी शक्तियों ने गंगा नदी को शोषित कर उसे एक रेत का द्वीप बनाया है। कवि कहते हैं कि गंगा की छवि भरा हुआ पानी में है रेत में नहीं। पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में गंगा में पाये जानेवाले वनस्पति एवं जीवों की अहम भूमिका है। आज उस रेत के द्वीप में जीवों के स्थान पर बालू मात्र है। कवि ने धीरे-धीरे मृत्यु की ओर जानेवाली गंगा की वर्तमान त्रासद स्थिति को खुलकर रखा है। आज के आदमखोर हथियारों को पशु-पक्षियों के अस्तित्व के प्रति कोई परहेज नहीं है। मिटने का खतरा मँडरानेवाला प्रजातियों के बारे में कवि ‘एक शोकाकुल स्वागत’ में इस प्रकार लिखते हैं -

> “सच तो यह
> कि कल के व्याध भी आज एक विलुप्त होती हुई प्रजाति हैं
> आदिकवि के शाप से ग्रस्त।”[१२४]

कवि ‘एक शोकाकुल स्वागत’ कविता के अंत में इस प्रकार कहते हैं कि साइबेरियाई सारसों को संभालनेवाले आदिकवि का वंशज आज हथियारों को कोई शाप नहीं देता है, क्योंकि उनको पता है कि वधिकों की प्रतिष्ठा शाश्वत नहीं है।

दिन-प्रतिदिन विलुप्त हो रहे पशु-पक्षियों की रक्षा के प्रति जागरूकता पैदा करने में ज्ञानेंद्रपति की 'एक शोकाकुल स्वागत' नामक कविता सक्षम है।

आज उत्तरप्रदेश की नदियों में पाये जानेवाले निपोमेरिस कोकनोइटस नामधारी कछुओं की संख्या दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही हैं। यौनोत्तेजना पैदा करनेवाली दवाएँ, वियाग्रा-सरीखी पश्चिमी च्यवनप्राश बनाने हेतु कछुओं को चालीस से सौ डॉलर में बिकता है। इससे सख्त कचकडे के भीतर कोमल मांसवाला कछुआ अल्पायु बन जाते हैं। 'नजातदिहन्दा' नामक कविता में इसका संकेत मिलता है। 'गजदन्तधूमगज' नामक कविता में कवि ने हाथियों के शिकार एवं हाथी दांत व्यापार के बारे में बताया है।

कवि ने अपनी कविता 'टेडी बियर बचे हुए भालू' में वहाँ के काले एवं भूरे भालुओं के बेमौत मारे जाने की पीडा को व्यक्त किया है। वन एवं वन्य जीव-जंतुओं की विनाश से भी जंगल की पारिस्थितिक तंत्र पर दुष्प्रभाव पड़ा है। इसके असंतुलन से ज़िंदा रहना मुश्किल हो जायेगा। कवि कहते हैं कि ये भालू बच्चियों के लिए प्यारा-सा टेडी-बियर है। जिस प्रकार बाज़ारी दबाव ने भालुओं के अस्तित्व को खतरे में डाल दिया है, उसको भी कवि ने अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया है। बाज़ारी संस्कृति से प्रभावित लोगों से कवि पूछते हैं - "कौन मार रहा होगा उन्हें।"[१२५]

आनेवाली युवापीढी को ध्रुवीय प्रदेशों में रहित भालुओं के बारे में जानना असंभव-सा हो गया है। कवि कहते हैं कि यदि उनकी सुरक्षा का ध्यान नहीं दिया गया है तो जंगली एवं बर्फानी प्रदेशों से उनका अस्तित्व पूर्णतः मिट जायेगा। भविष्य के भालू दूकानों के शोकेसों में रहनेवाले टेडी बियर मात्र ही होगा। ज्ञानेंद्रपति के शब्दों में -

> "जंगली प्रदेशों से और बर्फानी प्रदेशों से अन्ततः मिट गये भालू
> टेडी बियर बनकर दूकानों के शोकेसों में बैठे रहेंगे अतीतातीत।"[१२६]

कवि ज्ञानेंद्रपति 'वसंत विध्वंस' के माध्यम से जलवायु परिवर्तन की बात बताते हैं। इस समय सूखे पेड़ों की शाखाओं में भी नव-पल्लव देख सकते हैं। कवि कहते हैं कि सबसे पहले वसंत की उद्घोषणा चिडियों ने की थी। आज जलवायु में निरंतर हो रहे परिवर्तनों के कारण पेड़, पशु-पक्षियों की प्रजातियों पर विलुप्ति का खतरा मँडरा रहा है। फिर कवि ने उडीसा के तूफान की त्रासदी को प्रस्तुत किया है। यह तूफान मवेशी और मनुष्य को मारकर उडीसा के अनेक गाँवों को उजाड़ दिया। इस आपदा की उत्पत्ति तापमान एवं जलवायु में परिवर्तन के कारण बननेवाले वायु के दबाव से होता है। कवि कहते हैं कि उसके आने से पहले कपासी बादलों की आकाशी पगडण्डी पहचानते हैं। मौसम विज्ञानियों के पूर्वानुमान से अधिक अचूक है हवा के भयावह संकेत।

'झारखण्ड के पहाडों का अरण्य रोदन' में कवि कहते हैं कि शोषक शक्तियाँ पर्वतों के पंख काटनेवाले वज्रधर इंद्र के वंशज है। झारखण्ड एवं छोटा नागपूर के कई पहाड इनके आक्रमणों से पीड़ित हैं। पर्वतों की अंधाधुंध कटाई देखकर कवि दुःखित है। मैग्मा धरती का मूल द्रव्य है। आग्नेय चट्टान धरती की प्राचीनतम रचना है। सोना, चाँदी के लिए आज के मानव दिन-प्रतिदिन इन चट्टानों का भी शोषण कर रहे हैं। कवि कहते हैं कि पर्वतकुल के आदि पुरुष है हिमालय। सात करोड वर्ष पूर्व हिमालय का स्थान टेथीस सागर में है। इसके बाद की भूगर्भीय हलचलों के फलस्वरूप आज के हिमालय के कोंपल का निर्माण किया। कहा जाता है कि सन् २०२५ तक हिमालय के सभी हिम-नद नष्ट हो जायेंगे। इसके साथ ही कवि ने विंध्याचल अरावली पर्वतमालाओं एवं पठारों की महत्ता बतायी है। कवि ज्ञानेंद्रपति 'झारखण्ड के पहाडों का अरण्य रोदन' में वर्तमान स्थिति बताते हैं -

> "कि जैसे वह छोटा नागपुर के छीजते जंगलों, मिटती वनस्पतियों,
> खँखुरते खनिजों की
> आँख हो
> कि क्या धरा है भू में
> इन भूधरों की छाँह के गुज़र जाने के बाद
> बस आतप और बिपत।"[१२७]

‘धुएँ के पेड़ की तरह उगी है’ नामक कविता में कवि बताते हैं कि आजकल चिमनियाँ धुआँ उगालकर पेडों के हरित पट्टी के पीछे पेड़ बनकर खड़ा है। हरे-भरे पेड़ों के बीच के चिमनी को देखकर गंगा के तीर पर बैठनेवले कवि को पता चला कि वहाँ एक धूमध्वज कारखाना खुला है। कवि बताते हैं कि उनकी ज़हरीला धुआँ में चौमुखी विनाश कामना निहित है। इस ज़हरीले धुआँ का घातक प्रभाव मनुष्य के श्वसन तंत्र पर पड़ता है। इससे भारतीय शिशुओं के भविष्य तक खतरे में पड़ गया है। पूँजीवाद से उत्पन्न पर्यावरण विनाश के बारे में सोचना ज्ञानेंद्रपति जैसे संवेदनशील कवि अपना दायित्व मानते हैं।

‘संगम-तीरे जुड़ा माघ-मेला’ और ‘पॉलिथिन’ नामक कविताओं में कवि ने प्लास्टिक की विभीषिकाओं पर प्रकाश डाला है। कवि बताते हैं कि यह पॉलिथिन मानव की अमानवीय संतान है। आज बाज़ार भी इस पॉलिथिन की मुट्ठी में बंद है। इस अपशिष्ट पदार्थ धरती के जीवों एवं बीजों पर हानिकारक प्रभाव डालकर संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को गड़बड़ाते हैं। कवि की राय में यह चीरजीवा मरजीवा पॉलिथिन हमारे समय की सभ्यता का दूसरा नाम है। यह पूँजीवाद की त्वचा भी है। भौतिक सुखों की लालसा में लाभेच्छु मानव जिसके घातक परिणामों के बारे में कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। आज गंगा के चारों ओर पॉलिथिन का ढेर है। कवि बताते हैं कि आजकल देवार्पित फूल-मालाओं को पॉलिथिन की थैलियों में भरकर गंगा में फेंक जाना एक प्रचलन बन गया है। इस प्रकार फेंकनेवाले पॉलिथिन गंगा में स्थित असंख्य जल-जीवों की साँस को रुँधते हैं। यह पॉलिथिन नदी प्रवाह को भी रोक सकते हैं।

‘पॉलिथिन’ कविता में घर के चारों ओर पॉलिथिन को देखकर कवि अपनी पत्नी से लड़ रहे हैं। कविता के अंत में बताते हैं कि जीवन युद्ध में प्राण रक्षक के रूप में अवतरित पॉलिथिन आज प्राण-भक्षक बनकर पृथ्वी के वक्ष के प्राणों पर पसरा है। जैसे -

“जीवन-युद्ध में प्राणरक्षक
बनकर ही तो अवतरित हुआ था मानव-पक्ष में

यह जो आज प्राणभक्षक पॉलिथिन
पृथ्वी के वक्ष पर कि प्राणों पर पसरा है।"[१२८]

पर्यावरण पर होनेवाले आपदाओं का नियंत्रण वर्तमान समाज की आवश्यकता है। कवि अपनी कविता 'बीज व्यथा' में खेतों में संकर-बीज के प्रयोग से उत्पन्न दुष्प्रभावों के बारे में बताते हैं। बयोटेक्नॉलजी के माध्यम से आज के मानव प्रयोगशाला में नये-नये संकर-बीजों का निर्माण कर रहे हैं। भिन्न-भिन्न जीनों के माध्यम से वैज्ञानिकों ने चावल, गेहूँ की फसलों की नयी-नयी प्रजातियाँ विकसित कर ली हैं।

अमेरिकन बहुराष्ट्रीय कंपनी मोणसान्टो ने बी.टी जीन से बोलगार्ड विकसित कर लिया। ये बीज समस्त पारिस्थितिक तंत्र को बिगाड़ने के साथ-साथ मिट्टी को भी प्रदूषित कर देता है। इसके साथ कवि रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग से उत्पन्न विभीषिकाओं का भी संकेत दिया है। खाद्यान्नों की बढ़ती माँग की पूर्ति के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग खेतों में दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। एन.पी.के, पेस्टिसाइड्स, डी.डी.टी के प्रयोग से पेय जल तथा खाद्य पदार्थों में अलग-अलग तरह का जैविक विष पैदा होता है। ये विष सभी जीवों के लिए अत्यंत घातक हैं। कवि बताते हैं -

"रासायनिक खादों और कीटनाशकों के ज़हरीले संयन्त्रों की
आयातित तकनीक आती है पीछे-पीछे
तुम्हारा घर उजाड़कर अपना घर भरनेवाली आयातित तकनीक
यहाँ के अन्न जल में जहर भरनेवाली
ज़हर भरनेवाली शिशुमुख से लगी माँ की छाती के
अमृतोपम दूध तक में
कहर ढानेवाली बगैर कुहराम।"[१२९]

डी.डी.टी, पेस्टिसाइडस एवं अन्य कीटनाशकों का निपटान आज असंभव हो गया है। 'बीजव्यथा' के अंत में कवि कहते हैं -

"क्रीम-पाउडर की तरह देह में रासायनिक खाद-कीटनाशक मले
बड़े-बड़े बाँधों के डुबाँव जल के बाथ-टब में नहाते लहलहे।"[१३०]

कवि ने 'युद्ध के विरुद्ध' नामक कविता में युद्ध से उत्पन्न पारिस्थितिक विनाश का उल्लेख किया है। कवि बताते हैं कि युद्ध ने हर प्राणी को शव एवं हर इमारत को खँडहर बनाया है। युद्धक विमानों की गिद्ध कतारें, बमों-मिसाइलों से आकाश एवं पृथ्वी रौंद रही है। उनकी बारूदी धुआँ वायुमण्डल को भी विषाक्त बनाता है। वर्षा एसिड वर्षा हो रही है। धरती पर बढ़ते तापमान के विषय पर कवि बताते हैं-

"पिघलते हों तो पिघल जाएँ भू-ध्रुवों के हिमाच्छादन
भभ्भड़ छेद होते हों तो हो जाएँ अंतरीक्ष की ओज़ोन-छतरी में
गरमाए धरती उफने समुद्र भूने सूर्य
निर्धन क्या चाहे निर्जन हो जाए शेष विश्व।"[१३१]

इसके अतिरिक्त 'पाँच चिडियों ने', 'मिट गये मैदानोंवाला गाँव', 'एक कछुवा शिशु', 'अधरात घास गन्ध' आदि अन्य अनेक कविताओं में पर्यावरणीय चेतना देख सकते हैं। विकास के नाम पर होनेवाले वैज्ञानिक एवं औद्योगिक क्रांति का उपादान है प्राकृतिक प्रकोप। जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, नदी-संकट, ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन आदि ज्वलंत पारिस्थितिक समस्याओं पर प्रतिदिन राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक चर्चाएँ हो रही हैं। इन समस्याओं से प्रभावित पारिस्थितिक तंत्र का स्वरूप भविष्य में कैसा होगा ? इसके प्रति अवबोध कराने का प्रयास कवि ज्ञानेंद्रपति कर रहे हैं।

३.६०. ज्ञानेंद्रसाज

कवि ज्ञानेंद्रसाज अपनी कविता 'पानी' में कहते हैं कि पानी के बिना पशु-पक्षी एवं मानव की पहचान कल्पनातीत है। आज पानी आर्थिक विकास के लिए भी महत्वपूर्ण संसाधन हो गया है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ पानी की माँग भी प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। कवि कहते हैं कि खेती के विकास के लिए भी आवश्यक संसाधन है पानी। भारत एक कृषि प्रधान देश है। पानी के अभाव में दिन-प्रतिदिन

खेती सूख जाती है। खेती सूख जाने से दिन-प्रतिदिन केरल और कर्नाटक के अनेक किसान आत्महत्या कर रहे हैं। कवि ने अपनी कविता में वर्तमान में होनेवाले कृषक आत्महत्या का भी उल्लेख किया है। पानी के बिना मानव को एक पल रहना असंभव है। इसके बिना भूमि पर अन्न नहीं उगेगा। और ऐसा ही दिन आये तो मानव सन्न होगा। भविष्य में खाद्यान्न की माँग चौगुनी हो जायेगी। सूखी धरती कहते हैं कि सभी जलस्रोत सूख रहा है तो भविष्य के बारे में सोचना असंभव-सा हो गया है। जल जीवन एवं अमृतकोष भी है। गर्मी के समय में एक बूँद जल तन मन को शीतल करता है।

पेयजल आपूर्ति आज विश्व के लिए एक बड़ी चुनौती बन चुकी है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर है पानी का नियंत्रण। विश्व के अस्सी प्रतिशत लोग स्वच्छ पानी से वंचित है। कवि अपनी 'पानी' नामक कविता में बताते हैं -

"पानी का लेबिल सखे
दिन-दिन नीचे जात
पानी सारा खींचकर
हम खुद मौत बुलात।"[१३२]

भारत के जल संकट का प्रमुख कारण है - जनसंख्या वृद्धि, जलवायु परिवर्तन एवं भूगर्भीय जलस्रोतों का प्रदूषण। आज मानव भूगर्भ से सारा पानी निकालकर स्वयं मौत को बुलाते हैं। कवि ज्ञानेंद्रसाज ने अपनी कविता में पानी की महत्ता को प्रस्तुत कर उसके प्रति सजगता पैदा करने का प्रयास किया है।

३.६१. निष्कर्ष

पारिस्थितिक चेतना समकालीन कवियों के चिंतन का एक प्रमुख विषय रहा है। औद्योगिकीकरण, नगरीकरण जैसे मानवीय क्रियाकलापों से असंतुलित पारिस्थितिकी को किसी न किसी रूप में संतुलित बनाये रखना वर्तमान युग की महत्ती आवश्यकता है। आज संपूर्ण विश्व जलवायु परिवर्तन, ओज़ोन पर्त क्षरण, जंगल विनाश, पेड़ विनाश, नदी-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण आदि अनेक पारिस्थितिक संकटों के

चंगुल में फँस गया है। अरुण कमल की ‘इस श्मशान पर’, राजेश जोशी की ‘विलुप्त प्रजातियाँ’, नीलाभ की ‘नदी’, बलदेव वंशी की ‘तेजाबी वर्षा’, मदन कश्यप की ‘पृथ्वी दिवस, १९९१’, लीलाधर मंडलोई की ‘उनका न होना’, एकांत श्रीवास्तव की ‘वसंत में’, कैलाश वाजपेयी की ‘जंगल की आवाज़’ तथा अन्य अनेक कविताएँ पारिस्थितिक चिंतन से ओतप्रोत हैं। सन् १९९० के बाद की कविताओं में प्रस्तुत पारिस्थितिक चिंतन से हमें मालूम होगा कि मानव व पर्यावरण के बीच में उत्पन्न हुए पारिस्थितिक असंतुलन को दूर कर पुनः एक आत्मपरक संबंध स्थापित करना समय की माँग है।

अरुण कमल, राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रपति, मदन कश्यप आदि कई कवि अपनी कविताओं में अपने-अपने देश के पारिस्थितिक बदलाव को मात्र ही नहीं संपूर्ण विश्व के पारिस्थितिक बदलाव की बात करते हैं। समकालीन कवि नदी, पेड़, जंगल, ज़मीन जैसे सभी प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर चिंतित हैं। इन सभी पर्यावरणीय तत्वों के अस्तित्व के बिना मानव का अस्तित्व लगभग असंभव है। वर्तमान मानव अपनी स्वार्थता की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों को अंधाधुंध दोहन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त पूँजीवादी, नव-उपनिवेशवादी शक्तियों की दृष्टि भी मुनाफे पर केंद्रित है। जंगल, पेड़, नदी जैसे प्राकृतिक संसाधनों को बेचने से पारिस्थितिक तंत्र की भविष्य की स्थिति किस प्रकार होगी ? इसका संकेत भी सन् १९९० के बाद की कविताओं में देखने को मिलता है। जीवों के अस्तित्व का मूल आधार पर्यावरण है। इसलिए हिंदी कवि अपनी कविताओं के माध्यम से स्वच्छ पारिस्थितिकी के लिए प्रकृति की ओर पुनः लौटने की प्रेरणा हमें देते हैं।

संदर्भ-सूची

१. अनिता निहालनी - इंद्रधनुष, पृ.२२

२. वही, पृ.६

३. वही, पृ.२९

४. अरुण कमल - पुतली में संसार, पृ.७३

५. अरुण देव - क्या तो समय, पृ.६९

६. वही, पृ.५९

७. अशोक वाजपेयी - कुछ रफू कुछ थिग़डे, पृ.५७

८. इन्दु जैन - कुछ न कुछ टकराएगा ज़रूर, पृ.८३

९. वही, पृ.८१

१०. वही, पृ.७५

११. वही, पृ.७५

१२. इमरोज - गुन रहा है गाँव, पृ.४४

१३. कथन - अक्तूबर-दिसंबर, २०१०, पृ.१९

१४. ऋतुराज - आशा नाम नदी, पृ.७७

१५. वही, पृ.५८-५९

१६. वही, पृ.७५

१७. एकांत श्रीवास्तव - बीज से फूल तक, पृ.४४

१८. वही, पृ.४४

१९. वही, पृ.९५

२०. वही, पृ.९२

२१. आलोचना - जुलाई-सितंबर २००७, पृ.४७

२२. वागर्थ - अगस्त, २०११, पृ.६३

२३. समकालीन भारतीय साहित्य - सितंबर-अक्तूबर, २००८, पृ.११३

२४. साहित्य अमृत - सितंबर २००८, पृ.४८

२५. कुमार अम्बुज - क्रूरता, पृ.६७

२६. वही, पृ.१०२

२७. वही, पृ.७३

२८. केदारनाथ सिंह - तालस्ताय और साइकिल, पृ.११

२९. वही, पृ.११

३०. वही, पृ.३८

३१. वही, बाघ, पृ.५१

३२. कैलाश वाजपेयी - भविष्य घट रहा है, पृ.२८

३३. वही, पृ.६९

३४. वही, पृ.९३

३५. गणेश गायकवाड़ - आज़ादी रिटायर हो रही है, पृ.७१

३६. गोविंद मिश्र - ओ प्रकृति माँ !, पृ.९८

३७. वही, पृ.११२

३८. वही, पृ.९३

३९. गंगाप्रसाद विमल - सन्नाटे से मुठभेड, पृ.५०

४०. वही, इतना कुछ, पृ.५६

४१. चंद्रकांत देवताले - पत्थर की बैंच, पृ.६०

४२. इन्द्रप्रस्थ भारती - जनवरी-मार्च, २०११, पृ.१५१

४३. वही, पृ.९५

४४. वही, पृ.९५

४५. धर्मवीर भारती - छिलकों में छिपी सचाई, पृ.७५

४६. साक्षात्कार - अगस्त २००१, पृ.१२

४७. नवल शुक्ल - दसों दिशाओं में, पृ.८३

४८. निर्मला पुतुल - नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृ.३२

४९. वही, अपने घर की तलाश में, पृ.४३

५०. नीलाभ - शब्दों से नाता अटूट है, पृ.११०-१११

५१. समकालीन भारतीय साहित्य - नवंबर-दिसंबर, २००९, पृ.१६३

५२. वही, पृ.१६३

५३. वही, पृ.१६६

५४. आलोचना - अक्तूबर-दिसंबर २००३, पृ.१३

५५. बद्रीनारायण - खुदाई में हिंसा, पृ.२२-२३

५६. वही, पृ.१२६

५७. बलदेव वंशी - धरती हाँफ रही है, पृ.१८
५८. वही, पृ.३०
५९. साहित्य अमृत - अगस्त २००६, पृ.४३
६०. मधुमती - सितंबर २०१०, पृ.६४
६१. बोधिसत्व - हम जो नदियों का संगम है, पृ.२३
६२. वही, सिर्फ कवि नहीं, पृ.१९
६३. मदन कश्यप - कवि ने कहा, पृ.१०४
६४. वही, कुरूज, पृ.५९
६५. वही, पृ.८२
६६. मंगलेश डबराल - आवाज़ भी एक जगह है, पृ.७३
६७. प्रगतिशील वसुधा- जुलाई-सितंबर २००९, पृ.१५६
६८. मधुमती - अक्तूबर २०१०, पृ.३९
६९. वही, पृ.४०
७०. समकालीन भारतीय साहित्य - सितंबर-अक्तूबर, पृ.९४
७१. साक्षात्कार - फरवरी २००६, पृ.५९
७२. वर्तमान साहित्य - जनवरी २०११, पृ.७
७३. वही, पृ.७
७४. समकालीन भारतीय साहित्य - मई-जून २००९, पृ.३९
७५. वही, पृ.४०
७६. राजेश जोशी - चाँद की वर्तनी, पृ.२६
७७. वही, पृ.२८
७८. वही, पृ.२४
७९. वही, पृ.२१
८०. वही, पृ.१४
८१. सं.रामदरश मिश्र, स्मिता मिश्र - रामदरश मिश्र रचनावली खण्ड - २, पृ.१६३
८२. वही, पृ.१२५
८३. वही, पृ.२३७
८४. वही, पृ.२४१-२४२
८५. वही, पृ.१५९

८६. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाश में चाँद, पृ.४८
८७. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा, पृ.२९
८८. समकालीन भारतीय साहित्य - जुलाई-अगस्त २०१०, पृ.१२२
८९. वही, पृ.१२१
९०. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा, पृ.८७
९१. नया ज्ञानोदय - मार्च २००४, पृ.२२
९२. वही, पृ.२३
९३. समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर २००८, पृ.३७
९४. वही, पृ.३७
९५. वीरेन डंगवाल - दुश्चक्र में स्रष्टा, पृ.६७
९६. वही, पृ.२४
९७. शशि सहगल - मौन से संवाद, पृ.४४
९८. डॉ.शैल रस्तोगी - सुनो ओ, नन्हे दिये !, पृ.२९
९९. शैल सक्सेना - विकल्प, पृ.६७
१००. वही, पृ.६८-६९
१०१. वही, पृ.७२
१०२. श्रीकांत जोशी - सत्य वहाँ सुरक्षित है, पृ.१४४
१०३. वही, पृ.१३१
१०४. वही, पृ.४५
१०५. वही, पृ.१२१
१०६. वही, पृ.५६
१०७. समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर २००८, पृ.२५
१०८. वही, सितंबर-अक्तूबर २००५, पृ.१७१
१०९. वही, नवंबर-दिसंबर २००५, पृ.११०
११०. नया ज्ञानोदय - मार्च २००४, पृ.२४
१११. समकालीन भारतीय साहित्य - मई-जून २००४, पृ.१२१
११२. डॉ.सूरज प्रसाद पचौरी - मोहभंग, पृ.८७
११३. संजय कुन्दन - चुप्पी का शोर, पृ.५२
११४. हरीशचंद्र पाण्डे - भूमिकाएँ खत्म नहीं होती, पृ.६२

११५. वही, पृ.५१

११६. वही, पृ.११६

११७. वही, पृ.१६

११८. मधुमती - जनवरी २००६, पृ.१९

११९. वही, पृ.१९

१२०. नया ज्ञानोदय - जनवरी २००६, पृ.८७

१२१. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट, पृ.२२

१२२. प्रगतिशील वसुधा - जुलाई-सितंबर २००९, पृ.१६२

१२३. वही, पृ.१६३

१२४. ज्ञानेंद्रपति - कवि ने कहा, पृ.११४

१२५. वही, पृ.१०९

१२६. वही, पृ.११०

१२७. वही, पृ.४८

१२८. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट, पृ.९७

१२९. वही, कवि ने कहा, पृ.११६

१३०. वही, पृ.११७

१३१. वही, संशयात्मा, पृ.१०४

१३२. इस्पात भाषा भारती दिसंबर २००९, जनवरी २०१०, पृ.११

अध्याय ४

पारिस्थितिक समस्याएँ : तुलनात्मक दृष्टि से

विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने मानव को एक ओर पृथ्वी से लेकर चंद्रमा तक विकास के विविध आयाम खोल दिये हैं तो दूसरी ओर समूचे पारिस्थितिकी में प्रदूषण जैसी गंभीर समस्या पैदा कर दी है। इतिहास पर दृष्टि डालेंगे तो पता चलेगा कि प्रारंभकालीन प्रकृति पूरी तरह संतुलित थी, विकास की अंधी दौड़ ने नैसर्गिक प्रकृति को पूरी तरह विषाक्त बनाया है, जिसका प्रमुख कारण औद्योगिक क्रांति, प्रौद्योगिकी का विकास एवं द्रुतगति से बढ़ रही जनसंख्या है। वर्तमान मानव अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन कर रहे हैं। वैश्विक तापन, जलवायु-परिवर्तन, ओज़ोन क्षरण, वनोन्मूलन आदि अनेक संकट मानवीय गतिविधियों से उत्पन्न प्राकृतिक असंतुलन की देन है। दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे प्रदूषण ने पर्यावरण के हरे-भरे स्वरूप को उलटकर काला बना दिया है। जिसके कारण आनेवाले वर्षों में मानव जीवन को अतिभयंकर खतरों का सामना करना होगा। साथ ही जैवमण्डल का संतुलित अस्तित्व भी असंभव होगा। संपूर्ण सृष्टि के विकास के लिए आकाश, वायु, मिट्टी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्वों का संरक्षण अनिवार्य है। इन तत्वों के संरक्षण के लिए विश्व स्तर पर काफी बहस चल रही हैं, फिर भी समस्याओं के निवारण करने के लिए लोग असमर्थ हो रहे हैं। विश्व स्तर पर घटित होनेवाली विभिन्न पारिस्थितिक समस्याओं की अभिव्यक्ति समकालीन कविता में मिलती है। यहाँ सन् १९९० के बाद की कविताओं के संदर्भ में पारिस्थितिक समस्याओं को विभिन्न कविताओं के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

४.१. जलस्रोतों का प्रदूषण

प्राचीनकाल के लोग कहते हैं कि जल असमाप्य प्राकृतिक संसाधन है। लेकिन आज के युग में नदी, सागर, कुआँ, झील और तालाब जैसे सभी जलस्रोत मृत-प्राय हो रहे हैं। इससे होनेवाला खतरा अतिभयानक है। आर्थिक विकास की दौड़ में मानव जलस्रोतों के संकट को नज़र अंदाज़ कर रहे हैं। वास्तव में कहा जाये तो जल-प्रदूषण से उत्पन्न समस्याएँ मानव की देन मात्र है। नदी, सागर, झील जैसे जलस्रोतों के साथ आज भूगर्भीय जल भी प्रदूषण के चंगुल में फँस गये हैं। फैक्टरियों के विषाक्त कचरा एवं उससे निकला गंदा जल नदी, झील जैसे जलस्रोतों में बह देना, नदियों के किनारे नहाना, मल-मूत्र त्याग करना आदि सब प्रदूषण के कारक बनते जा

रहे हैं। जलस्रोतों में होनेवाले प्रदूषण का ८० प्रतिशत औद्योगिक, रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थ एवं गैस रिसाव से उत्पन्न प्रदूषण की देन है। विश्व की सभी महत्वपूर्ण सभ्यताएँ नदी जैसे जलस्रोतों के किनारे पर से ही विकसित हुई है। भारत जैसे विकासशील देशों के औद्योगिक क्षेत्रों में पानी की माँग दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। पानी से होनेवाले क्रियाकलापों की पूर्ति के लिए जलस्रोतों का संरक्षण करना अनिवार्य है। वीरेन डंगवाल, त्रिजुगी कौशिक, विनोदबिहारी लाल, नीलाभ, अनिता निहालनी, रमेश कुन्तल मेघ, अरुण देव, संजय कुन्दन, कान्ता शर्मा, हरीश गोयल, इमरोज, ज्ञानेंद्रपति, कैलाश वाजपेयी, प्रेमशंकर शुक्ल, निर्मला पुतुल और सदानंद साही जैसे अन्य अनेक समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में जलस्रोतों के प्रदूषण से होनेवाली विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है।

विनोदबिहारी लाल और अरुण देव जैसे कवि नदी के निजीकरण या बाज़ारीकरण के प्रति अपनी कविताओं में विरोध प्रकट करते हैं। सब बिकनेवाले इस युग में नदी भी बाज़ार की वस्तु बन गयी है। अरुण देव बताते हैं कि वर्तमान समय में औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण के कारण नदियों को बहाने के लिए मार्ग नहीं है। कोई भी जीवित नदी मिले तो उसका अधिकार अन्य किसी राष्ट्रों पर है। अपनी नदी कहने के लिए भारत में कौन रहेगी। नदी के निजीकरण का संकेत करते हुए विनोद बिहारी लाल ने 'प्रगति : एक सांस्कृतिक उछाल' में इस प्रकार लिखा है -

> "नदी गोल्ड माइन है
> पब्लिक को पानी मिलेगा सब्सिडी के साथ।"[१]

कहा जाता है कि भारत की पुण्य नदी गंगा-यमुना भी मौत के कगार पर है। वैज्ञानिकों की राय में यमुना नदी जैविक रूप से मर-खप चुकी है। वर्तमान में दिल्ली से आगरा तक यमुना का जल पीने योग्य नहीं रह गया है। क्योंकि इसके जल में विषाक्त कॉलीफॉर्म बैक्टीरिया पाये जाते हैं। रमेश कुन्तल मेघ और कैलाश वाजपेयी जैसे कवियों समान रूप से यमुना नदी की मृत्यु के प्रति संवेदना प्रकट करते हैं। मृत्यु की ओर चलनेवाले यमुना से कवि रमेश कुन्तल मेघ 'प्रेम की नदी है यमुना !' में पूछते हैं कि –

"प्रदूषण से काली अब ज़हर घुली-जमना
कहाँ से आती कहाँ को जातीं तुम यमुना ?"[२]

कैलाश वाजपेयी ने अपनी कविता में यमुना नदी को प्रदूषण से मुक्त करने का आग्रह किया है। राजस्थानी नगरों के लिए सरस्वती नदी एक वरदान है। वर्तमान में अरावली पहाडियों के विनाश के साथ-साथ सरस्वती भी विलुप्त हो गयी है। गंगा-यमुना-सरस्वती में सबसे पहले सरस्वती लुप्त हुई थी। इसका संकेत केवल नवल शुक्ल की कविता में उपलब्ध है। फिर भी यमुना नदी की मृत्यु की सूचना करते समय रमेश कुन्तल मेघ ने सरस्वती नदी की विलुप्ति का संकेत दिया है। पूर्ण रूप से सरस्वती नदी पर केंद्रित कविता नीलाभ की है। अनिता निहालनी और संजय कुन्दन जैसे कवियों ने समान रूप से नदी की वर्तमान गाथा को प्रस्तुत किया है। इन दोनों कवियों में साम्य के साथ-साथ वैषम्य भी देख सकते हैं।

वाहित मल-जल, नगरों के घरेलू अपशिष्ट विभिन्न नालियों के माध्यम से नदियों में मिल जाकर नदी को प्रदूषित करते हैं। घरेलू अपशिष्टों से होनेवाले प्रदूषण का संकेत वीरेन डंगवाल की कविता में मिलता है। अन्य कवियों में यह संकेत उतना उपलब्ध नहीं है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों से निकलनेवाले रासायनिक अपशिष्ट पदार्थों से उत्पन्न प्रदूषण का संकेत हरीश गोयल और ज्ञानेंद्रपति की कविताओं में मिलता है। ज्ञानेंद्रपति की कविता पूरी तरह गंगा पर केंद्रित है। नदी के पास आनेवाली बहुराष्ट्रीय कंपनी के निर्माण को भी कवि अपनी कविता के माध्यम से विरोध प्रकट करते हैं। हरीश गोयल ने अपनी कविता 'नदी की व्यथा' में नदी का नाम नहीं दिया है। इसलिए लगता है कि उनकी कविता विश्व की सभी नदियों के लिए लागू है। औद्योगिक रासायनिक अपशिष्ट पदार्थ नदी पर डालने से नदी का अपना पारितंत्र भी नष्ट हो जाता है। इसका कारक मानव है-

"वह तो निकली थी, पर्वत की गोद से
स्वच्छ निर्मल जल, मानव को पिलाने
पर बहाये नदी में, उसी मानव ने / व्यर्थ ज़हरीली पदार्थ।"[३]

वर्तमान के नदियों में प्रदूषण का बहुत बडा कारण पॉलिथिन या प्लास्टिक कचरा है। नदी प्लास्टिक का साम्राज्य बन गयी है। इसके अत्यधिक उपयोग ने नदियों में भी कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। यह पानी में न गलती है न सड़ती है। इससे नदियों का स्थानीय पर्यावरण बुरी तरह प्रदूषित हो जाता है। इसके अपशिष्टों ने दुर्लभ जलीय जीवों एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर खडा कर दिया है। पॉलिथिन का ढेर नदियों के बहाव को भी रोक रहा है। आज गंगा-यमुना नदी में भी प्लास्टिक जनित प्रदूषण देखने को मिलता है। ज्ञानेंद्रपति ने 'पॉलिथिन' नामक कविता में गंगा में हो रहे प्लास्टिक जनित प्रदूषण को प्रस्तुत किया है -

"करिखाई है गंगा
विषपायी है गंगा
दुखियारी माई है गंगा
उस निर्भर पालिथिन के पड़ते ही
भारी हो जाता है उसका जी।"[४]

नदियों में होनेवाले प्लास्टिक प्रदूषण का संकेत अन्य कविताओं में कम है। कवि ने यहाँ गंगा के माध्यम से समूचे नदियों में प्लास्टिक के ढेर के कारण उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न समुद्री-प्रदूषण का बुरा प्रभाव मानव, जीव-जंतुओं, शैवालों-वनस्पतियों पर भी पडेगा। इससे होनेवाले छोटा-सा खतरे का संकेत हरीश गोयल की 'समुद्र मंथन' नामक कविता में उपलब्ध है। प्रेमशंकर शुक्ल, सदानंद साही और राजेश जोशी जैसे कवियों ने यथाक्रम झील, कुएँ और तालाब की महत्ता को प्रतिपादित कर उसकी विलुप्ति की सूचना देते हैं।

सभी कवियों ने जलस्रोतों में होनेवाले प्रदूषण का संकेत कर उसके अस्तित्व की संकटग्रस्तता को प्रतिपादित किया है। जल प्रदूषण की समस्या को प्रस्तुत करनेवाले कवियों के बीच साम्य और वैषम्य भी देख सकते हैं। क्योंकि उनका परिवेश अलग-अलग है। एक कवि गंगा की बात बताते समय दूसरे कवि की कविता में यमुना की सूचना मिलती है। कवियों की दृष्टि अधिकांशतः अपने-अपने प्रदेशों के

जलस्रोतों के संकट पर केंद्रित है। फिर भी वे अपनी-अपनी कविताओं के माध्यम से जलस्रोतों के संरक्षण की प्रेरणा हमें देते हैं।

४.२. पानी का संकट

पृथ्वी की तीन चौथाई भाग पानी से आच्छादित है। लेकिन आश्चर्य की बात है कि यह सारा पानी विश्व के सभी आदमियों की ज़रूरत को पूरा करने के लिए नकाफी है। पानी की बढ़ती मात्रा के उपयोग के कारण उत्पन्न जल संकट से भविष्य का तस्वीर बडा भयावह है। इससे पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और मानव नष्ट हो जायेंगे। कहा जाता है कि दूषित पेय जल पीने से प्रतिवर्ष २२ लाख लोगों की मृत्यु हो रही है। वर्तमान में जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन के कारण हमारे पीने की पानी का स्रोत या भंडार धीरे-धीरे कम होती जा रही है। साथ ही यह कमी जल के भीतर समायी हुई सृष्टि के अंत की सूचना देती है। पानी के नाम पर होनेवाले संकट की अभिव्यक्ति केदारनाथ सिंह, एकांत श्रीवास्तव, अशोक वाजपेयी, लीलाधर मंडलोई, राज्य वर्द्धऩ, हरीशचंद्र पाण्डे, विजेंद्र, अरुण कमल, प्रेमशंकर शुक्ल, ज्ञानेंद्र साज और राजेश जोशी जैसे अन्य अनेक समकालीन कवियों की कविताओं में मिलती है।

आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, जैविक विकास की दृष्टि से प्रकृति प्रदत्त अनमोल उपहार है जल। आदिम समुदायों ने पानी को केवल जीने के लिए मात्र ही उपयोग किया था। वर्तमान में देश की अर्थ व्यवस्था पानी पर बनी है। इसलिए प्रकृति प्रदत्त उपहार पानी वर्तमान बाज़ारों में बिकने का संसाधन बन गया है। भारत जैसे देश की कवियों के लिए यह दुःखद बात है। इसलिए केदारनाथ सिंह, एकांत श्रीवास्तव, राज्यवर्द्धन, राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रसाज और अरुण कमल जैसे अनेक कवियों ने पानी के बाज़ारीकरण का विरोध करते हैं। इन कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में किसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को पानी का अधिकार बेचनेवाले लोगों पर व्यंग्य किया है। जलस्रोतों में स्वच्छ और निर्मल होकर बहनेवाले पानी की वर्तमान स्थिति का संकेत करते हुए कवि एकांत श्रीवास्तव ने 'ठण्डे पानी की मशीन' नामक कविता में इस प्रकार लिखा है -

"कि जो आकाश से बरसता है बेमोल
जो नदियों में बहता है खुले आम
तो अब यह पानी भी बिकाऊ हो गया
बाज़ार में।"[५]

इस प्रकार सभी कवियों ने अपनी कविताओं में बाज़ारीकरण से उत्पन्न संवेदना को प्रस्तुत किया है। पानी के बाज़ारीकरण की इस प्रवृत्ति का लाभ किसी बहुराष्ट्रीय सेठ को मिलता है। इससे भारत में रहनेवाले लोग वंचित हो जायेगा। इसके प्रति व्यंग्य भी समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्ति बन गयी है। एकांत श्रीवास्तव के समान प्रेमशंकर शुक्ल भी पानी की बाज़ारीकरण की प्रवृत्ति का विरोध करते हुए 'पानी का मतलब' नामक कविता में इस प्रकार कहते हैं -

"प्यास की वर्तनी के
बाज़ार देने की प्रवृत्ति के
खिलाफ होना है।"[६]

वर्तमान मानव को प्रकृति प्रदत्त अमूल्य धरोहर पानी को शुद्ध और स्वच्छ रूप से पीना मुश्किल हो गया है। क्योंकि प्राकृतिक जलस्रोतों में पानी नहीं है। जलस्रोतों से थोडा पानी मिला तो वह भी प्रदूषित या विषाक्त पानी है। विश्व की जनसंख्या बढ़ने के साथ-साथ पानी की माँग भी बराबर बढ़ती जा रही है। प्रगति के नाम पर होनेवाले इन लोगों के कार्यकलापों में बढ़ती हुई विविधता वर्तमान वैश्विक दुनिया में गंभीर जल संकट पैदा कर दिया है। इस संकट का एक ओर कारण बोतल बंद पानी का निर्माण एवं बिकी है। बोतल बंद पानी या मिनरल वाटर की व्यावसायिकता पर व्यंग्य करते हुए इससे होनेवाली विभीषिका के बारे में लीलाधर मंडलोई 'कि जान पाते रहस्य हम' में इस प्रकार कहते हैं -

"दौड़ता हूँ बोतलबंद पानी की तरफ़ और
किसी न किसी की मृत्यु का कारण बन जाता हूँ।"[७]

वास्तव में कहा जाये तो मिनरल वाटर के नाम पर बेचनेवाला पानी कभी गंदगी युक्त पानी है। समकालीन कवियों के लिए मिनरल वाटर पीना विष पीने

के समान है। इसको राजेश जोशी बहुत ही संवेदनात्मक ढंग से अपनी कविताओं में प्रस्तुत करते हैं। राजेश जोशी की तरह उतना विषाद अन्य कवियों में मिलना मुश्किल है। क्योंकि कवि को मालूम है कि इससे भारत के आम लोग पीडित हो जायेंगे। मिनरल वाटर के आधिपत्य के कारण एक बूँद पानी के लिए तड़पते मानव का चित्रण कई कविताओं में समान रूप से उपलब्ध है। भविष्य में हमारे देश को पानी के भारी संकट को सामना करना पड़ता है। इससे पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मानव बेहाल हो जायेंगे। इसका संकेत ज्ञानेंद्रसाज की कविता 'पानी' में ही उपलब्ध है। आनेवाले सदी के बारे में कवि इस प्रकार कहते हैं -

> "बिन पानी के भूमि पर नहीं उगेगा अन्न
> ऐसा जिस दिन हो गया
> मानव होगा सन्न।"[८]

ज्ञानेंद्रपति, इमरोज, नीलाभ जैसे कई कवियों ने नदी की रेती अवस्था को प्रस्तुत किया है। आज नदी में पानी मिलना मुश्किल है सिर्फ रेत मात्र उपलब्ध है। इसमें से सबसे अधिक गंभीर कविता है ज्ञानेंद्रपति की 'रेत के द्वीप पसर आये हैं'। इस कविता में कवि इस प्रकार कहते हैं -

> "गंगा के उर तक
> रेत भर आयी है / रेत ही रेत।"[९]

गंगा नदी की इस अवस्था के प्रति पूँजीवादी या साम्राज्यवादी लोग को कोई दुःख नहीं है। इसके प्रति दुःख कवि को मात्र है। उन लोगों का लक्ष्य केवल मुनाफा कमाना है। गंगा नदी का बालू बिकने से ही उनको पैसा मिलता है। ज्ञानेंद्रपति गंगा रेती होने की सूचना देते समय नीलाभ ने अपनी कविता में सरस्वती रेती होने की सूचना दी है -

> "रेत हो चुका है चेहरा
> लुप्त हो गयी है नदी।"[१०]

इसके अतिरिक्त इमरोज भी नदी की पौराणिक-सांस्कृतिक महत्ता को प्रतिपादित कर रेत हो रही नदी की त्रासद कहानी को प्रस्तुत किया है। इन तीनों

कवियों के विचारों में समानता देख सकते हैं। फिर भी तीनों कवि अलग-अलग नदियों की बात कहते हैं।

इसके अतिरिक्त हरीशचंद्र पाण्डे और प्रेमशंकर शुक्ल आदि कवियों ने पानी के बिना की दुनिया के मतलब की बात बताते हैं। विजेंद्र ने अपनी कविता में पानी की खोज करनेवाले मानव की दयनीय अवस्था को प्रस्तुत किया है। सभी कवियों ने अपनी कविताओं पानी पर होनेवाली विश्वयुद्ध की चेतावनी देती है। इस पानी की लडाई देशों के बीच मात्र ही नहीं है, घर-घर, गाँव-गाँव के बीच में होगी। इस लडाई में संपूर्ण संस्कार सभ्यता मिट जायेंगे। लीलाधर मंडलोई 'कि जान पाते रहस्य हम' में यह कहने में इतना व्यग्र हो गया है -

"पानी की कमी का कोई ऐलान
या कि उसके अशुद्ध होने का खतरा
कर सकता है मुझे इतना व्यग्र
कि मैं दौड़ पडूँ शुद्ध पानी की सिम्त।"[११]

४.३. बाँध-निर्माण की समस्या

बाँध-निर्माण मानव-विकास के लिए एक ओर वरदान है दूसरी ओर पर्यावरण के लिए अभिशाप है। नदी को बाँधने से प्रकृति चक्र का संतुलन बिगडता है। बाँध निर्माण नदी को हत्या करने के समान है। इससे उत्पन्न आतंक आज भी हमारे सामने है। मुल्लापेरियार सबसे बडा उदाहरण है। कहा जाता है कि भारत में लगभग १५५० बडे बाँध हैं। बाँध निर्माण से नदी जल का अपने उद्गम को लौटना भयंकर होगा। इससे एक बडा भू-भाग जलमग्न हो जाता है। जिससे उत्पन्न पारिस्थितिक असंतुलन से भूकम्प, भूस्खलन जैसे प्राकृतिक विपदाओं की संभावना निरंतर बनी रहती है। यह बाँध निर्माण जैव विविधता के विनाश का कारण भी बन जाता है। वर्तमान में नदी पर बाँध बनने से होनेवाले विस्थापन से लोगों को बचाने के लिए निरंतर आंदोलन चल रहे हैं। इसमें प्रमुख है - नर्मदा बचाओ आंदोलन एवं टिहरी बाँध आंदोलन। कांता शर्मा, नवल शुक्ल, ऋतुराज, मदन कश्यप, पी.वी.विजयन आदि

कवियों ने अपनी कविताओं में बाँध निर्माण से उत्पन्न विभीषिकाओं को प्रस्तुत किया है।

कान्ता शर्मा 'अचानक नहीं सूखी नदी' नामक कविता में बताती हैं कि एक दिन बनाया बाँध नदी लहरों की स्वतंत्रता को छीन लेता है। यहाँ कवयित्री सुंदरलाल बहुगुणा एवं मेधा पड्कर से अपने आंदोलनों से आगे बढ़ने के लिए कहती हैं। कविता में बाँध को लेकर चलनेवाले आंदोलनों का उल्लेख केवल कान्ता शर्मा ने किया है। बाकी कवियों ने बाँध-निर्माण के बाद उत्पन्न समस्याओं का संकेत दिया है। बाँध-निर्माण से राष्ट्र को असीम आर्थिक लाभ है। यह अधिकाधिक बिजली पैदा करने एवं मछली उद्योग बढ़ाने में भी सहायक है। इससे अनेक घाटी जलमग्न हो जाती हैं। बहुत बडा भू-भाग जल-मग्न होने के साथ-साथ वहाँ के जैव-वैविध्य, संस्कृति, इतिहास, मूल्य परंपराएँ समाप्त हो जाते हैं। सभी कवियों ने अपनी कविताओं में बाँध निर्माण से सभ्यता मिट जाने की आशंका व्यक्त की है। बिजली बनाते समय बाँध के नीचे के अंतर्धाराओं में संघर्षण होता है। इस संघर्षण बाँध टूटने का कारण बन जाता है।

मदन कश्यप और नवल शुक्ल ने बाँध टूटन से उत्पन्न बाढ की विभीषिका को प्रस्तुत किया है। नवल शुक्ल बताते हैं कि नदी बाँधने के कारण वहाँ के पंद्रह गाँवों में छह गाँव डूब गया है -

"कब सो गये हम
क्यों बाँधी गयी नदी
पंद्रह गाँवों के लिए
और डूब गये छह गाँव।"[१२]

नर्मदा नदी पर स्थिति सरदार सरोवर बाँध परियोजना इसका उदाहरण है। इस बाँध के कारण वहाँ के ५५३ गाँव डूब जाने का संकेत मिलता है। इसको लेकर वहाँ निरंतर आंदोलन चल रहा है। गाँव डूब जाने के साथ-साथ वहाँ की दुर्लभ वन्य जीव प्रजातियाँ भी लुप्त हो जायेंगी।

अचानक घटित बाँध-टूटन से एक साँस में सब कुछ निगल गया है साथ ही गाँव को समुंदर बनाया है। यहाँ जल क्षेत्रों की जैव-विविधता नष्ट होने का संकेत मदन कश्यप की 'नदी-संवाद' में मिलता है। कवि के शब्दों में -

"अन्न-पानी चूल्हा-चक्की बोरिया-बिस्तर सब कुछ
निगल गयीं एक साँस में
समुन्दर तक जाने के बदले
हमारे गाँव-जवार को ही बना दिया समुन्दर।"[१३]

दोनों कवि बाँध टूटन से उत्पन्न बाढ़ से गाँव डूब जाने की आशंका व्यक्त की है। नदी संतुलन को बिगाडनेवाले हरेक मनुष्य पर बाँध लगाना वर्तमान में बहुत आवश्यक हो गया है। नदी पर नहीं। नदी को बाँधने के प्रति नदी से कवि मदन कश्यप मात्र माफी माँगते हैं। यह संकेत अन्य कवियों में नहीं मिलता है -

"माफ करना मइया
वे जो हैं समय के सौदागर।"[१४]

कवि ऋतुराज अपनी कविता 'तृष्णातरंगकुला' में एक ओर बाँध टूटने के बाद इंजिनीयर उत्साहित होकर बाँध के मरम्मत करने के प्रति व्यंग्य करते हैं। दूसरी ओर वहाँ के भील जैसे आदिवासी लोगों की दुःख गाथा को प्रस्तुत करते हैं। क्योंकि इससे वहाँ की खेती एवं हरियाली सरसों की नशीली खुशबू की ह्रास होती है। यह केवल ऋतुराज की कविता में ही देख सकते हैं। बाँध वहाँ के भूभाग के वन-उपवन को पानी में डुबोकर मारने के साथ-साथ वहाँ का पर्यावरण भी मर-खप जाएगा।

बाँध पारिस्थितिक संतुलन पर किस तरह प्रभावित होता है। इसके प्रति चारों कवि चिंतित हैं। उनके सोच विचार में साम्य और वैषम्य देख सकते हैं। फिर भी कविता की मूल संवेदना एक जैसी ही है।क्योंकि सभी कवियों के लिए बाँध निर्माण से एक ही झटके में सभ्यता एवं जैव विविधता नष्ट होना असहनीय बात है।

४.४. जलवायु परिवर्तन

वर्तमान संदर्भ में जलवायु परिवर्तन एक गंभीर त्रासदी है। ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि, वनोन्मूलन, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, जैव-विविधता का ह्रास, प्रौद्योगिकी विकास, ओज़ोन परत का क्षरण और परमाणु विस्फोट के कारकों ने एकीकृत होकर जलवायु को सर्वाधिक प्रभावित किया है। प्राचीनकाल का जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। इस परिवर्तन में ऋतुओं की आगमन की सूचना भी विद्यमान है। मानवीय गतिविधियों द्वारा घटित जलवायु परिवर्तन आज चिंता का विषय है। इस त्रासदी में समस्त मानव जाति, जीव-जंतु एवं वनस्पति जगत् बेहाल हो जायेगी। वास्तव में यह समस्त जैवतंत्र का अस्तित्व का प्रश्न है। जलवायु पर्यावरण को कई तरह से प्रभावित करती है। वनस्पतियाँ, जीव-जंतु एवं मानव के क्रियाकलाप भी इसी जलवायु पर भी निर्भर है। एक अनुमान के अनुसार २००९ में घटित जलवायु परिवर्तन के कारण ५.८ करोड लोग प्रभावित हुए हैं। इससे तापमान में तीव्र बढोत्तरी, समुद्री जल स्तर में वृद्धि, पहाडों से हिमनदों के पिघलने में वृद्धि, जल संकट तथा खाद्यान्न संकट बढ़ने की संभावना है। श्रीकांत जोशी, मदनकश्यप, शैल सक्सेना, इन्दु जैन, ज्ञानेंद्रपति, राज्यवर्द्धन, धर्मवीर शर्मा, गोविंद मिश्र और एकांत श्रीवास्तव आदि अनेक समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से जलवायु-परिवर्तन से होनेवाली विभीषिकाओं के बारे में हमें परिचित कराया है।

आज समय पर न बारिश है, न धूप और न गर्मी है। मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नैसर्गिक संसाधनों को भरपूर उपभोग किया है। इसके परिणाम स्वरूप वर्तमान मानव को जलवायु परिवर्तन द्वारा घटित विभिन्न प्रकोपों की मार झेलनी पड़ रही है। सभी कवि इस ऋतु परिवर्तन के बारे में समान रूप से चिंतित हैं। क्योंकि उन सबको जीव के बिना की पृथ्वी के बारे में सोचना असंभव है। कवि धर्मवीर शर्मा 'दूषित पर्यावरण' में इस प्रकार कहते हैं -

> "न गर्मी में गर्मी न सर्दी में सर्दी
> हकीकत सभी मौसमों की बदलगी।
> कुदरत के हर संतुलन को बिगाड़ा।"[१५]

इसके समान विचार मदन कश्यप की कविता 'धूप में बारिश' में मिलता है। इसमें कवि बताते हैं कि मौसम का मनोमिज़ाज बदलने के कारण समय पर न धूप है न बारिश है। सभी किसी न किसी समय में आ जाते हैं। यह बदलाव पर्यावरण के अस्तित्व के लिए खतरा है। मदन कश्यप वर्तमान मानव से इस प्रकार पूछते हैं-

"धूप में बारिश यानी
न केवल धूप न केवल बारिश
यह क्या है !"[१६]

मौसम में बढ़ती गर्मी, सूखता बादल और हवाओं का बदलता रूख पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए सवाल बन जाते हैं। इसका असर जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के समान हमारे ज़िंदगी पर भी पडेगा। इसलिए सभी कवि इसकी रक्षा के लिए इच्छुक हैं। ज्ञानेंद्रपति, एकांत श्रीवास्तव, गोविंदमिश्र और श्रीकांत जोशी जैसे कवियों ने हर साल बदल रहे वसंत ऋतु के दुष्परिणामों के बारे में बताते हैं। ज्ञानेंद्र पति ने अपनी कविता 'वसंत विध्वंस' में जलवायु परिवर्तन द्वारा घटित सूखा, बवण्डर, बाढ़ और प्रजातियों की विलुप्ति का संकेत दिया है। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप समुद्री तूफानों की तीव्रता और बारंबारता में वृद्धि होगी। बाढ़, सूखा एवं तूफान की वृद्धि के कारण बढे पैमाने पर मानव प्रव्रजन होगा। इसकी सूचना केवल ज्ञानेंद्रपति की कविता में उपलब्ध है। किसी अन्य कवि में नहीं। वैश्विक तापन का दुष्प्रभाव जलवायु तंत्र पर भी होता है। जिसके परिणाम स्वरूप गेहूँ, धान तथा जौ की उत्पादन दर में कमी होगी। ज्ञानेंद्रपति ने अपनी कविता में जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप आयी कई समस्याओं को प्रस्तुत किया है। इसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों पर भी पडेगा। इससे पर्यावरणीय संसाधन खत्म होने के साथ-साथ महंगाई बढेगी।

'वसंत विध्वंस' से भिन्न कविता है इन्दु जैन की 'बहुत दूर नहीं'। कवयित्री की राय में जलवायु परिवर्तन का बुरा प्रभाव पेड़-पौधों पर भी पडेगा। समय पर बारिश न होने के कारण आम जैसे फलों के उत्पादन में कमी होगी। ज्ञानेंद्रपति फसलों के उत्पादन दर में होनेवाली कमी को संकेत करते समय इन्दु जैन ने अपनी

कविता में फलों की कमी का संकेत दिया है। दोनों के विचारों में निहित मूलभूत भाव एक है। दोनों कवि अपनी कविताओं के माध्यम से एक सी बात बताना चाहते हैं। ज्ञानेंद्रपति की कविता में जलवायु को बिगाड़नेवाले मानवीय क्रियाकलापों के प्रति आक्रोश की भावना अधिक है।

विभिन्न देशों के बीच के युद्धों में प्रयुक्त अस्त्र-शस्त्र एवं परमाणु-विस्फोटों से उत्पन्न गैसें एवं धूल भी जलवायु को बदल देते हैं। जिसके परिणामस्वरूप आये नुकसान अत्यंत घातक बन जाते हैं। अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग से होनेवाले जलवायु परिवर्तन का संकेत करते हुए 'विकल्प' में शैल सक्सेना ने इस प्रकार लिखा है -

"परिवर्तन हुआ था ऋतुओं के क्रम में
कभी हिमपात होता था ग्रीष्म ऋतु में
असहनीय होता था सूर्यताप शिशिरकाल में
वसन्त विदा हो गया था भूमि तल से।"[१७]

शैल सक्सेना अपनी कविता के माध्यम से ऋतुओं के अंत की सूचना देती हैं। युद्धों से उत्पन्न जलवायु बदलाव का संकेत केवल उनकी कविता में मिलती है। कवि को मालूम है कि युद्धों द्वारा विभिन्न अपशिष्टों को वायुमंडल में छोड़ने के परिणाम स्वरूप वायुमण्डल के तापमान में निरंतर वृद्धि होती जा रही है। इससे जलवायु तंत्र की गतिविधियों पर विनाशकारी तथा हानिकारक प्रभाव पड़ता जा रहा है। केमिकल्स के अधिकांश उपयोग वायु मण्डल पर प्रभावित कर इससे होनेवाले जलवायु-परिवर्तन का संकेत एकांत श्रीवास्तव की कविता 'वसंत में' में मिलता है। इसमें कवि वर्तमान मानव से पूछते हैं कि इस संसार की जलवायु को कैसे बचाऊँ ? एकांत श्रीवास्तव एवं शैल रस्तोगी की कविताओं के बीच एक थोड़ा-सा साम्य दिखलायी पड़ता है।

गोविंद मिश्र और श्रीकांत जोशी अपनी कविताओं में वसंत की प्रतीक्षा कर रहे हैं। आज की युवा पीढ़ी को वसंत ऋतु की महत्ता को समझना मुश्किल हो गया है। दोनों कवियों के विचारों में अधिकांश समानता देख सकते हैं। दोनों कवि

समान रूप से कहते हैं कि आनेवाले सदियों में वसंत ऋतु की पहचान या नामोनिशान तक मिट जायेगा।

सभी कवियों ने जलवायु द्वारा घटित भिन्न-भिन्न समस्याओं को अपनी-अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है।कवियों की दृष्टि एक समस्या पर न केंद्रित है। सभी कवि अपनी कविताओं के माध्यम से जलवायु परिवर्तन रोकने के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास करने की महती आवश्यकता की बात बताते हैं। इस उद्देश्य में सभी कवियों में समानता मिलते हैं। फिर भी सभी कवियों का परिवेश अलग-अलग होने के कारण कविताओं के विचार बिंदुओं में समानता के साथ-साथ वैषम्य भी देख सकते हैं।

४.५. वैश्विक तापन

पारिस्थितिकी के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगानेवाली भयभीत समस्या है वैश्विक तापन। यह मुद्दा पिछले कई वर्षों से विश्व भर के पर्यावरणीय विद्वानों एवं वैज्ञानिकों की चिंता को बढा दिया है। वैश्विक तापन यानी पृथ्वी के तापमान में लगातार हो रही बढोत्तरी है। जिसका प्रमुख कारण कार्बनडाइ ऑक्साइड, मीथेन, क्लोरो फ्लूरो कार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड जैसे ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन है। बढ़ता तापमान हिमखंड पिघलने एवं समुद्र का जल स्तर बढने का कारण बन जाता है। ग्रीन हाउस गैसें सूर्य से आनेवाली पारबैंगनी विकिरणों को सतह से परावर्तित होने के बाद, पुनः परावर्तित करके पृथ्वी पर भेज देती हैं, साथ ही कुछ परावर्तित विकिरण अंतरीक्ष में अवशोषित हो जाती हैं। यह अवशोषण वातारण को गर्म करता है। यह वैश्विक तापन मानव, जीव-जंतुओं एवं सागर के वर्षा वन कहलानेवाली रंग-बिरंगी वनस्पतियों के अस्तित्व को मृत्यु के कगार पर खडा कर दिया है। इससे उत्पन्न विनाशकारी परिणामों के प्रति अनिता निहालनी, बद्रीनारायण, बी.एल.आर्य और राज्यवर्द्धन जैसे अनेक समकालीन कवि चिंतित हैं।

सभी कवियों की राय में वैश्विक तापन का प्रमुख कारण पर्यावरण में हुए अनियमित बदलाव है। इसका आरंभ औद्योगिक क्रांति के साथ हुआ है। ग्लोबल

वार्मिंग के लिए पर्यावरणीय बदलाव से सबसे ज़्यादा जिम्मेदार मानव और उसकी गतिविधियाँ हैं। बद्री नारायण की राय में दिन-प्रतिदिन विकराल होती जा रही वैश्विक तापन परमाणुओं के क्रोध का नतीजा है। पृथ्वी के नाभिकुण्ड के समूल विनाश वैश्विक तापन का सबसे बडा कारण बन सकता है। 'गर्मी' नामक कविता में बद्रीनारायण इस प्रकार कहते हैं कि -

> "कि जब पृथ्वी पर बढती है मज़लूम की हाय तो गर्मी बढ़ जाती है
> कि जब धरा की अक्षयिनी अमृत कुण्ड भी पूरी
> तरह सूख जाती है।"[१८]

वैश्विक तापन से होनेवाले दुष्परिणामों से पृथ्वी की रक्षा की चिंता कुछ कविताओं में विद्यमान है। वैश्विक तापन से जीव-जंतुओं व वनस्पतियों के नामोनिशान तक मिट जायेगा। इसके प्रति कवि अनिता निहालनी और राज्यवर्द्धन चिंतित हैं। अन्य कवियों में जीव-जंतुओं व वनस्पतियों के अस्तित्व की रक्षा का संकेत कम उपलब्ध है। पृथ्वी के कुछ पौधे पर्यावरण की स्थिति को सूचित करते हैं। इसका विनाश पर्यावरण के संतुलन को पूरी तरह गड़बड़ाता है। जीव-जंतु व वनस्पतिविहीन पृथ्वी के बारे में कल्पना करना एक संवेदनशील कवि के लिए असंभव है। ग्लोबल वार्मिंग से धरती को बचाना आज असंभव-सा हो गया है। इसके प्रति संवेदना प्रकट करते हुए समकालीन कवि राज्यवर्द्धन 'खो जाएगा एक दिन धरती का संगीत' में इस प्रकार लिखते हैं -

> "सोचा है कभी तुमने
> खूबसूरत पंखोंवाली चिड़ियों के बिना
> पृथ्वी कितनी रंगहीन हो जायेगी
> .... और खो जाएगा एक दिन
> धरती का संगीत।"[१९]

वैश्विक तापन का एक ओर मुख्य कारण वनों की कटाई है। इसका संकेत बी.एल.आर्य की 'प्रकृति की पुकार' कविता में ही देख सकता है। वन मुख्यतः ग्रीन हाउस गैसों का अवशोषण करता है। इससे ग्रीन हाउस गैसों से उत्पन्न धरती के तापमान कम होगा। लेकिन वनों का अत्यधिक दोहन से वैश्विक तापन की समस्या अत्यंत जटिल हो गयी है। इससे बाढ, तूफान आदि प्राकृतिक प्रकोप बढ़ने के साथ-

साथ उर्वर भूमि के अनेक क्षेत्र या तटवर्ती प्रदेशों को रेगिस्तान बनते हैं। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए पेड़ों का संरक्षण अनिवार्य है। कवि बी.एल.आर्य की राय में वैश्विक तापन को रोकने का महत्वपूर्ण उपाय है - पेड़-पौधों का रोपण। कहा जाता है कि वैश्विक तापन से भारत में लगभग दस लाख शीशम के पेड़ सूख गये हैं। इससे करोडों रूपये की आर्थिक हानि भी हुई। अन्य कवियों ने वैश्विक तापन से होनेवाले दुष्परिणामों का संकेत देते समय बी.एल.आर्य ने वैश्विक तापन को रोकने के लिए वृक्षारोपण पर बल दिया है। अनिता निहालनी, बद्री नारायण और राज्यवर्द्धन ने वैश्विक तापन से संपूर्ण सृष्टि नष्ट होने के प्रति आशंका व्यक्त की है। वैश्विक तापन से समस्त ब्रह्माण्ड के संतुलन को नियंत्रित करना मुश्किल है।

कहा जाता है कि सात प्रतिशत तक तापमान वृद्धि पारिस्थितिक तंत्र को ही समाप्त कर देगी। निष्कर्ष रूप से कहा जाये तो ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में मुख्यतः कार्बनडाई ऑक्साइड के नियंत्रण से वैश्विक तापन से उत्पन्न समस्याओं का समाधान हो जायेगा। साथ ही वनांचल की सुरक्षा करना है। कुछ समकालीन कवियों ने समान रूप से इससे उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत दिया है।

४.६. अम्ल-वर्षा

वर्तमान युग में अम्ल-वर्षा जैसी पर्यावरणीय समस्या एक आम बात हो गयी है। अमरीका और यूरोप के अधिकांश देशों को हर साल इस खतरे को सामना करना पड़ता है। सभी समय अम्लीय जल मात्र मिलनेवाला झील है न्यूयॉर्क शहर का एडिरोनडैक। औद्योगिक क्रियाकलापों एवं वाहनों से निकलनेवाले कार्बनडाइ ऑक्साइड, सल्फरडाइ ऑक्साइड और नाइट्रिक ऑक्साइड वायु मण्डल के वर्षा के पानी से अभिक्रिया करते हैं। यह प्रक्रिया वर्षा के निर्मल जल को अम्ल बनाती है। वर्षा जल के पी.एच मान ५.७ से कम हुआ तो उसे हम अम्लीय वर्षा के अंतर्गत मानते हैं। इन गैसों की अभिक्रिया के फलस्वरूप आये दुष्प्रभाव १९७९ में अमरीका में सबसे पहले देखने को मिला है। यह वर्षा समस्त पारिस्थितिक तंत्र के लिए अत्यंत घातक रहा। न्यूयॉर्क से प्रारंभ होकर पूरब में वाममौंट से लेकर मैसाच्यूसैट्स से उत्तरी कैलोराइना तक के क्षेत्र हर साल अम्ल वर्षा के घातक प्रभावों से त्रस्त है। सबको

विनाश करनेवाला यह वर्षा आज भारत के कई स्थानों पर देख सकते हैं। इसके कारण विश्व के अधिकांश जलस्रोत जीव-जन्तु रहित हो गये हैं। बलदेव वंशी, शैल सक्सेना, शशि सहगल, मदन कश्यप, ज्ञानेंद्रपति जैसे हिंदी के समकालीन कवि पर्यावरणीय विद की तरह अपनी कविताओं में अम्ल-वर्षा के दुष्परिणामों की बात करते हैं।

अम्ल-वर्षा से संबंधित उनके विचारों में समानता के साथ-साथ विभिन्नता भी देख सकते हैं। मदन कश्यप, शैल सक्सेना, शशि सहगल, ज्ञानेंद्रपति जैसे कवियों ने अपनी कविता में अन्य अनेक समस्याएँ प्रस्तुत करने के साथ-अम्ल-वर्षा से उत्पन्न घातक दुष्परिणामों को प्रस्तुत किया है। बलदेव वंशी की 'तेजाबी वर्षा' नामक कविता आदि से अंत तक इसके दुष्परिणामों पर केंद्रित है। इसलिए अम्लीय वर्षा के दुष्परिणामों को प्रस्तुत करने में अन्य कविताओं की अपेक्षा यह कविता अधिक महत्वपूर्ण है। अम्ल वर्षा से उत्पन्न ज़हर को पीने के लिए धरती को भी भय है। शशि सहगल और बलदेव वंशी जैसे दोनों कवियों ने धरती की शिराओं में रिस रहे विष का संकेत समान रूप से दिया है। अम्ल-वर्षा से उत्पन्न धरती संकट के प्रति दोनों कवियों का विचार समान है। ऐसी समानता अन्य कवियों में नहीं है।

अम्लीय जल में मछलियों की संख्या व प्रजनन की क्षमता घट जाती है। इसका प्रमुख उदाहरण है स्कैन्डीनेविया और कानडा के नदियों और झीलों में होनेवाली ट्रउट और साल्मन मछलियों की विलुप्ति। इन मछलियों की मृत्यु का संकेत बलदेव वंशी की 'तेजाबी वर्षा' नामक कविता में ही मिलता है -

> "बरस रहीं मरी मछलियाँ
> बादलों से कभी
> बरसता तेजाबी जल और
> धरती आवाक्
> असमर्थ।"[२०]

अम्ल-वर्षा के कारण पूरी वसुधा की हरियाली नष्ट हो जाती है। इसका संकेत केवल मदन कश्यप की कविता में ही उपलब्ध है। लेकिन बलदेव वंशी ने अपनी

कविता में वनस्पतियों का संविधान नष्ट होने का एक छोटा-सा संकेत दिया है। फिर भी दोनों कविताओं को अत्यधिक गहराई से विवेचन किया जाये तो भाव के स्तर पर साम्य देखने को मिलता है।

युद्धों में प्रयुक्त गैसों का धुआँ भी अम्ल-वर्षा के कारण बन जाता है। यह धुआँ बरसात के जल से संयोग करके अम्ल का निर्माण कर देता है। यह आसमान में भी संकट पैदा कर देता है। विषैले रासायनिक अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग किस प्रकार अम्ल वर्षा का कारण बन जाता है। शैल सक्सेना और ज्ञानेंद्रपति ने इसके प्रति विचार अपनी कविता में व्यक्त किया है। शैल सक्सेना ने 'विकल्प' में रासायनिक अम्ल वर्षा से पर्यावरणीय तंत्र की स्थिति का संकेत इस प्रकार दिया है -

"वर्षा हुई थी रासायनिक अम्लों की
क्षार हुए थे वर्षा वन अनायास ही
किसी स्थान पर बरसे थे जलचर आकाश से
विषाक्त हुआ था वातावरण
श्वास रुद्ध-सी होती थी प्रदूषित वायु से।"[२१]

शैल सक्सेना यहाँ सभी पर्यावरणीय तत्वों पर चिंतित हैं बल्कि ज्ञानेंद्रपति धरती औऱ आसमान के प्रति चिंतित है। दोनों कवियों के विचारों में साम्य के अलावा अधिकांशतः वैषम्य देख सकते हैं। ज्ञानेंद्रपति 'युद्ध के विरुद्ध' में कहते हैं कि आकाश के अन्तस में भरा हुआ धुएँ से उत्पन्न एसिड वर्षा धरती और आसमान के लिए अत्यंत घातक है। उनके शब्दों में -

"काली वर्षा ! एसिड वर्षा
आसमान रोता है काले आँसू तेजाबी आँसू
युद्ध का धुआँ आकाश के अन्तस में भरा हुआ है।"[२२]

दोनों कवियों की कविताओं का उद्देश्य एक है। फिर भी प्रस्तुत करने के तरीके में विभिन्नता देख सकते हैं। अम्ल-वर्षा का दुष्प्रभाव पेड़ों और इमारतों पर भी देखने को मिला है। इससे प्रतिवर्ष अनेक पेड़ नष्ट हो रहे हैं। प्राकृतिक वनों का विनाश समूचे पारिस्थितिकी के अस्तित्व के लिए अत्यंत खतरनाक है। इसका संकेत

शशि सहगल और बलदेव वंशी की कविताओं में समान रूप से मिलता है। यह वर्षा मकान की चमक को भी कम करती है। इसका संकेत केवल शशि सहगल ने अपनी कविता में दिया है।

इस समस्या के बारे में आम लोगों के बीच अवबोध कराना ही सभी कवियों का लक्ष्य है। इसलिए सभी कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में अम्ल वर्षा से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के घातक परिणामों के बारे में बताया है। विश्व स्तर पर इस समस्या के समाधान करने के लिए बलदेव वंशी, शशि सहगल, शैल सक्सेना, मदन कश्यप जैसे कवियों की कविताएँ बहुत प्रेरणादायक हैं।

४.७. वायु प्रदूषण

समस्त जैव-मण्डल के लिए प्रकृति की अमूल्य देन है वायु। जीव जगत् का अस्तित्व एवं विकास उसी वायु पर भी निर्भर है। इसके बिना पृथ्वी पर जीवन असंभव है। पृथ्वी पर फैले गैसीय आवरण को वायुमंडल कहते हैं। वायु मंडल में लगभग ७८ प्रतिशत नाइट्रोजन, २१ प्रतिशत ऑक्सिजन और ०.५ प्रतिशत कार्बनडाइ ऑक्साइड तथा अन्य निष्क्रिय गैसें विद्यमान रहती है। आज उसमें अनेक हानिकारक तत्व प्रवेश कर उसके मौलिक संतुलन को बिगाड़ते हैं। इसका प्रमुख कारण हमारे औद्योगिक विकास ही है। इससे उत्पन्न ज़हरीली तत्व या धुआँ मानव की साँस में प्रवेश कर भयंकर एवं लाइलाज बीमारियाँ पैदा करते हैं। आज पूरा विश्व वायु प्रदूषण की विभिन्न घटनाओं से त्रस्त है। भोपाल में घटित मिथाइल आइसो सायनाइड गैस रिसाव से हज़ारों लोग मर गये और आज भी लोग जानलेवा रोगों से पीड़ित है। वर्तमान वायु प्रदूषण एक मानव जन्य समस्या है। मोटोर वाहनों से निकलनेवाली धुआँ, पेट्रोल व डीज़ल, कूडा-कचरा आदि को जलाने से बाहर आनेवाली धुआँ और फैक्टरियों में रासायनिक पदार्थों के उपयोग के कारण चिमनियों तथा रिसाव के माध्यम से निकलनेवाली विषैली गैसें वायुमंडल को ज़हरीली बनाकर घना कोहरा छा जाने का कारण बन जाते हैं। जिससे दिन में आनेवाला सूर्य विकिरण काफी कम हो जाता है। रात में बाहर आनेवाला विकिरण रुक जाता है। यह वायु प्रदूषण मनुष्य के साथ समस्त जीवधारियों के लिए अत्यंत घातक है। इसके विनाशकारी परिणामों का

संकेत इन्दु जैन, कुमार अम्बुज, ज्ञानेंद्रपति, शशि सहगल, धर्मवीर शर्मा आदि की कविताओं में मिलता है। क्योंकि वायु प्रदूषण उतना विनाशकारी है इसका दुष्प्रभाव ओज़ोन मंडल एवं जलवायु पर भी देख सकते हैं।

कुमार अम्बुज, इन्दु जैन, धर्मवीर शर्मा और ज्ञानेंद्रपति जैसे कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में औद्योगिक कारखानों के चिमनियों से निकलनेवाले ज़हरीले धुएँ से उत्पन्न प्रदूषण का संकेत दिया है। ज्ञानेंद्रपति, इन्दु जैन और कुमार अम्बुज की कविताओं में वैषम्य की अपेक्षा अधिक साम्य देख सकते हैं। तीनों कवियों ने इस धुएँ के कारण मानव पर पड़नेवाले दुष्प्रभावों को समान रूप से प्रस्तुत किया है। आज के अधिकांश मल्टी नैशनल कंपनियाँ नदी तट पर स्थित हैं। गंगातट पर स्थित कारखाने के चिमनियों से निकलनेवाले धुआँ वहाँ के पारिस्थितिक तंत्र को भी विध्वंस करता है। इसके प्रति दुःख प्रकट करते हुए कवि ज्ञानेंद्रपति 'धुएँ के पेड़ की तरह उगी है' में कहते हैं -

"पेडों के बीच अदीख
खडी, उर का आक्रोश उलीचती वह करिखाई चिमनी
हवा के हवाले करती अपना जहरीला धुआँ कि आत्मसुखी चौमुखी विनाश कामना।"[२३]

गंगातट पर होनेवाले वायु प्रदूषण का संकेत कवि ज्ञानेंद्रपति ने ही दिया है। इसमें कहीं न कहीं कुछ आक्रोश की भावना देख सकते हैं। अन्य कवियों में उपलब्ध आक्रोश की भावना ज्ञानेंद्रपति की तरह उतना गंभीर नहीं है। यह धुआँ पेड़-पौधे, खेत, मानव, जीव-जंतु को समान रूप से प्रभावित करते हैं। इस धुए के कारण आर्थिक पौधों की पत्तियों का रंग बदलकर पीला पड़ने के कारण उनका बाज़ारी मूल्य कम हो जाता है। इससे हमारे आर्थिक व्यवस्था भी गड़बड़ाती है। लेड़, आर्सेनिक, कोबाल्ट जैसे वायु-प्रदूषकों में पशु-पक्षियों एवं जीव-जंतुओं को मारने की क्षमता है। खेतों और जंगलों के अस्तित्व के प्रति चिंतित कवि कुमार अम्बुज 'रोज़ का रास्ता' में इस प्रकार कहते हैं -

"फिर अनदेखा कर देंगे सूखे खेत कंक्रीटों के जंगल
पी जाएँगे चिमनियों का धुआँ
ढाबे के सामने पड़ी खटियों से हटाते हुए निगाह

भूल जाएँगे उस दुःख के बारे में भी जो बीजों की तरह
पहुँच रहा है उनके काम करने की जगहों पर।"[२४]

यह धुआँ नदी, पहाड और पेड़ों को भी प्रदूषित करते हैं। इसका संकेत केवल कुमार अम्बुज की कविता में मात्र ही है, अन्य कवियों में उपलब्ध नहीं। धुआँ से उत्पन्न गंगा प्रदूषण का संकेत ज्ञानेंद्रपति की कविता में देख सकता है। कवि की दृष्टि गंगा नदी पर ही केंद्रित है अन्य नदियों पर नहीं। पेडों पर वायु प्रदूषण ने किस तरह प्रभावित किया है इसके बारे में शशि सहगल बताती हैं। कल-कारखानों द्वारा छोड़ा गया धुआँ एवं अनेक पदार्थों के सूक्ष्म कणों ने पेडों की प्रक्रिया को अवरुद्ध किया है। क्योंकि ये विषैले पदार्थ पृथ्वी की सतह से लगभग २००० फुट की ऊँचाई पर भी उपस्थित रहते हैं। कुमार अम्बुज की कविता में वायु प्रदूषण से उत्पन्न पेडों की परिवर्तनशीलता का छोटा-सा संकेत मात्र है, लेकिन शशि सहगल ने विस्तार से इसका संकेत दिया है। कवयित्री 'ज़हर' में बताती हैं -

"इसीलिए पेड़ आज / झूमना भूल गयी है
मानो / धुएँ का साँप
उसे डस गया है।"[२५]

वर्तमान युग में विश्व के प्रत्येक देश अपनी सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग कर रहा है। बमों, मिसाइलों में होनेवाले ज़हरीले पदार्थ वायु को प्रदूषित करने के साथ-साथ अन्य पर्यावरणीय तत्वों की मौत का कारण बन जाता है। कवि ज्ञानेंद्रपति की राय में उनकी बारूदी धुआँ वायुमण्डल को उधेड़ता है। इसके कारण भविष्य में पृथ्वी जीवविहीन हो सकती है। इसके प्रति कवि की चिंता प्रशंसनीय है। लेकिन अन्य कवियों में बमों, मिसाइलों के प्रयोग से उत्पन्न वायु-प्रदूषण का छोटी-सी सूचना भी नहीं मिली है। वाहनों से निकलनेवाले कार्बन मोनोऑक्साइड और सल्फरडाइ ऑक्साइड जैसी घातक गैसें वायु को विषाक्त बना रही है। पेट्रोल व डीज़ल से निकलनेवाले नाइट्रोजन के ऑक्साइड स्मॉग को जन्म देता है। कारखानों एवं वाहनों से निकलनेवाले घातक धुआँ धूल के साथ मिलकर वायु को इतना प्रदूषित कर देता है, इसलिए वर्तमान मानव को साँस लेना मुश्किल हो गया है।

संक्षेप में कहें तो सभी कवियों ने विभिन्न स्रोतों से निकलनेवाले वायु-प्रदूषण का संकेत अलग-अलग ढंग से दिया है। इसलिए इन कवियों के विचारों में साम्य अधिक और वैषम्य कम ही देख सकते हैं। वायु प्रदूषण का निवारण करना सभी कवियों का लक्ष्य है। ज्ञानेंद्रपति अपनी कविता में पूछते हैं कि -

"सुसभ्य हैं हम, सचमुच
फाफडों से नहीं, बमों मिसाइलों से रौंदते इस पृथ्वी को
बारूदी धुएँ से उधेड़ते वायु मंडल।"[२६]

४.८. टेरमिनेटर जीन की समस्या

वर्तमान वैज्ञानिकों ने जीव की खोज के पश्चात् उसमें से नयी-नयी प्रजातियाँ विकसित कर ली हैं। यह एक ओर विज्ञान एवं बयोटेक्नॉलजी की अमूल्य देन है दूसरी ओर समस्त पर्यावरण को विनाश करनेवाला बीज भी है।पृथ्वी के संपूर्ण जैव मंडल में मानव के अलावा प्राणियों, वनस्पतियों एवं जीव-जंतुओं में वैविध्य देखने को मिलता है। विश्व के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग फसल पाये जाते हैं। वर्तमान वैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के फसलों के बीज के जीनों को मिलजुलाकर उसमें से नयी-नयी किस्में विकसित कर ली हैं। इसके दुष्परिणामों के बारे में बिना सोचे समझे इन बीजों को कृषक अपने खेतों में डाल रहे हैं। यह खेतीय पारितंत्र को बिगाड़ता है। इस बीज से उत्पन्न पदार्थ मानव सहित सभी जीव-जंतुओं को अत्यंत हानिकारक बन जाता है। एक पर्यावरणविद् की तरह ज्ञानेंद्रपति और लीलाधर मंडलोई इसके दुष्परिणामों के प्रति सचेत कराते हैं।

दोनों कवि अपनी कविताओं में मोणसान्टो जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के संकर बीजों के प्रयोग के प्रति विरोध करते हैं। लीलाधर मंडलोई ने अपनी कविता 'शर्मनाक' में मोणसान्टो की बी.टी कपास को समर्थन करनेवाली सरकार के प्रति व्यंग्य किया है। क्योंकि कवि को मालूम है कि यह मिट्टी की उर्वर क्षमता को नष्ट करने के साथ-साथ समस्त पर्यावरणीय तंत्र को विषाक्त बनाता है। उत्पादन वृद्धि को बढाते समय पर्यावरण विनाश पर भी सोचना है। बी.टी कपास के प्रयोग से उत्पन्न विनाश के कारण विदर्भ में कई किसानों ने आत्महत्या कर ली है -

"कि विदर्भ में
किसान आत्महत्या को विवश
कि लागत
१३,५०० रूपये प्रति एकड़
और खेत उदास।"[२७]

इसका संकेत लीलाधर मंडलोई की कविता में है। ज्ञानेंद्रपति की राय में संकर बीज हमारी अन्न-जल में ज़हर भरनेवाला बीज है। ज्ञानेंद्रपति सभी बीजों से उत्पन्न दुष्परिणामों की बात बताते समय लीलाधर मंडलोई बी.टी कपास की बात एवं किसान की आत्महत्या की बात करते हैं। ज्ञानेंद्रपति ने संकर बीजों के प्रयोग के प्रति व्यंग्य करते हुए 'बीज व्यथा' में इस प्रकार लिखा है -

"वे बीज-अनन्य अन्नों के एकल बीज
अनादि जीवन परंपरा के अंतिम वंशज
भारत भूमि के अन्नमय कोश के मधुमय प्राण।"[२८]

दोनों कवि समान रूप से संकर बीजों के प्रयोग से होनेवाले दुष्परिणामों का संकेत दिया है। फिर भी मानव अधिक से अधिक पैसा कमाने के लिए इन बीजों का उपयोग कर रहे हैं। इन बीजों के प्रयोग से खेती प्रदेश भविष्य में रेगिस्तान बन जायेगा। इसकी सूचना दोनों कवियों की कविताओं में मिलती है।

४.९. प्लास्टिक की समस्या

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रियाशील एवं बहुतायत से उपयोग करनेवाला संसाधन है प्लास्टिक। भौतिक सुखों की लालसा तथा अल्पावधि लाभ-हेतु मानव ने प्लास्टिक व पॉलिथिन का उपयोग कर पर्यावरण पर खतरा पैदा कर दिया है। इसका उपयोग करते समय जिसके घातक परिणामों की विभीषिका के बारे में मानव कल्पना भी नहीं कर सकता है। प्लास्टिक के उपयोग से होनेवाली सबसे बडी समस्या यही है कि यह विघटनीय नहीं है। दिन-प्रतिदिन फेंकनेवाले प्लास्टिक व पॉलिथिन थैलियाँ अन्य कचरे के साथ नदी, तालाब जैसे जलस्रोतों में पहुँचकर पानी को प्रदूषित करने

के साथ-साथ जल-भराव से जुडी समस्याएँ पैदा करती हैं। कारखानों व अस्पतालों से फेंकनेवाली पॉलिथिन व प्लास्टिक की प्लेटें, चम्मच, गिलास जैसे अन्य कचरे को बिना सोचे समझे मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह मिट्टी की उर्वर शक्ति को नष्ट करने के साथ-साथ उसे विषैला बनाता है। इसके विषाक्त गुण पेड़-पौधे, फल-फूल, सब्जियों में आ जाते हैं। इसको जलने से होनेवाले ज़हरीली गैसें वायुमंडल को प्रदूषित कर, ओज़ोन परत को नष्ट कर समस्त पारिस्थितिकी को विषाक्त बनाते हैं। रागतेलंग, रामदरश मिश्र, गोविंद मिश्र, ज्ञानेंद्रपति, बलदेव वंशी आदि ने अपनी कविताओं के माध्यम से जाने-अनजाने उपयोग करनेवाले पॉलिथिन व प्लास्टिक की घातक विभीषिकाओं का परिचय दिया है।

वर्तमान युग में रिश्ता भी प्लास्टिक की तरह हो गया है। रामदरश मिश्र और रागतेलंग की कविताओं में प्रस्तुत विचारों में कुछ समानता देख सकते हैं। दोनों कवि अपनी कविताओं में समान रूप से प्लास्टिक के फूल और पेड़ की बात बताते हैं। वर्तमान युग के बच्चे और मानव प्राकृतिक संसाधनों के अलावा प्लास्टिक के संसाधनों से सबसे अधिक परिचित हो गया है। आज के बाज़ार में हर समय प्लास्टिक के फूल और पेड़ उपलब्ध हैं। आज प्राकृतिक वस्तुओं के स्थान पर प्लास्टिक वस्तुएँ अधिक हैं। दुनिया उतना ही प्लास्टिक-मय हो गयी है। इसके बारे में रागतेलंग 'प्लास्टिक' में इस प्रकार कहते हैं -

> "तमाम किताबों-तसवीरों के बाद अब
> संसार के नक्शे को भी मढ़ लिया प्लास्टिक ने
> बहने लगा इसका समुद्र तो सारी ज़मीन पर।"[२९]

यहाँ रागतेलंग ने संसार के नक्शे को भी मढ लेने के प्लास्टिक की बात बताते समय ज्ञानेंद्रपति बाज़ार के चारों ओर व्याप्त पॉलिथिन की बात बताते हैं। संपूर्ण विश्व में व्याप्त प्लास्टिक व पॉलिथिन की वर्तमान स्थिति को प्रस्तुत करना दोनों कवियों का उद्देश्य है। इस पॉलिथिन की थैलियाँ खाकर प्रतिवर्ष असंख्य जीव-जंतु मर जाते हैं। प्लास्टिक के प्रभाव के बारे में ज्ञानेंद्रपति 'पॉलिथिन' में इस प्रकार लिखते हैं -

"जिस तरह बाज़ार की मुट्ठी में बंद हैं हम
बगलों से लगे हर्ष भरे घर जाते पालिथिन
घूरे से उठकर हवाओं में उधियाते पालिथिन।"[३०]

वर्तमान युग के मानव जीवन को जिस तरह पॉलिथिन ने प्रभावित किया है उसका संकेत दोनों कविताओं में समान रूप से मिलता है। कहा जाता है कि पॉलिथिन थैलियों के अधिकाधिक उपयोग ने अफ्रीका के राष्ट्रीय फूल के अस्तित्व को विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया है। बलदेव वंशी व ज्ञानेंद्रपति की राय में यह पॉलिथिन आधुनिक सभ्यता का पर्याय है। इसके संबंध में होनेवाले विचारों में दोनों कवियों की कविताओं में समानताएँ मिलती हैं। नदियों को प्रदूषित करनेवाला अत्याधुनिक जल प्रदूषक है प्लास्टिक और पॉलिथिन। इसके बढ़ती उपयोग के कारण वहाँ के नदी का स्थानीय पर्यावरण बुरी तरह बिगड़ जाता है। इसके कारण अनेक मछलियाँ व अन्य जलीय जीव असमय ही मौत के मुँह में समा जाते हैं। गंगा नदी में हो रही पॉलिथिन जनित प्रदूषण के बारे में अन्य कवियों की तुलना में ज्ञानेंद्रपति अधिक सोचते हैं।

४.१०. कूडा-करकट की समस्या

आज पृथ्वी पर कूडा-करकट एक महत्वपूर्ण समस्या है। पृथ्वी की हालत दिन-प्रतिदिन बिगड़ रही है। यह कूडा-कचरे से उत्पन्न प्रदूषण पर्यावरण में जीवन के लिए खतरे की घंटी है। इसके अंतर्गत औद्योगिक, रासायनिक एवं घरेलू कचरे आते हैं। घरेलू कचरे से उत्पन्न प्रदूषण के बारे में किसी शिक्षित व्यक्ति तक नहीं सोचते हैं। मानव जीवन की औद्योगिक वैज्ञानिक प्रगति एवं निरंतर बढ रही जनसंख्या के साथ-साथ कूडे की मात्रा एवं विभिन्नता में भी बढोत्तरी हुई है। कहा जाता है कि हमारे देश में सरकार प्रतिवर्ष नगरीय क्षेत्र के कूडे-करकट के एकत्रीकरण व रख-रखाव पर ५०७००० मिलियन से अधिक रूपये खर्च कर रही है। वर्तमान समय में बाज़ारों का रूप बदल जाने से सड़कों के स्थान-स्थान पर असंख्य कूडे का ढेर दिखलायी देता है। वह भू-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण को बढाकर भूमि की

उर्वर शक्ति को नष्ट करती है। रामदरश मिश्र, बलदेव वंशी आदि की कविताओं में कूडे-कचरे से उत्पन्न विभीषिकाएँ विद्यमान हैं।

रामदरश मिश्र की 'खाली प्लाट' नामक कविता में धरती कूडमग्ज होने का कारण बताते हैं। इसका प्रमुख कारण मानव है। विकास की त्वरित गति में चलनेवाले मानव यूज़ एण्ड थ्रो के फार्मुले को अपनाकर यत्र-तत्र कूडे-कचरे का ढेर को बढाते जा रहे हैं। आज के सुसभ्य मानव पैकिंग पदार्थ, सब्जी, फल-फूल, छिलके जैसे घरेलू अपशिष्ट पदार्थों को सड़क में फेंक दिया जाता है। सड़ गलाकर या जलाने से होनेवाले दुष्प्रभावों के बारे में नहीं सोचते हैं। इसके प्रति कवि अपनी कविता में व्यंग्य करते हैं। साथ ही रामदरश मिश्र पर्यावरण के किसी मसीहा का इंतज़ार कर रही है। रामदरश मिश्र से भिन्न है बलदेव वंशी की 'कूडा-कचरा और कोंपलें' नामक कविता। कवि ने अपनी कविता में कूडे-कचरे को मिट्टी में दबाने से होनेवाली समस्या को प्रस्तुत किया है। कवि की राय में यह कूडा कचरा वर्तमान मानव विकास की देन मात्र है। मानव के हाथों से चारों ओर फैलनेवाले कूडे-कचरे के बारे में कवि इस प्रकार बताते हैं -

"आँखों के सामने से बुहराकर
हटा दिए जाने पर भी, कूडा
कूडा ही रहता है। कचरा
कचरा ....।"[३१]

दोनों कवि समान ढंग से कूडे-कचरे या ठोस अपशिष्ट पदार्थों से होनेवाले खतरनाक प्रभावों को प्रस्तुत करते हैं। उनके विचारों में काफी साम्य हैं। वैश्विक स्तर पर लोगों के मन में कूडा-कचरे के प्रति अवबोध पैदा कराने में उनकी कविताएँ नितांत सक्षम हैं।

४.११. युद्ध से पारिस्थितिक विनाश

युद्ध के समय उपयोग करनेवाले बमों और रसायनों के कारण पारिस्थितिक समस्याओं में वृद्धि होती है। युद्ध से उत्पन्न पारिस्थितिक समस्या प्रकृति

प्रदत्त नहीं है, यह मानव प्रदत्त है। कहा जाता है कि आनेवाले युद्ध न्यूक्लियर विश्वयुद्ध होगा। इस युद्ध में पृथ्वी के जैवमण्डल को बचना मुश्किल हो जायेगा। युद्धों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न पारिस्थितिक विनाश का घातक परिणाम आज भी हम झेल रहे हैं। हिरोशिमा-नागसाकी हमारे सामने हैं। वैज्ञानिकों की राय में अफ्गानिस्तान और इराक युद्ध में सबसे अधिक बुरा प्रभाव वहाँ के पर्यावरण पर पड़ा है। भविष्य में भी यह युद्ध क्रम जारी रहा तो प्रदूषण की समस्या जटिल से जटिलतर होती जायेगी। शैल सक्सेना और ज्ञानेंद्रपति जैसे समकालीन कवियों ने युद्धों द्वारा घटित अनेक पर्यावरणीय समस्याओं की अभिव्यक्ति दी है।

१९९१ के खाडी युद्ध का आधार लेकर लिखी कविता है ज्ञानेंद्रपति की 'युद्ध के विरुद्ध'। इसमें कवि ने बमों मिसाइलों के प्रयोग से होनेवाले वायु, जल, थल, प्रदूषण की बात की है। उसी प्रकार की बात शैल सक्सेना की कविता में भी मिलती है। इन दोनों कवियों में साम्य अधिक देखने को मिलता है। दोनों कवियों ने युद्ध से होनेवाले अम्ल-वर्षा एवं जलवायु-परिवर्तन का संकेत समान रूप से दिया है। शैल सक्सेना की राय में वर्तमान मानव को प्रकृति को विकृत करने एवं उसके संतुलन को बिगाड़ने का वरदान ज्ञान-विज्ञान से मिला है। यह प्रदूषण प्रकृति के रहस्य खोलने के प्रयास का परिणाम है। युद्ध से होनेवाले पर्यावरणीय विनाश का संकेत करते हुए शैल सक्सेना ने 'विकल्प' में इस प्रकार लिखा है -

"युद्ध के कल्पनातीत सर्वनाशी परिणाम
देखे हैं, भोगे हैं सारी प्रकृति ने
जल-थल, चर-अचर, सजीव-निर्जीव
धरणी गगन, पवन, जल, पावक
मृत्तिका, पशु-पक्षी मानव सभी भोग रहे हैं।"[३२]

शैल सक्सेना ने युद्ध से प्रभावित जल-थल, चर-अचर, धरती-आकाश, मानव जैसे सभी तत्वों की संकट को विस्तार से बताते समय ज्ञानेंद्रपति 'युद्ध के विरुद्ध' में उन सबके विनाश का छोटा-सा संकेत दिया है। युद्ध में प्रयुक्त युरेनियम जैसी धातुएँ जल, थल, वायु के लिए अत्यंत खतरनाक है। हर प्राणी को मारने की क्षमता उन धातुओं विद्यमान है। ज्ञानेंद्रपति के शब्दों में -

"हर प्राणी शव है, हर इमारत खंडहर।"[३३]

अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग पृथ्वी को रेगिस्तान बन जाती है। इसके कारण दुनिया में भूखमरी, महामारी का तांडव नृत्य होगा। इसका संकेत शैल सक्सेना की कविता में उपलब्ध है। दोनों कवि अपनी कविताओं के माध्यम से पर्यावरण को विनाश करनेवाले बमों, मिसाइलों के प्रयोग को रोकने का आह्वान करते हैं। क्योंकि ये हथियार पर्यावरण को प्रदूषित कर जीव-जगत् एवं वनस्पति जगत् के लिए घातक सिद्ध होते हैं।

४.१२. जंगल-विनाश

जंगल एवं जंगलीय संपदा हमारी संस्कृति का आधार है। यह हमारे पर्यावरण के साथ-साथ अर्थ व्यवस्था का भी महत्वपूर्ण अंग है। पेड़-पौधों, वनस्पति तथा जीव-जंतुओं से आच्छादित क्षेत्र है - जंगल। यह पारिस्थितिक तंत्र को संतुलित बनाये रखने में हमारी मदद करता है। आज जंगल के स्थान पर कांक्रीट की इमारतें देख सकते हैं। चारों ओर कांक्रीट का जंगल ही उपलब्ध है। जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक वैज्ञानिक संचार प्रगति के कारण तेज़ी से जंगलों का विनाश हुआ है, साथ ही जंगल बर्बादी के कगार पर पहुँच चुका है। इसका दुष्प्रभाव पारिस्थितिकी पर भी पड़ रहा है। जिसके कारण वैश्विक तापन, जलवायु परिवर्तन जैसे पर्यावरणीय प्रकोप हम झेल रहे हैं। दिन-प्रतिदिन नष्ट हो रहे जंगल के प्रति चिंतित कवि हैं - श्रीकांत जोशी, कैलाश वाजपेयी। ये कवि अपनी कविताओं में जंगल के दुःख-दर्द को प्रस्तुत करते हैं।

कैलाश वाजपेयी की 'जंगल की आवाज़' नामक कविता में जंगल अपना आत्मकथ्य वर्तमान मानव से बताता है। इस जंगल की आवाज़ कवि मात्र सुनते हैं। साथ ही कवि अपनी कविता में जंगल के उपादान भी प्रस्तुत करते हैं। इस जंगल ने मानव को समृद्धि का रास्ता खोला है, फिर भी मानव अपनी सुखलोलुप तथा आर्थिक वृद्धि के लिए कुल्हाडियाँ या तेजवाले औज़ार से जंगल को काट रहे हैं। जंगल को काटने के प्रति दुःख-दर्द दोनों कवि अपनी कविता में प्रकट करते हैं।

'जंगल की आवाज़' में जंगल मानव से बताते हैं कि सभी जीव-जंतुओं एवं पेड़-पौधों को शरण देना मेरा कर्तव्य है। मेरी मृत्यु के साथ-साथ उनका नामोनिशान तक मिट जायेगा। मानव जंगल को काटकर स्वयं पारिस्थितिक समस्याएँ उत्पन्न कर रहे हैं-

"तेज़ धारवाले औज़ार से
तुम जो मेरा वध कर रहे हो
तुमको नहीं पता दरअसल
तुम आत्मघात कर रहे हो।"[३४]

यहाँ जंगल स्वयं अपने विनाश से उत्पन्न विभीषिका का अवबोध कराता है। वनवासियों, नागरिकों एवं जीव जंतुओं के लिए जीविका के अथाह भंडार है जंगल। इस अथाह भंडार को काटकर जाने अनजाने सबको विनाश की विपत्ति का निमंत्रण कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त श्रीकांत जोशी ने अपनी कविता में मानवीय संस्कृति की विकास-यात्रा का उल्लेख कर उसमें जंगल की महत्ता को प्रतिपादित किया है। अन्य कवियों के समान आक्रोश भावना इस कविता में नहीं है। कहा जाता है कि भारत की प्राचीन संस्कृति अरण्य संस्कृति है। सभ्यता एवं सांस्कृतिक विकास के अंधाधुंध दौड़ में मानव ने हरे-भरे जंगल की महत्ता भूल गया है। जनसंख्या विस्फोट ने विश्व के देशों के जंगलीय पर्यावरणीय तंत्र को भी बिगाड़ दिया है। इसके प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि श्रीकांत जोशी 'देखते हुए शिखर' में इस प्रकार लिखते हैं -

"अब मनुष्य के जंगलीपन से
बचा कर रखना है
जंगलों का हरापन।"[३५]

४.१२.१. पेड़-विनाश

पर्यावरणीय तंत्र के जैविक संघटकों में प्रमुख संघटक है पेड। सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण संसाधन भी है। औद्योगिक एवं व्यावसायिक आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए आज हम पेडों को अंधाधुंध काट रहे हैं। एक रिपोर्ट

के अनुसार ७० प्रजातियों के वृक्षों का लुप्त होने का अनुमान है। इसमें देवधर, एबोनी और महोगनी मुख्य वृक्ष है। ईंधन, अनाज, फल-फूल, मेवे एवं औषधियाँ आदि सब कुछ हमें वृक्षों से ही मिलता है। अंतरीक्ष को शुद्ध रखने के लिए वृक्षों का होना अनिवार्य है। वर्तमान मानव को वन-विनाश के कारण कई प्राकृतिक प्रकोपों का सामना करना पड़ रहा है। कहा जाता है कि पेड़ जलवायु के नियंत्रक हैं। यह पेड़ कार्बनडाइ ऑक्साइड को ग्रहण कर ऑक्सिजन को उत्सर्जित कर मानवीय जीवन को सुरक्षा प्रदान करते हैं। समकालीन कवि के दुःख व चिंता का विषय है हरे-भरे वृक्षों का अंधाधुंध कटाव। गंगाप्रसाद विमल, बलदेव वंशी, इन्दु जैन, हरीशचंद्रपाण्डे, गोविंद मिश्र, रामदरश मिश्र, राजकुमार कुम्भज और गणेश गायकवाड, जयप्रकाश 'धूमकेतु' आदि कवियों ने वन-विनाश से उत्पन्न संवेदना को अपनी-अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है।

कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में पेड़-विनाश से उत्पन्न कई समस्याओं को विभिन्न तरीके से प्रस्तुत किया है। सभी कवियों की मूल संवेदना एक है। फिर उनके सोच-विचार में वैषम्य देख सकते हैं। कहा जाता है कि एक पेड़ दस पुत्रों के समान है। फूल-फल देकर मानव को सहायता करनेवाले पेड़ में आज फूल नहीं, फल भी नहीं है। पेड़ की वर्तमान स्थिति का चित्रण 'पूरा जीवन' में इंदु जैन ने इस प्रकार किया है -

"पेड़ पक गया है / फूल नहीं आते
हवा में हिलती हैं / फिर भी पत्तियाँ
हर बार कुछ और झड़ती हुई।"[३६]

पेड़ विनाश ने किस तरह पक्षियों को प्रभावित किया है, यह भी उनकी कविता में मिलता है। इसका छोटा-सा संकेत राजकुमार कुम्भज की कविता 'यहाँ एक वृक्ष रहता था' में भी देख सकता है। पक्षियों का जीवन वृक्षों पर भी निर्भर है। दोनों का संबंध अटूट है। पेड़ विनाश से अत्यधिक दुःख चिड़िया को मात्र है। क्योंकि एक वृक्ष में असंख्य चिड़िया पायी जाती हैं। पेड़ पशु-पक्षियों और जीव-जंतुओं को आश्रय प्रदान करके पर्यावरणीय तंत्र को संतुलित बनाये रखने में सहायता प्रदान करते हैं। राजकुमार कुम्भज ने अपनी कविता में पेड़ विनाश से उत्पन्न चिड़िया के

दुःख को प्रस्तुत किया है। यह अन्य कविताओं में मिलना दुर्लभ है। कवि बताते हैं कि वृक्षों को काटकर बिल्डर ने बहुमंज़िला इमारत बनाया है। उस वृक्ष में एक पक्षी का छोटा-सा घर परिवार भी है। कवि के शब्दों में -

> "बेशकीमती बहुमंजिला कुछ ऐसे शानदार घर बने हैं
> और एक चिड़िया की घर-परिवार की हत्या से सने हैं।"[३७]

पेड़ विनाश से उत्पन्न पक्षियों की संकटग्रस्तता इन्दु जैन के समान बलदेव वंशी की कविताओं में देख सकती है। मानव एवं अन्य जीव जगत् संरक्षण वनों से होता है। पहाड़ी प्रदेशों में पेड़ों की विभिन्न प्रजातियाँ देखने को मिलता है। इन प्रदेशों के सौंदर्य पेड़ों पर भी निर्भर है। पेड़ के बिना के पहाडी प्रदेश के बारे में सोचना कवि गोविंद मिश्र के लिए अत्यंत मुश्किल है। कवि ने पहाडी प्रदेशों में होनेवाले पेड़ विनाश का संकेत दिया है। पेड़ों की सहनशीलता की अभिव्यक्ति केवल रामदरश मिश्र की कविता 'पेड़' में उपलब्ध है। मानव सभ्यता के अस्तित्व व उसके उत्तरोत्तर विकास के लिए पेड़ों की भूमिका महत्वपूर्ण है। जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण ने वृक्षों को संकटग्रस्त बनाया है। मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न पेड़ विनाश से दिनों दिन मरुस्थल बढ़ रहा है। इससे सभी वृक्षों की प्रजातियाँ लुप्त हो रही हैं। इसको बचाना वर्तमान युग के लिए अनिवार्य है। यह बात समान रूप से सभी कवि बताते हैं। वर्तमान युग में प्राकृतिक पेड़ मिलना मुश्किल हो गया है। क्योंकि उनके स्थान पर पर्यावरण को संकटग्रस्त करनेवाला इलक्ट्रिक खम्भा मात्र है। इस खम्भे के इलेक्ट्रोमेगनेटिक तरंगों में वायु, जल, थल को प्रदूषित करने की शक्ति विद्यमान है। इसको कार्बनडाइ ऑक्साइड सोखने की शक्ति नहीं है। एक वृक्ष कई प्रकार की विषैली गैसों का अवशोषण करता है। इस पर सचेत एकमात्र कवि हैं हरीशचंद्र पाण्डे। उनका यह सोच अन्य कवियों के बीच अपनी एक अलग पहचान बनाये रखता है।

गंगाप्रसाद विमल एवं गणेशगायकवाड ने अपनी-अपनी कविताओं में वृक्षों की महत्ता एवं सहनशीलता को प्रस्तुत किया है। गंगाप्रसाद विमल की राय में वृक्ष को काटनेवाला व्यक्ति को मन नहीं है -

> "अपाहिज / उन्हें काटते हैं लोग।"[३८]

वृक्षों और मनुष्यों का संबंध चोली-दामन के समान है। दिन में वृक्ष ऑक्सिजन छोड़कर कार्बनडाइ ऑक्साइड ग्रहण करते हैं। रात में यह क्रम उल्ट जाता है। इसका संकेत केवल गणेश गायकवाड की कविता में मिलता है।

औद्योगिक प्रगति के नाम पर वृक्षों को काटना अपनी पाँव पर कुल्हाडी मारने के समान है। वर्तमान में वन संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ी है। चमोली का चिपको आंदोलन, केरल का साइलैंडवाली आंदोलन आदि इसका परिणाम है। श्रीमती गौरादेवी द्वारा प्रारंभ किया गया चिपको आंदोलन को सुन्दरलाल बहुगुणा ने राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठापित करने का प्रयास किया है। इस प्रकार समकालीन कवि अपनी कविताओं के माध्यम से पेड़ों के कटाव से रोकने के लिए आंदोलन रत हैं। वन को विनाश कर हम स्वयं अपने विनाश के आमंत्रण कर रहे हैं। इसलिए कवियों ने अपनी कविताओं में पेड़ों के संरक्षण का संदेश दिया है।

४.१२.२. पक्षी-विनाश

पशु-पक्षी जगत् एवं मानव जीवन का संबंध अटूट है। पशु-पक्षियों ने अपने छोटे-छोटे क्रियाकलापों से पर्यावरणीय संतुलन को बनाये रखते हैं। साथ ही मानव जीवन में आनंदमय क्षण प्रदान करते हैं। ये पशु-पक्षी आर्थिक और मनोरंजन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पृथ्वी के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग पशु-पक्षियाँ एवं उनकी प्रजातियाँ पायी जाती हैं। जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक-वैज्ञानिक प्रगति, वन-विनाश, पक्षियों का अवैधानिक शिकार, जलवायु-परिवर्तन, वैश्विक तापन और खेतों में ज़हरीली रसायनों का प्रयोग आदि मानव की स्वार्थ पूर्ति क्रियाकलापों के कारण पशु-पक्षियों की कई जातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं, वर्तमान में शेष अन्य पशु-पक्षी विलुप्ति के कगार पर हैं। पशु-पक्षी के बिना के पर्यावरण के बारे में सोचना कल्पनातीत है। इस पर्यावरणीय तंत्र में छोटे-छोटे पक्षियों को भी अपना-अपना महत्व है। पक्षियों के हृदय के धड़कन मानव से प्रति मिनिट अधिक होता है। इसलिए मानव से पहले पक्षी पर्यावरण प्रदूषण का ग्रहण करते हैं। ये पक्षी सड़ी-गली वस्तुओं को खा-पीकर पर्यावरण को साफ करते हैं। उनकी जीवन शैली प्रदूषण को रोकने में सहायक है। मानवता को सहायता करनेवाले पशु-पक्षियाँ मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न

पारिस्थितिक असंतुलन के कारण दिन-प्रतिदिन कम हो रहा है। इसका संकेत राजेंद्र नागदेव, लीलाधर मंडलोई, केदारनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, अशोक वाजपेयी, हरीशचंद्र पाण्डे, इन्दु जैन, बद्रीनारायण, बलदेव वंशी, राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रपति और राज्यवर्द्धन की कविताओं में मिलता है।

राजेंद्र नागदेव और लीलाधर मंडलोई जैसे कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में गौरैया विनाश के प्रति संवेदना प्रकट की है। यह चिड़िया फसलों को नष्ट करनेवाली कीडों-मकडों को खाकर पारिस्थितिक-संतुलन को कायम रखने के साथ-साथ फसलों का संरक्षण करती है। दोनों कवियों ने समान रूप से गौरैया के वर्तमान और भविष्य को प्रस्तुत किया है। इन दोनों कवियों की राय में इसके विनाश के प्रमुख कारण औद्योगिक क्रांति एवं वनविनाश हैं। फिर भी इन विचारों के अलावा अन्य विचारों में दोनों कविताओं में वैषम्य देख सकते हैं। आज के वैज्ञानिक नष्ट हो रही जीनों के माध्यम से नये-नये गौरैया रचने में व्यस्त हैं। इसका संकेत राजेंद्र नागदेव की कविता में ही मिलता है। पर लीलाधर मंडलोई प्राकृतिक गौरैया की आवाज़ सुनने के लिए व्याकुल है -

"वे उड़ गयी हैं या
खो गयीं कहीं हवाओं में
कहना मुश्किल
बस कभी-कभी
आती है उनकी भयभीत आवाज़ जब
हम याद करते हैं उन्हें।"[३९]

ऐसा संकेत राजेंद्र नागदेव की कविता 'गौरैया आती नहीं अब' में मिलना मुश्किल है। दोनों कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में गौरैया की महत्ता को प्रस्तुत किया है। यहाँ लीलाधर मंडलोई की अपेक्षा राजेंद्र नागदेव की कविता में अधिक गहराई एवं गांभीर्य देखने को मिलता है। मोबाइल टावर के इलेक्ट्रोमैगनेटिक तरंगों से गौरैया जैसे पक्षियों की प्रजनन क्षमता लगातार कम होती जा रही है। इसका संकेत लीलाधर मंडलोई के अलावा अन्य कवियों में उपलब्ध नहीं है। राजेश जोशी ने 'विलुप्त प्रजातियाँ' नामक कविता में पशु-पक्षी विलुप्त होने के प्रति आशंका प्रकट की

है। वे बताते हैं कि पशु-पक्षी के समान मानव का अस्तित्व भी इस दुनिया से मिट जायेगा। परिंदे भी हमारे पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। वर्तमान समय में पशु-पक्षियों एवं मानव के बीच के संबंधों में आये बदलाव को देखकर कवि 'टेलिफोन' में बताते हैं -

"परिंदों के पास कोई मोबाइल होगा
इसकी कोई उम्मीद नहीं
जिनसे बतियाने की इच्छा होती है
उनके पास तक जाना पड़ता है हर बार।"[४०]

परिंदों की अस्तित्व विनाश की बात करना राजेश जोशी की खासियत है। आज के समय परिंदों की कई प्रजातियाँ लुप्त हो चुकी हैं। इसकी कमी पर्यावरणीय असंतुलन को प्रभावित करती है। वन-विनाश भी पक्षियों की विलुप्ति का कारण बन जाता है। इससे उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत इन्दु जैन, बलदेव वंशी और हरीशचंद्र पाण्डे की कविताओं में मिलता है। क्योंकि पक्षियों का एकमात्र आश्रय स्थल है पेड़। पेडों का कटाव पक्षियों को भी मारने के समान है। रामदरश मिश्र अपनी कविताओं में नगरीकरण, औद्योगिकीकरण एवं वन-विनाश से उत्पन्न कोयल-विनाश की बात बताते हैं। उनकी कविताएँ कोयल पर ही केंद्रित है। दिन-प्रतिदिन हो रहे बढ़ते प्रदूषण पशु-पक्षियों को सहना एकदम मुश्किल हो गया है। मानव से पहले पशु-पक्षी भी इनके मार से त्रस्त हो जाते हैं। अन्य कवियों ने वन-विनाश से उत्पन्न पक्षी विनाश की बात बताते समय केदारनाथ सिंह की दृष्टि रासायनिक-औद्योगिक प्रदूषण से उत्पन्न पक्षी विनाश पर केंद्रित है। ज्ञानेंद्रपति और राज्यवर्द्धन जैसे कवियों की कविताओं में जलवायु-परिवर्तन के कारण साइबेरियाई सारस नष्ट होने का संकेत देख सकते हैं। यह साइबेरियाई सारस नष्ट होने के प्रति दुःख प्रकट करते हुए राज्यवर्द्धन ने 'खो जाएगा एक दिन धरती का संगीत' में इस प्रकार लिखा है -

"अब / भरतपुर में
साइबेरियाई सारस नहीं आते।"[४१]

इस प्रकार की सूचना समान रूप से ज्ञानेंद्रपति की कविता में मिलती है। यह सारस एक यायावरी पक्षी है। ज्ञानेंद्रपति बताते हैं कि अवैधानिक शिकार भी

सारस पक्षी नष्ट हो जाने का कारण बन जाता है। ज्ञानेंद्रपति और राज्यवर्द्धन की कविताओं में साम्य देख सकते हैं। इसकी विलुप्ति की बात राज्यवर्द्धन के अलावा ज्ञानेंद्रपति के 'एक शोकाकुल स्वागत' में अधिक विस्तार से बताते हैं। दिन-प्रतिदिन बढ़ रहे प्रदूषण के कारण एक ओर सारस विलुप्ति के कगार पर है दूसरी ओर भारत में आये सारसों को स्वागत करना कवि को मुश्किल हो गया है -

"साइबेरियाई सारस
भारत-भू पर / उतरे हैं
भरतपुर में / उनका किन शब्दों में करें शोकाकुल स्वागत।"[४२]

कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में पशु-पक्षियों की प्रजातियाँ विलुप्त होने का संकेत दिया है। एक कवि साइबेरियाई सारस नष्ट होने की बात बताते समय दूसरे कवि गौरैया, कोयल जैसे पशु-पक्षियों की विभिन्न प्रजातियाँ नष्ट होने के प्रति आशंका प्रकट की है। इसलिए इन कवियों के सोच-विचार में साम्य अधिक और वैषम्य कम देख सकते हैं।

४.१२.३. वन्य जीवि-विनाश

जैव विविधता की दृष्टि से महत्वपूर्ण देश है भारत। एक अनुमान के अनुसार कहा जाता है कि हमारे देश में ८० हज़ार प्रकार की वन्य जीवि प्रजातियाँ हैं। जनसंख्या विस्फोट, औद्योगिक वैज्ञानिक क्रांति, जंगल विनाश, अवैधानिक शिकार और अन्य मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न पर्यावरणीय असंतुलन आदि के कारण हमारे देश की दुर्लभ प्रजातियाँ धीरे-धीरे विलुप्त हो रही हैं। भविष्य में इस भू-प्रदेश में सभी वन्य जंतुओं का नामोनिशान तक मिट जायेगा। आज भारत के जंगलों में पाये जानेवाले शेर, चीते, तेंदुआ, हाथी, कछुआ, भालू जैसे जंतु भी संकटग्रस्त विलुप्तप्राय प्राणियों की सूची में आ गये हैं। इसका संरक्षण वर्तमान एवं भावी पीढी के लिए अनिवार्य है। ज्ञानेंद्रपति, केदारनाथ सिंह और हरीशचंद्र पाण्डे जैसे कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में वन्य जीवियों के दुःख-दर्द को प्रस्तुत किया है।

गजदंतस्करी और उसके कारण होनेवाले हाथियों का उन्मूलन रोकने के लिए केन्या के राष्ट्रपति ने हाथी दाँत एक विशाल ढेर में आग लगा दिया है।

इसके आधार पर लिखी कविता है ज्ञानेंद्रपति की 'गजदन्तधूमगज'। एक अनुमान से कहा जाता है कि वन्य जीवियों के विलुप्त होने की दर पिछले १०० वर्षों से अधिक तीव्र गति से बढ़ रही है। आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण संसाधन है हाथी और उसके दाँत। वर्तमान मानव ने त्योहारों और सर्कसों में हाथी को अधिक से अधिक पीडित करने के साथ-साथ उनके दाँत को पैसा कमाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में बेचते हैं। यह भी हाथी विनाश का कारण बन जाते हैं। आज विलुप्त हो रही हाथियों के प्रजातियों के संरक्षण के लिए अनेक अभयारण्यों की स्थापना की है। इसके अतिरिक्त ज्ञानेंद्रपति ने 'नजातदिहन्दा' में कछुआ विनाश एवं 'टेडी बियर में बचे हुए भालू' नामक कविता में भालू विनाश का संकेत दिया है। भालू और कछुआ दोनों आर्थिक और पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण संसाधन हैं। मानव आजकल अपनी आवश्यक दवाओं का निर्माण करने के लिए इन दोनों को बाज़ार में बेचते हैं। कछुआ विनाश के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए कवि ने इस प्रकार लिखा है -

> "यौनेत्तेजना पैदा करनेवाली दवाएँ, वियाग्रा-सरीखी
> (पश्चिमी च्यवनप्राश कोई - लेकिन हिंसक)
> इसलिए एक कछुवा वहाँ
> चालीस से सौ डोलर में बिकता है
> सख्त कचकड़े के भीतर कोमल मांसवाला कछुआ
> जो दीर्घायु न हो पाये तो भी किसी को दीर्घायु बनाए।"[४३]

अपने माँस से कछुआ किसी को दीर्घायु बनाते हैं। इसके संरक्षण के लिए सरकार ने कछुआ परियोजना का शुभारंभ किया है। इसकी विलुप्ति से पर्यावरणीय एवं आर्थिक समृद्धि के लिए होनेवाले इनके योगदान के बारे में युवापीढ़ी अनजान होती है। हाथी, कछुआ, भालू विनाश से संबंधित उनकी कविताओं में अधिक आक्रोश की भावना देख सकते हैं। औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण में जंगलों को साफ कर वहाँ मल्टी नैशनल कम्पनियों का जाल बिछाया है। यह भी वन्य-जीवि विनाश का कारण बन जाता है। इसलिए केदारनाथ सिंह ने 'बाघ' नामक कविता में जंगलों के सारे के सारे बाघ नष्ट होने के प्रति आशंका व्यक्त की है। बाघ के खालों को विदेशों में निर्यात करने के लिए अत्यंत क्रूर ढंग से मार दिया जाता है। इसके अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन से भी बाघों की संख्या तेज़ी से कम हो रही है। मानवीय

क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप आये बाघ विनाश की दुःखद अभिव्यक्ति उनकी कविताओं मिलती है। विश्व के अलग-अलग जंगलों में शेर के विभिन्न प्रजातियाँ पाये जाती हैं। पर्यावरणीय असंतुलन के कारण उनकी संख्या में निरंतर गिरावट हो रही है। हरीशचंद्र पाण्डे अपनी कविता 'शेर बचाओ (अभियान)' में शेर नष्ट होने के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है। जंगलों के राजा शेर की विलुप्ति मानव-विकास एवं पर्यावरणीय तंत्र के लिए अत्यंत खतरा है। क्योंकि उनकी कमी से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

ज्ञानेंद्रपति, केदारनाथ सिंह, हरीशचंद्र पाण्डे जैसे कवियों ने हाथी, कछुआ, भालू, बाघ, शेर जैसे विभिन्न वन्य जीवि विनाश का संकेत दिया है। अलग-अलग वन्य-जीवि होने के बावजूद भी इसमें साम्य के स्तर अधिक देख सकते हैं।

४.१३. पहाड़-विनाश

प्रकृति का खनिज भंडार है पहाड। देश के खनिज का प्रचुर भंडार होने के कारण वह देश के आर्थिक, सामाजिक एवं व्यापार संबंधी विकास के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पर्वत का ढाल तीव्र एवं शिखर संकुचित क्षेत्रवाला होता है। जिनकी ऊँचाई धरातल से सामान्यतया ६०० मीटर से अधिक होती है। यह पर्वत हमारे सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान है। साथ ही संपूर्ण पारिस्थितिक संतुलन को नियंत्रित करता है। विकास के नाम पर पहाडों व टीलों का नाश आज आसन्न है। ज्ञानेंद्रपति, ऋतुराज, गोविंदमिश्र और रमेश मयंक आदि कवियों ने पर्वतों की वर्तमान संघर्षगाथा प्रस्तुत की है।

ज्ञानेंद्रपति अपनी कविता 'झारखण्ड के पहाडों का अरण्यरोदन' में झारखण्ड एवं छोटा नागपुर के पहाडों की दुख-व्यथा प्रस्तुत करने के साथ-साथ भारत की विंध्याचल-अरावली पहाडी श्रृंखलाओं की महत्ता का भी प्रतिपादन करते हैं। दुनिया की प्राचीनतम अरावली पर्वत श्रृंखलाओं पर होनेवाले खनन के महत्व का दायरा असीमित हैं। आज मानव इनके भंडार का भी शोषण कर रहे हैं। इसके कारण वहाँ का पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ गया है। साथ ही वहाँ के एक बडी आबादी के

जीने का अधिकार खतरे में पड़ गया है। इसके प्रति ज्ञानेंद्रपति और रमेश मयंक के विचारों में समानता देख सकते हैं। रमेश मयंक ने अपनी कविता 'अरावली से अलकनंदा तक' में अरावली की नंगी पहाडियों का दुख व्यथा का उल्लेख किया है। ज्ञानेंद्रपति ने अपनी कविता में विस्तृत रूप से भारत की सभी पहाडियों की वर्तमान दशा को प्रतिपादित किया है। ऋतुराज और गोविंदमिश्र ने पहाड़-विनाश से उत्पन्न दुष्परिणामों का संकेत दिया है। दोनों कवियों ने अपनी कविता में पहाडों के नामोल्लेख नहीं किया है। चारों कवि पर्वत श्रृंखलाओं के बीच के लकडियों को काटकर बेचने का विरोध करते हैं। इस विनाश ने अनेक जीवनदायी नदियों की मृत्यु को आसन्न कर दिया है। इसका संकेत ऋतुराज की कविता 'संघर्ष' में देखते हैं -

"अब इन नंगे पहाडों से झरने नहीं गिरते हैं।"[४४]

पहाड विनाश के कारण नदियाँ सूख गयी हैं। इसके कारण लोग वहाँ से भाग रहे हैं। गोविंद मिश्र 'पहाडियाँ' नामक कविता में इसके विनाश के साथ होनेवाले विभिन्न समुदायों के लोगों की धार्मिक संस्कृति व धरोहरों के विनाश की भी सूचना देते हैं। अन्य कवियों में भी इस विभीषिका का छोटा-सा संकेत देख सकते हैं।पर्वत प्रांत दुर्लभ वनस्पतियों एवं जीव-जंतुओं की विविधता का अनुपम उदाहरण है। असंख्य लोगों के जीवन यापन की आर्थिक नीति का आधार भी वहाँ के वनोत्पाद हैं। पहाड़ की संकटग्रस्तता को गोविंद मिश्र ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

"अब न वृक्ष संपदा
न शांति, न शीतलता।"[४५]

पहाड़ विनाश के प्रति कवियों के विचारों में साम्य ज़्यादा देख सकते हैं। कवियों की राय में पहाड़ विनाश का अर्थ, संस्कृति की मृत्यु भी है। कवि पर्वतीय संपदाओं पर होनेवाले औपनिवेशिक एवं साम्राज्यवादी शोषण का विरोध करते हैं।

४.१४. बाढ़ की समस्या

विशाल भू-स्तर जल से भर जाने की स्थिति है - बाढ़। हर साल घटित हो रही इस प्राकृतिक आपदा में आज प्राकृतिक एवं मानवीय क्रियाकलापों का सम्मिलित योगदान देख सकते हैं। विकास के नाम पर होनेवाले वृक्षों की अंधाधुंध

कटाई से देश में प्रतिवर्ष १५ लाख हैक्टर क्षेत्रों में पेडों का विनाश हो रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप प्रति मिनिट एक हैक्टर भूमि बंजर हो रही है। यह वन विनाश पृथ्वी की तापमान को बढाकर बाढ़ की स्थिति पैदा करती है। साथ ही कई समुद्रतटीय क्षेत्र जलमग्न हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त अत्यधिक वर्षा, बाँध टूटन आदि अनेक कारणों से भी बाढ़ की स्थिति पैदा होती है। मानव पृथ्वी की जीवनदायी व्यवस्था में व्यवधान उपस्थित कर प्राकृतिक आपदाओं से स्वयं अपनी मौत को निमंत्रण दे रहे हैं। बिहार, उत्तरप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात, उडीसा, राजस्थान, तमिलनाडू, हरियाणा, पंजाब, असम और मध्यप्रदेश आदि क्षेत्र हर साल बाढ़ से प्रभावित क्षेत्र हैं। कहा जाता है कि नदियों का देश है बंगलादेश। वहाँ के लोगों को प्रतिवर्ष अतिभयंकर बाढ़ का सामना करना पड़ता है। गंगा, यमुना, घाघरा, गंडक आदि नदियों का बाढ़ अपने प्रदेश के अलावा अन्य बहुत बडे क्षेत्र में फैलकर जन-धन का विनाश करता है। यह बाढ़ हमारे कृषि उत्पादन में प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर आर्थिक व्यवस्था को बिगाड़ता है। बाढ़ से उत्पन्न विभीषिकाओं की अभिव्यक्ति सूरज प्रसाद पचौरी, शैल रस्तोगी, अनिता निहालनी, मदन कश्यप और बोधिसत्व की कविताओं में मिलती है।

सभी कवि अपने-अपने प्रदेश में हुए बाढ़ से उत्पन्न जन-धन की हानि को प्रस्तुत करते हैं। शैल रस्तोगी ताप्ती नदी में हुए बाढ़ को प्रस्तुत करती हैं तो सूरज प्रसाद पचौरी मध्यप्रदेश में हुए बाढ़ एवं बोधिसत्व बिहार की स्थानीय नदी पलामू में हुए बाढ़ को प्रस्तुत करते हैं। उनके विचारों में वैषम्य के अलावा समानताएँ अधिक दिखाई पड़ती हैं। ताप्ती नदी में हुए बाढ़ के ताण्डव नृत्य का वर्णन शैल रस्तोगी ने इस प्रकार किया है -

> "कल नदी में बाढ आई,
> बह गये गाँव, मकान, झोंपडे
> गाय, खेत, खलिहान, हाट बाज़ार।
> विनाश का ताण्डव चलता रहा दिन रात।"[४६]

इस प्रकार गाँव के नाश की बात समान रूप से सूरज प्रसाद पचौरी और बोधिसत्व की कविता में मिलती है। हर साल जलधारा के क्षेत्रों में आनेवाले बाढ़ों की आवृत्ति में निरंतर वृद्धि हो रही है। शैल रस्तोगी के समान सूरज प्रसाद पचौरी ने

२००५ में मध्यप्रदेश में घटित बाढ़ विनाश का संकेत करते हुए 'बाढ़ - २००५' में इस प्रकार लिखा है -

"ऐसी बाढ़ कभी न आई
तीस जून से बरसा पानी
आई पाँच जुलाई
घर-द्वार बाढ़ में डूबे
वृक्षों पर जान बचाई।"[४७]

इसके अतिरिक्त शैल रस्तोगी, मदन कश्यप और सूरज प्रसाद पचौरी ने अपनी कविताओं में बाढ़ के बाद राहत के नाम पर चलायी जानेवाली राजनीति पर तीखा व्यंग्य किया है। तीनों कवियों की राय में बाढ़ की समस्या से अधिक भयंकर है राहत के नाम पर होनेवाली वर्तमान राजनीति। बाढ़ से पीडित लोगों को भूख से भी लड़ना पड़ता है। मदन कश्यप की कविता 'राहत पैकेट' में भूख से त्रस्त, हेलिकॉप्टर से गिरनेवाले भोज्य सामग्री के लिए दौड़नेवाले लोगों की दयनीयावस्था देख सकते हैं। उनकी आँखों में होनेवाली वेदना को व्यक्त करने के लिए कवि के पास कोई शब्द नहीं है। उतना तीव्र है कविता में प्रस्तुत बूढे दंपति का दुख।

भारत में तो अधिकांश बाढें वनोन्मूलन का सीधा परिणाम है। बाढ़ से आनेवाले सालों में खाद्यान्न की कमी होगी। लेकिन वर्तमान कवियों ने इसको नियंत्रण करने के लिए बाढ़ से उत्पन्न समस्याओं को विभिन्न ढंग से अपनी-अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया है। बाढ़ पर केंद्रित सभी कविताएँ कवियों के अनुभव के आधार पर लिखी गयी है। एक संवेदनशील कवि के लिए बाढ़ से उत्पन्न विनाश एवं जनता के दुख-दर्द को सहना मुश्किल है।

४.१५. अकाल, सूखे की समस्या

वर्षा के अभाव में घटित प्राकृतिक आपदा है सूखा। मौसम विज्ञान संबंधी प्रक्रिया सूखे के प्रमुख कारण अतिचराई, वन-विनाश एवं खनन मानती है। मानसूनी हवाओं का बदलाव भी सूखे का कारण बन जाता है। आज विश्व के कई

भाग सूखा ग्रस्त है। विशेषज्ञों के मत में इस आपदा के नियंत्रण करने का एकमात्र उपाय है वन-संरक्षण। विकास के नाम पर होनेवाले वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से भारत में प्रतिवर्ष १५ लाख हेक्टर क्षेत्र का वन नष्ट हो रहा है। जिससे उत्पन्न मरुस्थली करण की बढोत्तरी सूखे की समस्या को गंभीर बनाती है। सूखे पड़ना आज एक आम बात हो गयी है क्योंकि पिछले पचास वर्षों से भारत चौदह बार सूखे की विभीषिका झेल चुका है। इनमें से १९८७, २००२ एवं २००४ का सूखा सबसे भीषण रहा जिसका असर देश के करीब आधे हिस्से पर पडा, जिसका प्रमुख कारण एक ओर जलवायु परिवर्तन है। दक्षिण-पश्चिम राज्यों में अधिक वर्षा होगी तो उस समय उत्तरी एवं मध्य भारत में सूखे की स्थिति पैदा होगी। इससे उत्पन्न विभीषिकाओ का संकेत ऋतुराज, एकांत श्रीवास्तव और लीलाधर मंडलोई की कविताओं में मिलता है।

एकांत श्रीवास्तव और ऋतुराज की कविताओं के शीर्षक में समानता देख सकते हैं। दोनों कवियों की कविताओं का नाम है 'सूखा'। इससे उत्पन्न विभीषिका नाम से भी स्पष्ट है। एकांत श्रीवास्तव की राय में प्राकृतिक एवं मानवीय क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप घटित इस सूखे में विश्व की अर्थ व्यवस्था एवं जैव-तंत्र को बदलने की शक्ति निहित है। ये तीनों कवि सूखे से उत्पन्न अपार धन-जन की क्षति का संकेत दिया है। क्योंकि इससे संपूर्ण अर्थ व्यवस्था चरमरा जाती है, जन जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। हर साल राजस्थान में इस सूखे का सर्वाधिक प्रभाव देख सकते हैं। इस सूखे ने अधिकांश लोगों को भूख के कगार पर खडा कर दिया है। इसका बुरा प्रभाव फसल एवं पशुओं के उत्पादन में भी देख सकते हैं। लीलाधर मंडलोई और ऋतुराज ने अपनी कविता में सूखे से प्रभावित भूखा-भटका पशु के दुख-दर्द को प्रस्तुत किया है। लंबे समय तक सूखे की स्थिति को अकाल कहलाता है। एकांत श्रीवास्तव और ऋतुराज की कविता में अकाल से पीडित गाँव के दुख-दर्द का संकेत भी देख सकते हैं। कुछ सूखा वर्ष भर का भी पड़ सकता है। इससे आदमी तो कुछ भी कर लेगा, लेकिन पशु अपनी चारा के लिए क्या करेंगे ? इसके बारे में लीलाधर मंडलोई और ऋतुराज सोचते हैं। वनस्पतियों का महत्व अकाल के समय केवल भूखा-भटका पशु मात्र ही जानते हैं क्योंकि सूखे से पशु भी पीडित हैं। इसका संकेत करते हुए लीलाधर मंडलोई 'उनका होना न होना' में इस प्रकार लिखते हैं -

“भूखा भटका पशु सोचता
कुछ वनस्पतियाँ हैं कि चिलकती दीखतीं
दूर बहुत कि बची शायद कहीं
इतनी ज़रूर कि वह जान सके उनका होना न होना।”[४८]

ऋतुराज की कविता में हरियाली वनस्पति के लिए पशु भी प्रतिक्षारत् है। कवि की राय में यह सूखा मानवीय कारकों और जलवायु की दुर्नीति है। उस समय पशु का जीवन आदमी के घास लाने पर भी निर्भर है। घास लाने में गये मालिक के पाँवों का थकान पशु भी समझते हैं। पशु के दुख-दर्द को कवि ऋतुराज ने ‘सूखा’ में इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

“चाँदनी रात में खोजेगा हरियाली
और पशु हैं कि उनकी मित्रता का बोझ डोते
उसके लौट आने की प्रतीक्षा करते रहेंगे।”[४९]

यहाँ तीनों कवियों ने सूखे से त्रस्त आदमी के साथ साथ पशुओं की दयनीयावस्था को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। समस्त पर्यावरणीय तत्वों में समान रूप से प्रभावित करनेवाला आपदा है सूखा। ऋतुराज राजस्थान निवासी है, इसलिए उन्होंने अपनी कविता में आँखों से देखा जो अनुभव वही रूप में प्रस्तुत किया है। एकांत श्रीवास्तव का गाँव भी एक साल सूखे से पीडित था। इसलिए इन दोनों कविताओं में सूखे की विभीषिका प्रस्तुत करने की तीव्रता बहुत अधिक गंभीर है। लीलाधर मंडलोई की कविता में अन्य पर्यावरणीय समस्याओं को प्रस्तुत करने के साथ-साथ सूखे की विभीषिका का छोटा-सा संकेत मात्र ही दिया है। भुक्तभोगी होने के कारण एकांत श्रीवास्तव और ऋतुराज के विषय प्रस्तुतीकरण में कई समानताएँ देख सकते हैं।

४.१६. तूफान की समस्या

वायु मंडल में ऊष्मा बढ़ने या कम होने से घटित पवन विक्षेप है तूफान। यह तूफान प्रायः उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में आता है। जिन्हें हरिकेन या टायफून

भी कहते हैं। बहुत विनाशकारी प्राकृतिक आपदा है तूफान। इस आपदा से प्रभावित क्षेत्रों में हवा और तापमान की मात्रा में अचानक परिवर्तन हो जाता है। वर्तमान युग में इसका नियंत्रण अनिवार्य है। क्योंकि कहा जाता है कि तूफानों में वायु की गति २५ से २५० किलोमीटर तक होती है। प्राकृतिक आपदा प्रबंधीय तरीके से ही तूफान से होनेवाले नुक्सान को कम कर सकते हैं। ज्ञानेंद्रपति और मदन कश्यप जैसे कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं मे ंतूफान से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत दिया है।

तूफान का प्रमुख कारण वन-विनाश है। ज्ञानेंद्रपति की 'वसंत विध्वंस' और मदन कश्यप की 'तूफान ... भूकम्प .. ज़िंदगी' में उडीसा में घटित चक्रवात का उल्लेख मिलता है। इस तूफान से उत्पन्न विनाश के बारे में ज्ञानेंद्रपति बताते हैं कि-

"मवेशी और मानुष मारता
मिदनापुर की मेदिनी को मरघट बनाता
समुद्रतटीय उडीसा के गाँवों को उधेड़ता।"[५०]

१७.१८ अक्तूबर एवं २९ अक्तूबर १९९९ को उडीसा में दो बार आये चक्रवात ने वहाँ के पारिस्थितिक तंत्र को मरघट बनाया। वर्षा और तूफान को लानेवाली चक्रवात अत्यधिक विनाशकारी है। उडीसा में घटित तूफान की गति प्रति घण्डे में २७० से ३०० किलोमीटर है। यह चक्रवातीय तूफान ने उडीसा के प्रायद्वीप तट के निकट लैण्ड-फ़ॉल व्वाइन्ट को अपना निशाना बनाया है। इस तूफान के नुकसान को उडीसा में हम आज भी देख सकते हैं। कहा जाता है कि यह तूफान १.९ करोड लोगों बेघर कर दिया है। कवि मदन कश्यप बताते हैं कि इस तूफान से होनेवाली मौत अत्यंत भयावह है। उड़ीसा में घटित चक्रवात के भीषण रूप को कवि ने 'तूफान ... भूकम्प .. ज़िंदगी' में इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

"लेकिन बेहद तेज़ हवा और मूसलाधार बारिश
जब चक्रवात का रूप ले लेती है
तो उससे भयावह मौत की कल्पना नहीं की जा सकती।"[५१]

ज्ञानेंद्रपति अपनी कविता में समुद्र तटीय उडीसा के गाँव विनाश की बात बताते हैं तो मदन कश्यप वहाँ के लोगों की मृत्यु का उल्लेख करते हैं।

ज्ञानेंद्रपति की कविता में इस चक्रवात के विनाश का छोटा-सा संकेत मात्र ही है। इसके बाद की स्थिति का उल्लेख उपलब्ध नहीं है। लेकिन मदन कश्यप ने विनाश के बाद के राहत के नाम पर होनेवाले अत्याचारों पर भी व्यंग्य किया है। दोनों कवियों के विचारों की मूल संवेदना एक है, फिर भी विषय प्रस्तुतीकरण में एक छोटा-सा अंतर देख सकते हैं। दोनों कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं के माध्यम से तूफान जैसे प्राकृतिक आपदाएँ आने के पहले ही किसी उचित तरीके से इसे नियंत्रित करने की आवश्यकता का संकेत दिया है।

४.१७. भूकम्प की समस्या

भूकम्प एक प्राकृतिक आपदा है। भू-पटल में होनेवाले गुरुत्वाकर्षण के असंतुलन की दशा को भूकम्प कहते हैं। भूगर्भ में धरती के परतों के अपने स्थान से विस्थापित होने के कारण यह समस्या पैदा होती है। प्राचीन काल के लोग इस भूकम्प को देवी कोप मानते हैं, लेकिन वर्तमान में प्राकृतिक एवं मानवीय क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप घटित प्राकृतिक आपदा है। भूकम्प की विनाश लीला हम हर साल विश्व की किसी न किसी राज्य में देख सकते हैं। जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बीहार, पश्चिमी बंगाल, गुजरात आदि भूकम्प से पीड़ित क्षेत्र हैं। यह आपदा संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को बदल देता है। इससे उत्पन्न असंतुलन मानव सहित सभी जीव-जंतुओं के लिए अत्यंत घातक है। भूकम्प की घातक विभीषिकाओं की अभिव्यक्ति बलदेव वंशी, नंद चतुर्वेदी और मदन कश्यप की कविताओं में मिलती है।

तीनों कवियों के लिए भूकम्प को केंद्र बनाकर कविता लिखने की प्रेरणा गुजरात में घटित भूकम्प से मिली है। २६ जनवरी २००० में कच्छ से शुरू होकर गुजरात में आये भूकम्प ने भयंकर तबाही मचाई, साथ ही इस प्राकृतिक आपदा में हज़ारों की जान गयी व भयंकर हानि हुई। मदन कश्यप बताते हैं कि इस घटना से समूची पारिस्थितिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी है। साथ ही कवि वहाँ के सामाजिक कार्यकर्ता की दुरवस्था पर क्षोभ व्यक्त करते हैं। इसका संकेत बलदेव वंशी की 'लगातार झटकों के बीच' नामक कविता में मिलता है। भूकम्प के बाद के मानव व पर्यावरणीय संकट को नन्द चतुर्वेदी अपनी कविता 'भूकम्प के बाद' में प्रस्तुत किया

है। कहा जाता है कि विनाशकारी प्रभावों का जनक है भूकम्प। यह आपदा जन-धन, नदी, ज़मीन जैसे सभी तत्वों का विध्वंस करता है। इमारत नष्ट होने से उत्पन्न संकट तीनों कवियों की कविताओं में समान रूप से देख सकते हैं। बलदेव वंशी की राय में पृथ्वी का संकेंद्रक छूने बेधने का परिणाम है यह भूकम्प। मदन कश्यप 'तूफान ... भूकम्प .. ज़िंदगी' में बताते हैं कि मानव को मात्र मिला है उतनी बुरी मौत। क्योंकि गुजरात में घटित भूकम्प को विश्व की संपूर्ण जनता को विध्वंस करने की शक्ति है। जैसे -

"प्रकृति कभी कुत्तों को उस तरह नहीं मारती
जिस तरह उसने आदमियों को मारा गुजरात में
जिनके पास जितना सुरक्षित घर था
उन्हें मिली उतनी ही बुरी मौत।"[५२]

यहाँ कवि सुरक्षित घर में रहनेवाले लोगों की मृत्यु की बात बताते हैं। भारत में घटित भूकम्पों से सबसे अधिक विनाशकारी रहा है गुजरात का भूकम्प। उसकी तीव्रता का अपना एक ऐतिहासिक महत्व है। इसका संकेत करते हुए बलदेव वंशी ने 'लगातार झटकों के बीच' में इस प्रकार लिखा है -

"मलबा उठाते हटाते हुए
इतिहास में ढूँढ रहे हैं
ऐतिहासिक भूकम्पों की तीव्रता
मृतकों की संख्या।"[५३]

दोनों कवियों ने भूकम्प से घटित जनहानि का संकेत मात्र दिया है। साथ ही भूकम्प के बाद होनेवाली राहत की राजनीति पर व्यंग्य दोनों कविताओं में देख सकते हैं। दोनों कविताओं के केंद्र में आदमी और बच्चों की संवेदना है। भूकम्प के बाद जीवित लोगों की ज़िंदगी एक तरह कुत्ते के समान है। भूकम्प के संबंध में बलदेव वंशी और मदन कश्यप की विचारों में समानता देख सकते हैं। घटना की वास्तविकता को दोनों कवियों ने समान रूप से प्रस्तुत किया है। इससे कुछ भिन्न है नन्द चतुर्वेदी की 'भूकम्प के बाद' नामक कविता। क्योंकि वे पशु-पक्षी, पेड़-पहाड़

जैसे पर्यावरणीय तत्वों के विनाश का संकेत देते हैं। उनकी कविता में मानव के साथ साथ पर्यावरणीय तत्वों की त्रासद स्थिति देख सकते हैं। जैसे -

> "पेड़ों की क्लांत, थकी-छायाएँ
> पक्षियों की तृषातुर खुली चोंचवाले शव
> पहाडों से लुढ़की असंख्य चट्टानें
> धूल और मलबा हो गए घर।"[५४]

तीनों कवियों की कविताओं में अपना विचार प्रस्तुत करने के तरीके में समानता के साथ-साथ विभिन्नता भी देख सकते हैं। फिर भी तीनों कवियों का संदेश एक जैसा है। भूकम्प एक प्राकृतिक घटना है, फिर भी भूकम्प सूचना केंद्र की स्थापना कर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के माध्यम से इसका पूर्वानुमान लगाकर लोगों को सूचित करना है। इससे भूकम्प के परिणाम स्वरूप आये विनाश का नियंत्रण कर पायेगा। समकालीन कवि अपनी कविताओं के माध्यम से प्राकृतिक विपदाओं के प्रति जागरूकता पैदा करना चाहते हैं।

४.१८. निष्कर्ष

पारिस्थितिक समस्या वर्तमान विश्व की एक ज्वलंत समस्या है। मानव के विकास की होड़ ने संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को उजाड़कर विषाक्त बनाया है। इससे जल, थल, वायु सब ज़हरीले हो जायेंगे। इस प्रदूषण ने मानव सहित सभी जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के अस्तित्व को मौत के मुँह में समा दिया है। नदी-संकट, पानी-संकट, वैश्विक तापन, वन्य जीवि-विनाश, अम्ल-वर्षा, जलवायु परिवर्तन, पशु-पक्षी विनाश, पेड़ विनाश, जंगल-विनाश, प्लास्टिक प्रदूषण, कूडा-करकट से उत्पन्न प्रदूषण, बाढ़, सूखा, तूफान जैसी अनेक समस्याओं पर समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में विचार-विमर्श प्रस्तुत किया है। इसमें साम्य और वैषम्य दोनों देख सकते हैं। प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं के कारण जीव-जंतुओं, वनस्पतियों के साथ मानव-सभ्यता एवं संस्कार भी मिट जाने की आशंका व्याप्त है। इन सबके अस्तित्व के प्रति चिंतित हैं समकालीन कवि। कवियों ने

प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित कर पर्यावरणीय तंत्र को संतुलित बनाये रखने की प्रेरणा हमें दी है। क्योंकि सभी प्राकृतिक संसाधन वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ भावी पीढ़ी के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में समूचे विश्व स्तर पर घटित होनेवाले पर्यावरण की गंभीर समस्याओं के कारणों और निदानों को एक वैज्ञानिक की तरह सरल ढंग से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

संदर्भ-सूची

१. समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर २००८, पृ.३७
२. प्रगतिशील वसुधा, जुलाई-सितंबर २००९, पृ.१५५
३. मधुमती, जनवरी २००८, पृ. १९
४. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट, पृ.९६
५. एकांत श्रीवास्तव - बीज से फूल तक, पृ.४४
६. समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर-दिसंबर २००९, पृ.१६३
७. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा, पृ.८७
८. इस्पात भाषा भारती, दिसंबर २००९-जनवरी २०१०, पृ.११
९. प्रगतिशील वसुधा, जुलाई-सितम्बर २००९, पृ.१६२
१०. नीलाभ - शब्दों से नाता अटूट है, पृ.१११
११. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा, पृ.८७
१२. नवल शुक्ल - दसों दिशाओं में, पृ.५६
१३. मदन कश्यप - कुरूज, पृ.८४
१४. वही, पृ.८५
१५. डॉ.धर्मवीर शर्मा - छिलकों में छिपी सचाई, पृ.७५
१६. मदन कश्यप - कुरूज, पृ.२८
१७. शैल सक्सेना - विकल्प, पृ.६७-६८
१८. आलोचना, अक्तूबर-दिसंबर २००३, पृ.१३
१९. वर्तमान साहित्य, जनवरी २०११, पृ.७
२०. साहित्य अमृत, अगस्त २००६, पृ.४३
२१. शैल सक्सेना - विकल्प, पृ.६७
२२. ज्ञानेंद्रपति - संशयात्मा, पृ.१०२
२३. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट, पृ.५०
२४. कुमार अम्बुज - क्रूरता, पृ.१०३
२५. शशि सहगल - मौन से संवाद, पृ.४४
२६. ज्ञानेंद्रपति - संशयात्मा, पृ.१०३
२७. समकालीन भारतीय साहित्य, सितम्बर-अक्तूबर २००५, पृ.१२२
२८. ज्ञानेंद्रपति - कवि ने कहा, पृ.११६

२९. समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त २०१०, पृ.९१
३०. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट, पृ.९५
३१. बलदेव वंशी - धरती हाँफ रही है, पृ.१८
३२. शैल सक्सेना - विकल्प, पृ.७८
३३. ज्ञानेंद्रपति - संशयात्मा, पृ.१०३
३४. कैलाश वाजपेयी - भविष्य घट रहा है, पृ.९३
३५. श्रीकांत जोशी - सत्य वहाँ सुरक्षित है, पृ.१४४
३६. इन्दु जैन - कुछ न कुछ टकराएगा ज़रूर, पृ.८१
३७. साक्षात्कार, फरवरी २०१०, पृ.५९
३८. गंगाप्रसाद विमल - इतना कुछ, पृ.५५
३९. समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त २०१०, पृ.१२१
४०. वही, जुलाई-अगस्त २००४, पृ.१६८
४१. वर्तमान साहित्य, जनवरी २०११, पृ.७
४२. ज्ञानेंद्रपति - कवि ने कहा, पृ.११४
४३. ज्ञानेंद्रपति - संशयात्मा, पृ.१५९
४४. ऋतुराज - आशा नाम नदी, पृ.७७
४५. गोविंद मिश्र - ओ प्रकृति माँ !, पृ.९८
४६. डॉ.शैल रस्तोगी - सुनो ओ, नन्हे दिये !, पृ.१२
४७. सूरज प्रसाद पचौरी - मोहभंग, पृ.८७
४८. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा, पृ.३०
४९. ऋतुराज - आशा नाम नदी, पृ.५८
५०. ज्ञानेंद्रपति - कवि ने कहा, पृ.९४
५१. मदन कश्यप - कुरूज, पृ.५९
५२. वही, पृ.६०
५३. बलदेव वंशी - धरती हाँफ रही है, पृ.११७
५४. साक्षात्कार, अगस्त २००१, पृ.१२

अध्याय ५

उपसंहार

भूमण्डलीकरण और संचार क्रांति ने संपूर्ण विश्व को 'ग्लोबल विलेज' बना दिया है। संचार क्रांति एवं वैज्ञानिक प्रगति के माध्यम से मानव विकास की सीमाओं को लाँघकर चरम बिंदु पर पहुँच चुके हैं। औद्योगिक, वैज्ञानिक, संचार एवं सूचना क्रांति ने एक ओर इस ग्लोबल विलेज में विकास का रास्ता प्रदान किया है, पर साथ-साथ कई समस्याएँ भी पैदा कर दी हैं। इसके पीछे पूँजीवादी तथा नव-उपनिवेशवादी शक्तियाँ भी हैं। पारिस्थितिक संकट वर्तमान दुनिया की एक प्रमुख समस्या है। यह समस्या दिन-प्रतिदिन विकराल होती जा रही है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक करने का पहला प्रभावी अभियान - १९७२ में स्टॉकहॉम में आयोजित संयुक्त राष्ट्र संघ का मानव पर्यावरण कांफ्रेंस है। इसके बाद पृथ्वी को बचाने के लिए क्योटो, कोपेनहेगन आदि अनेक सम्मेलन हो चुके हैं। साथ ही राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पारिस्थितिक समस्याओं का निवारण करने के लिए दिन-प्रतिदिन काफी बहसें हो रही हैं। फिर भी इस समस्या का समाधान अभी तक पूर्ण रूप से नहीं निकल पाया है।

अधिक से अधिक मुनाफा कमाने के लिए लोग प्राकृतिक नियमों का अतिक्रमण कर रहे हैं। पारिस्थितिक असंतुलन इसका परिणाम है। इसका प्रमुख कारण प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन एवं अनियमित रूप से हो रही जनसंख्या वृद्धि है। नयी-नयी परियोजनाओं को साकार करने के लिए मानव सभी प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों का विध्वंस कर रहे हैं। चिंता की बात यह है कि हमारा विकास आगे बढ़ने के साथ-साथ अन्य जीवों, पशु-पक्षियों एवं वनस्पतियों का अस्तित्व विलुप्त हो जायेगा। उनकी विलुप्तता पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बन जाता है।

औद्योगिक-वैज्ञानिक प्रगति तथा स्वार्थवृत्ति ने मिट्टी, वायु, जल जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व को प्रदूषित कर दिया है। खेतों में उत्पादन वृद्धि के लिए प्रयुक्त रासायनिक उर्वरक प्राकृतिक मिट्टी की उर्वर शक्ति को नष्ट करने के साथ-साथ वातावरण में प्रदूषण को बढ़ाते हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन ने मानव को प्रगति प्रदान तो की है, पर उनकी दृष्टि प्राकृतिक संसाधनों के दोहन पर केंद्रित है। उनका लक्ष्य केवल मुनाफा कमाना है। अधिक से अधिक लाभ कमाने के लिए पूँजीवादी एवं साम्राज्यवादी शक्तियों ने विकासशील देशों के जंगलों को साफ कर वहाँ मल्टी नैशनल

कंपनियों का जाल बिछाया। जंगल का कटाव वहाँ के जैविक संपदा नष्ट होने का कारण बन जाता है। क्योंकि असंख्य पेड़-पौधे, जीव-जंतु, पशु-पक्षियों की प्राकृतिक आवास है जंगल। इसके विनाश से प्राकृतिक संतुलन डगमग रहा है। बहुराष्ट्रीय या मल्टी नैशनल कंपनियों से निकलनेवाला धुआँ वायु प्रदूषण एवं शोर ध्वनि प्रदूषण को बढाते हैं। संपूर्ण विश्व में एक ओर मोट्रो-लाइन का विकास तीव्र गति से हो रहा है दूसरी ओर इस मेट्रो लाइन के वाहनों से निकलनेवाले धुएँ, आवाज़ आदि से वहाँ के पर्यावरणीय तत्वों को अत्यंत घातक प्रदूषण की मार झेलना पड़ता है। इसके अतिरिक्त दिन-प्रतिदिन हो रहे असंख्य पेड़ों के कटाव से प्रदूषण उग्र रूप धारण कर लेने लगा।

आज मानव के लिए एक गंभीर चुनौती बनकर खडी है - जल-समस्या। पर्यावरणीय एवं आर्थिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण संसाधन है जल। आज जल स्रोतों के पानी धीरे-धीरे कम होकर रेत हो रहे हैं, कुछ पानी है तो वह अन्य अनेक प्रदूषणों से घिरा हुआ है। मानवीय, औद्योगिक, रासायनिक, रेडियोधर्मी, प्रौद्योगिक अपशिष्ट जल प्रदूषण का कारण बन जाते हैं। आज गंगा, यमुना जैसी विश्व प्रसिद्ध नदियाँ प्रदूषण से अपना अस्तित्व खो रही हैं।

जलवायु-परिवर्तन, वैश्विक तापन, ओज़ोन क्षरण आदि वर्तमान विश्व पर मंडराते गंभीर मानवीय त्रासदी है। इसमें मानव जाति, जीव-जंतु एवं वनस्पति जगत् बचना मुश्किल है। सर्व शक्तिमान राष्ट्र में भी इसके महाविनाश के ताण्डव नृत्य की लीला हो जायेगी। इन समस्याओं का प्रमुख कारण कार्बनडाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, क्लोरो फ्लूरो कार्बन, नाइड्रजन ऑक्साइड, सल्फर डाइ ऑक्साइड एवं मीथेन आदि अन्य अनेक गैसों के उत्सर्जन में होनेवाली वृद्धि है। इस समस्या के निवारण का एकमात्र उपाय है - वनारोपण एवं कार्बन कटौती। विकसित और विकासशील राष्ट्रों को समान रूप से जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापन एवं ओज़ोन क्षरण जैसे पारिस्थितिक संकट की मार झेलना पड़ता है।

आज संपूर्ण विश्व प्लास्टिक एवं कूडे-कचरे का घर मात्र हो गया है। इसको जलाने या दबाने से उत्पन्न विभीषिका अत्यंत घातक है। पर्यावरणीय असंतुलन से उत्पन्न बाढ़, सूखा, तूफान, सुनामी जैसे अनेक प्राकृतिक प्रकोपों को भी सामना

करना पड़ता है। जल, जंगल, ज़मीन जैसे प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण करने के लिए मानव एवं पर्यावरणविद् आंदोलनरत् है। नर्मदा बचाओ आंदोलन, चिपको आंदोलन, साइलैंडवाली आंदोलन आदि इसका सर्वोत्तम उदाहरण हैं।

आदिकाल से लेकर समकालीन तक की हिंदी कविताओं में पारिस्थितिक चेतना किसी न किसी रूप में विद्यमान है। प्रारंभ में मानव पूर्णतः प्रकृति पर निर्भर है। इसलिए अब्दुल रहमान, चंदबरदाई, विद्यापति आदि आदिकालीन कवियों ने अपनी वीर एवं श्रृंगारपरक रचनाओं में आश्रयदाताओं के वर्णनों के साथ-साथ प्रकृति के एक-एक अंग का अवबोध करवाया। इस काल में प्राकृतिक तत्वों का परिचय मात्र ही उपलब्ध है। आदिकाल में पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या स्वाभाविक रूप से आज के समान भयावह न थी फिर भी उस समय की रचनाओं में भी पर्यावरणीय चेतना देख सकते हैं।

भक्ति काल के कवियों में पर्यावरणीय चेतना व सजगता देख सकते हैं। कबीर, सूर, तुलसी, जायसी के काव्य में यह स्पष्ट है। वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं का पूर्व संकेत भक्तिकालीन काव्यों में उपलब्ध है। कबीर, सूर, तुलसी, जायसी जैसे भक्तिकालीन कवियों का लक्ष्य है - संपूर्ण जीव-सृष्टि को मधु-मंगलमय बनाना। इसलिए भक्त कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति के स्वरूप एवं उसकी महत्ता को प्रतिपादित किया है। उनकी राय में मानव-मंगल के लिए पशु-पक्षी, पेड़, फल, फूल जैसे अनेक पारिस्थितिक तत्वों का अस्तित्व अनिवार्य है।

सामंती व्यवस्था को अत्यधिक महत्व देनेवाला रीतिकालीन कवियों के लिए प्रकृति चमत्कार का एक साधन रहा है। फिर भी सांस्कृतिक एवं पारिस्थितिक संकटों से उत्पन्न संवेदना रहीम एवं वृंद के दोहों में देख सकते हैं। उस समय पानी की समस्या वर्तमान की तरह उतनी गंभीर नहीं थी। फिर भी पानी रहित के भविष्य के भयानक तस्वीर उनके दोहों में विद्यमान है। मतिराम, केशवदास आदि अन्य अनेक कवियों ने पर्यावरण और मानव के बीच के आत्मीय लगाव को प्रतिपादित किया है।

वैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नव-जागरण का युग है भारतेंदु युग। इस युग के कवियों ने प्राकृतिक संसाधनों की महत्ता को प्रस्तुत करने के साथ-साथ प्राकृतिक वैभव की गरिमा पर बल दिया है। क्योंकि उस युग में आयी औद्योगिक क्रांति एवं अंग्रेज़ी शासकों ने प्राकृतिक संपत्तियों का शोषण करना शुरू किया था। इस युग के कवियों ने शोषण के प्रति लोगों के मन में चेतना पैदा कर दी है। इसके अतिरिक्त बाढ़, अनावृष्टि या अतिवृष्टि जैसे प्राकृतिक प्रकोपों से उत्पन्न विनाश का संकेत भी उनकी कविताओं में उपलब्ध है। अन्य अनेक समस्याओं का उल्लेख करने के साथ-साथ भारतेंदु ठाकूर जगमोहन सिंह जैसे कवियों ने प्रकृति और मानव के बीच के अन्योन्याश्रित संबंधों को भी प्रस्तुत किया है। प्रकृति का नैसर्गिक रूप द्विवेदीयुगीन कविताओं में द्रष्टव्य है। दिन-प्रतिदिन काट रहे हरा-भरा वन पर्यावरण के सौंदर्य को चार चाँद लगाता है। उस समय पृथ्वी के अधिकांश भाग किसी न किसी औपनिवेशिक शक्ति के चंगुल में फँस गया है। मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त और रामचंद्रशुक्ल आदि द्विवेदीयुगीन कवियों का संदेश यह रहा कि हमारा कल्याण प्राकृतिक संरक्षण से ही प्राप्त होगा। इसलिए प्रकृति के अंतर्गत आनेवाले सभी तत्वों का संरक्षण करना अनिवार्य है।

औद्योगिक-वैज्ञानिक क्रांति से उत्पन्न पारिस्थितिक संघर्ष प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी के काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य है। इसके परिणाम स्वरूप मानव एवं पर्यावरण के अन्योन्याश्रित संबंधों में आये बदलाव भी छायावादी काव्य में देख सकते हैं। पर्यावरण की प्राकृतिक गतिशीलता प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी जैसे छायावादी कवि को नये-नये संदेश देनेवाली वाहिका है। सृष्टि के विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों से संपन्न स्वच्छ प्रकृति अनिवार्य है। विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी से उत्पन्न पारिस्थितिक विनाश भी छायावादी काव्य में उपलब्ध है। प्रकृति के अंतर्भूत रहस्यों को उद्घाटित करनेवाली वैज्ञानिक शक्ति विध्वंसकारी भी है। इसके परिणाम स्वरूप आये प्राकृतिक असंतुलन से हमारी जैव-विविधता एवं भूगर्भीय संसाधनों का ह्रास हो रहा है। प्राकृतिक तत्वों में ंहोनेवाला प्रत्यावर्त्तन पृथ्वी को सागर, सागर को मरुभूमि एवं बर्फ को नदी बना देता है। प्रकृति से संघर्ष करने की प्रेरणा वर्तमान मानव को बाज़ारी एवं वैज्ञानिक संस्कृति से मिली है। अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से उत्पन्न पारिस्थितिक विनाश भी प्रसाद और पंत के काव्य में देख सकते हैं। साथ ही इसका

विरोध करने का संदेश भी उसमें निहित है। उन्होंने वर्तमान पर्यावरण की ज्वलंत समस्याओं को प्रस्तुत कर पर्यावरण के प्रति मित्रवत व्यवहार करने की प्रेरणा हमें दी है। छायावादी कवियों ने मानव एवं प्रकृति के साथ एक रागात्मक संबंध स्थापित कर मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों का पुनःनिर्माण करने का प्रयास किया है। प्रसाद का कामायनी सही अर्थ में एक महत्वपूर्ण पारिस्थितिक काव्य है।

छायावाद के समान हालावादी काव्य में प्रकृति के प्रति उतना गहन संबंध नहीं मिला है। फिर भी कुछ कविताओं में किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय प्रेम विद्यमान है। उनके लिए प्रकृति मानवीय सुख-दुखों को प्रस्तुत करने का साधन मात्र रही है। फिर भी प्रकृति के प्रति सहज-भाव नरेंद्र शर्मा और बच्चन के काव्य में दिखलायी पड़ता है। राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा के कवियों के लिए प्रकृति ब्रह्मज्ञान सीखनेवाली खुली किताब है। साथ ही मानव के सुख-दुखों की संवाहिका भी है। आज का मानव पर्यावरणीय संबंधों से बहुत दूर चला गया है। इसलिए इस धारा के दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी जैसे कवियों ने मानव पर्यावरणीय संबंधों को निकट लाने का प्रयास किया है। प्रकृति के प्रति पूज्य भाव उनके काव्य की प्रमुख विशेषता है।

पूँजीवाद, साम्राज्यवाद एवं वैज्ञानिक शक्तियों ने पारिस्थितिकी के अर्थ एवं स्वरूप को बदल दिया है। केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, नागार्जुन, शिवमंगलसिंह सुमन जैसे कवियों के लिए प्रकृति मार्ग दर्शक है। सभी पर्यावरणीय तत्वों का अस्तित्व एक दूसरे पर भी निर्भर है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से मानव प्रकृति पर अपनी विजय प्राप्त करने में व्यस्त हैं उस समय प्रगतिवादी कवि अपना तादात्म्य संबंध प्रकृति से जोड़ना चाहते हैं। औद्योगिक, रासायनिक, रेडियोधर्मी, कूडे-कचरे एवं प्लास्टिक के प्रदूषण से उत्पन्न विभीषिकाओं का संकेत भी प्रगतिवादी काव्य में उपलब्ध है। पूँजीवाद, नव-उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवादी शक्तियों ने पारिस्थितिकी को संकटग्रस्त बना दिया है। इसके परिणाम स्वरूप मानव एवं पर्यावरणीय संबंधों में भी बदलाव आया। प्रगतिवादी कवियों ने प्राकृतिक वैभव के साथ-साथ उसके संघर्ष को भी अपनी-अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया है।

प्रगतिवादी काव्य के समान औद्योगिक-वैज्ञानिक विकास से उत्पन्न पर्यावरणीय खतरों का संकेत प्रयोगवाद एवं नयी कविता में मिलता है। प्रयोगवाद एवं नये कवियों ने अपनी कविताओं में सूर्य, चंद्र, नदी, पेड़, हवा, पानी और धरती जैसे पर्यावरणीय तत्वों की विराट् महत्ता के बारे में वर्तमान लोगों को बोध कराती है। परमाणु बमों का परीक्षण एवं प्रयोग और अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग भी पारिस्थितिकी के लिए अहितकर है। इससे धरा बंजर हो जायेगी। धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर आदि की कविताओं में पारिस्थितिक चिंतन विद्यमान है। स्वच्छ पारिस्थितिकी का निर्माण करने के लिए अणु युद्धों को रोकना अनिवार्य है नहीं है तो इससे वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ भावी-पीढ़ी भी प्रभावित होंगे।

समकालीन कविताओं में मानव एवं पर्यावरण के एक ओर भिन्न स्वरूप देख सकते हैं। उस समय के कवियों ने पर्यावरण के प्रति अटूट रिश्ता स्थापित करने का प्रयास किया है। बाज़ारवाद और साम्राज्यवाद ने भूमण्डलीकरण के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया है। उस समय की अधिकांश कविताओं में भोपाल गैस त्रासदी से उत्पन्न विनाशकारी परिणाम देखने को मिलता है। फिर भी समकालीन कवि पर्यावरण संरक्षण के प्रति अधिक सचेत है।

बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार दिन-प्रतिदिन बदलते प्रकृति का स्वरूप १९९० के पूर्व की कविताओं में देख सकते हैं। अरुण कमल, राजेश जोशी, चंद्रकांत देवताले, बलदेव वंशी, भगवत रावत, रामदरश मिश्र, देवी प्रसाद मिश्र, केदारनाथ सिंह, मंगलेश डबराल, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी आदि कवियों ने अपनी सन् १९९० के पूर्व की कविताओं में पेड़, नदी, पशु-पक्षी, जंगल आदि पर्यावरणीय तत्वों की वर्तमान विडंबनापूर्ण स्थिति को प्रस्तुत करते हुए मानव एवं पर्यावरण पर एक सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने का प्रयास किया है। आज समय पर वसंत नहीं है, पक्षियों का संगीत कम हो रहा है, प्रकृति प्रदत्त नदी विलुप्त हो रही है, अवैध शिकार के कारण वन्यजीवियों का संसार मिट रहा है। नब्बे के पूर्व की कविताओं से हमें पता चलता है कि इन सबका प्रमुख कारण वर्तमान बाज़ारी सभ्यता से प्रभावित मानव की अविवेकपूर्ण गतिविधियाँ हैं। अरुण कमल, राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, केदारनाथ सिंह, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी आदि की कविताओं में पेड़, जंगल विनाश, जलवायु

परिवर्तन, नदी प्रदूषण, प्लास्टिक प्रदूषण आदि से उत्पन्न अत्यंत भयानक विभीषिकाओं का संकेत उपलब्ध है।

औद्योगिक, वैज्ञानिक, संचार क्रांति का एक दुष्परिणाम है आज की क्षतिग्रस्त प्रकृति। शहरीकरण ने मानव के समक्ष कई चुनौतियाँ उत्पन्न कर दी हैं। गाँव को विनाश करने के साथ-साथ प्रदूषण को ओर भी बढ़ा दिया है। साथ ही १९९० तक की कविताओं में प्राकृतिक संसाधनों पर होनेवाले बाज़ारोन्मुख सभ्यता के दबाव को ही व्यक्त किया गया है। १९९० के बाद के कवियों ने पर्यावरण के प्रति अपार श्रद्धा प्रकट की है। क्योंकि वर्तमान में प्रदूषण अपना चरम बिंदु पर पहुँच चुका है। इसके परिणाम स्वरूप वर्तमान मानव को एक स्वच्छ प्राकृतिक पर्यावरण मिलना मुश्किल हो गया है। मिट्टी, जल, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व प्रदूषण के चंगुल में फँस गये हैं। इसके बाद आये पारिस्थितिक असंतुलन में जीव-जगत् को बचाना मुश्किल हो गया है। प्राकृतिक संसाधनों के अक्षय भंडार से ज़मीन, जंगल, पानी, पेड़-पौधे जैसे सभी पर्यावरणीय तत्व कम होते जा रहे हैं। भविष्य में यह सब लुप्त हो जायेगी। मानवीय क्रियाकलापों के कारण विश्व की संकटग्रस्त पारिस्थितिकी को बचाने का प्रयास राजेश जोशी, ज्ञानेंद्रपति, लीलाधर मंडलोई, एकांत श्रीवास्तव, केदारनाथ सिंह, मदन कश्यप और वीरेन डंगवाल आदि अन्य अनेक कवियों की कविताओं में देख सकते हैं।

अरुण कमल की 'इस श्मशान पर', ज्ञानेंद्रपति की 'वसंत विध्वंस', 'पॉलिथिन', बद्रीनारायण की 'गर्मी', 'मोर', बोधिसत्व की 'गाँव में सूर्यास्त', 'यह पृथ्वी', मदन कश्यप की 'पृथ्वी दिवस १९९१', 'तूफान .... भूकम्प ..... ज़िंदगी', हरीशचंद्र पाण्डे की 'मंच', 'पानी', लीलाधर मंडलोई की 'उनका होना न होना', 'शर्मनाक', वीरेन डंगवाल की 'दुश्चक्र में स्रष्टा', 'फरमाइशें', राजेश जोशी की 'विलुप्त प्रजातियाँ', 'टेलिफोन', रामदरश मिश्र की 'आदत', 'फूल', नीलाभ की 'नदी', 'सरस्वती-१', इन्दु जैन की 'बहुत दूर नहीं', 'पूरा जीवन', एकांत श्रीवास्तव की 'ठण्डे पानी की मशीन', 'वसंत में', बलदेव वंशी की 'तेजाबी वर्षा', 'कूडा-कचरा और कोंपलें', कैलाश वाजपेयी की 'अनेकान्त', 'जंगल की आवाज़', गोविंद मिश्र की 'वसंत', 'पहाडियाँ', गंगाप्रसाद विमल की 'वृक्ष', 'पेड़ जडों से शुरू होता

है', कुमार अम्बुज की 'परछाईं', 'कोई नहीं मरना चाहता', केदारनाथ सिंह की 'पानी की प्रार्थना' आदि सन् १९९० के बाद की अन्य अनेक कविताओं में पारिस्थितिक चेतना विद्यमान है।

मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति के विकास के आधारभूत घटक है पर्यावरण। बाज़ारीकरण या उपभोक्तावाद से प्रभावित इस संस्कृति में सभी प्राकृतिक संसाधन बाज़ार में बिकने का साधन मात्र रह गये हैं। उनकी दृष्टि मुनाफे पर केंद्रित है। अर्थ लोलुप मानव अपने देश की मिट्टी से लेकर पानी तक की अपार प्राकृतिक संपत्ति को किसी दूसरे विकसित राष्ट्र को निर्यात कर रहे हैं। इस प्रकार होनेवाली प्राकृतिक संसाधनों की कमी पारिस्थितिक असंतुलन का कारण बन जाती है। दिन-प्रतिदिन नष्ट हो रहे जंगल, ज़मीन, नदी जैसे प्राकृतिक संसाधनों का पुनर्निर्माण असंभव है। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग पर्यावरण की दशाओं के अनुरूप करना है नहीं है तो हरे भरे प्रकृति रेगिस्तान बन जायेगी। इसकी सही अभिव्यक्ति लीलाधर जगूड़ी, मदन कश्यप, श्रीकांत जोशी, कमलेश्वर साहू और कैलाश वाजपेयी की कविताओ में मिलती है। वैज्ञानिक एवं संचार क्रांति ने प्रगति के नाम पर सृष्टि विकास के इस स्रोत को बांझ बना दिया है। इसके फलस्वरूप होनेवाले दुष्परिणामों का संकेत भी १९९० के बाद की कविताओं में उपलब्ध है।

कहा जाता है कि इक्कीसवीं शती में होनेवाले युद्ध पानी पर ही होगा। यह युद्ध विकसित और विकासशील राष्ट्रों के बीच मात्र नहीं घर-घर, गाँव-गाँव, शहर-शहर और आदमी-आदमी के बीच ही होगा। इस युद्ध में सभ्यता, संस्कृति, आचार-विचार, परंपरा सब मिट जायेंगे। आनेवाले पानी युद्ध का संकेत राजेश जोशी, लीलाधर मंडलोई, हरीशचंद्र पाण्डे और एकांत श्रीवास्तव आदि अनेक समकालीन कवियों की कविताओं में मिलता है। एक ओर कवियों ने औद्योगिक, रासायनिक, मानवीय क्रियाकलापों से उत्पन्न जल-प्रदूषण का संकेत दिया है दूसरी ओर पानी के बाज़ारीकरण की प्रवृत्ति का विरोध करते हैं। आज के पर्यावरण से स्वच्छ एवं निर्मल पानी मिलना मुश्किल है क्योंकि चारों ओर मिनरल वाटर ही है। जिससे पानी की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है। मुनाफे पर केंद्रित पानी की व्यावसायीकरण में जिसके पास पैसा है उसको पानी मिलेगा।

आज कई जलस्रोतों का नियंत्रण किसी मल्टी नैशनल कंपनियों के अधीन है। विकास के नाम पर हो रहे प्राकृतिक संसाधनों के निजीकरण की प्रक्रिया का समकालीन कवि विरोध करते हैं। वर्तमान युग में जलस्रोतों के स्थान पर रेत एवं कूडा-कचरा-प्लास्टिक अपशिष्टों का ढेर है। इससे उत्पन्न विभीषिकाएँ बहुत भयानक है। ज्ञानेंद्रपति, राजेश जोशी, हरीश गोयल, इमरोज़, अरुण देव, संजय कुन्दन जैसे कवियों ने अपनी कविताओं में जलस्रोत नष्ट होने के प्रति दुख प्रकट किया है। ज्ञानेंद्रपति की अधिकांश कविताएँ गंगा पर केंद्रित है। कवि अपनी कविताओं में आस्था के केंद्र गंगा नष्ट हो जाने की आशंका प्रकट की है। इस प्रकार सभी जलस्रोतों को संकटमय बनाने का श्रेय नव-उपनिवेशवादी एवं पूँजीवादी शक्तियों को है। नदी को बाँधना अपने को स्वयं मारने के समान है। बाँध निर्माण से संपूर्ण जलीय पारितंत्र नष्ट हो जाता है। इसका संकेत कांता शर्मा, मदन कश्यप जैसे कवियों की कविताओं में देख सकते हैं। टिहरी बाँध परियोजना से उत्पन्न आतंक आज भी हमारे सामने हैं। इसके अतिरिक्त प्लास्टिक, कूडे-कचरे से उत्पन्न भीषण परिणामों को भी कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया है।

आज चारों ओर पेड़ के स्थान पर बिजली या टेलिफोन का खम्भा मात्र है। वृक्ष नष्ट हुए तो हमारा विनाश अवश्यंभावी है। पेड़-विनाश से पृथ्वी की तापमान में वृद्धि होती है। साथ ही मानव को बाढ़, सूखा, तूफान जैसे अनेक प्राकृतिक प्रकोपों को भी सामना करना पड़ता है। कई ज्वलंत पारिस्थितिक समस्याओं का मूल कारण वन-विनाश है। कहा जाता है कि वनारोपण से सभी पारिस्थितिक समस्याएँ मिट जायेगी। इसका संकेत भी इन्दु जैन, हरीशचंद्र पाण्डे, रामदरश मिश्र आदि की कविताओं में मिलता है।

आज जंगलों के स्थान पर बहुमंजिली इमारतें और मल्टी नैशनल कंपनियाँ ज़्यादा है। जंगल एवं पेड़-विनाश से पशु-पक्षी, वन्य-जीवि नष्ट हो जाते हैं। इनकी विलुप्ति का दुष्प्रभाव वर्तमान पारिस्थितिक तंत्र पर भी पड़ता है। इसके अतिरिक्त वाहनों एवं कल-कारखानों से निकलनेवाला धुआँ एवं भारी शोर शराबे पारिस्थितिकी के वास्तविक स्वरूप को बिगाड़कर वायु एवं ध्वनि प्रदूषण को बढ़ा देते

हैं। इसकी सजगता समकालीन कविता में उपलब्ध है। समकालीन कवियों की राय में पृथ्वी को शस्य श्यामल बनाने के लिए पेड़, जंगल, पशु-पक्षी एवं वन्य जीवियों का संरक्षण अनिवार्य हो गया है। केदारनाथ सिंह, ज्ञानेंद्रपति जैसे कई कवि बताते हैं कि शिकार, जलवायु परिवर्तन, वैश्विक तापन जैसे मानव निर्मित क्रियाकलापों से बाघ, हाथी, शेर जैसे जंगल की दुर्लभ प्रजातियाँ आज मरणासन्न हैं।

इक्कीसवीं सदी में संपूर्ण विश्व पर मंडराता खतरा है - जलवायु-परिवर्तन, वैश्विक तापन एवं ओज़ोन छिद्र। जिसका प्रमुख कारण हरितग्रह गैसों की वृद्धि है। औद्योगिक, तकनीकी संचार क्रांति, विद्युत तापग्रह, खेतों में रासायनिक उर्वरकों का अंधाधुंध प्रयोग आदि हरितग्रह गैसों के उत्सर्जन के लिए उत्तरदायी है। पशु-पक्षियों की विलुप्ति, पिघलते ग्लेशियर, रेत होती नदियाँ आदि सब इसके दुष्परिणाम हैं। इन्दु जैन, एकांत श्रीवास्तव, ज्ञानेंद्रपति जैसे कवि इसके प्रति हमें चेतावनी देते हैं। समुद्र के तापमान बढ़ने से आनेवाले सदियों में मालदीव, तुबालू जैसे देशों का नामोनिशान विश्व मान चित्र से भी मिट जायेगा। इसके अतिरिक्त बाढ़, सूखा, तूफान जैसे प्राकृतिक प्रकोपों से उत्पन्न जन-धन की हानि का संकेत भी समकालीन कविता में उपलब्ध है। मदन कश्यप, ज्ञानेंद्रपति आदि बताते हैं कि बार-बार आनेवाले टारनाडो जैसे तूफान संपूर्ण विश्व को मरघट बनाते हैं। इसके प्रति हम सचेत या जागरूक होना है।

समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में पारिस्थितिक समस्याओं पर एक वैज्ञानिक की तरह विचार-विमर्श प्रस्तुत किया है। कवियों के इन विचार-विमर्शों में साम्य और वैषम्य देख सकते हैं। फिर भी उनकी कविताओं की मूल संवेदना पारिस्थितिक चेतना पर आधारित है। सभी समकालीन कवि समान रूप से बताते हैं कि पारिस्थितिक संकट का एकमात्र कारण विकास के नाम पर हो रहे प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन है। वर्तमान एवं भावी पीढ़ी के उज्ज्वल भविष्य के लिए इसका संरक्षण अनिवार्य हो गया है। पारिस्थितिक संकट एक व्यक्ति या एक राष्ट्र का मात्र नहीं है, समूचे विश्व का है। विकसित और विकासशील राष्ट्रों के बीच युद्ध की तरह भयानक है - पारिस्थितिक समस्या। मल्टी नैशनल कंपनियाँ, मॉल संस्कृति, हाइटेक ज़माना, प्राचीन संस्कृतियों का अवमूल्यन पारिस्थितिक संकटों को और भी

बढावा दे रहे हैं। समकालीन कविता का मूल मंत्र है - प्रकृति की ओर वापसी। इससे इन सभी समस्याओं का निवारण हो जायेगा। आसन्न पारिस्थितिक संकटों के प्रति आम लोगों के बीच चेतना एवं जागरूकता पैदा करने की दिशा में समकालीन कविता काफी सक्रिय एवं सक्षम अवश्य है।

परिशिष्ट

कवियों के पत्र

प्रिय सिंधु

Date: 10/05/2011/
दिल्ली

प्रिय सिंधु,
आपके 7.1 के पत्र का उत्तर विलंब से देने के लिए क्षमा चाहता हूँ। पारिवारिक स्थिति कुछ ऐसी रही कि बहुत सारे अन्य कामों के साथ मैं यह छोटा-सा काम भी नहीं कर पाया।

मेरा पहला संग्रह - 'लेकिन उदास है पृथ्वी' - उपलब्ध नहीं है। संभवतः अगले जुलाई-अगस्त में उसका नया संस्करण आएगा। उसमें 1992 तक की ही कविताएँ हैं, जबकि आप शायद 1990 के बाद की कविता पर शोध कर रही हैं। वैसी स्थिति में केवल एक कविता - 'पृथ्वी दिवस: 1991' - आपके काम की होगी, जो 'कवि ने कहा' में शामिल है। दूसरे संग्रह - 'नीम रोशनी में' - की एक प्रति मैं डॉ० प्रमोद के लिए भेज रहा हूँ, उसी से आपका काम भी हो जाएगा। मेरा तीसरा संग्रह 'कुरुज' आप चाहें, तो किताबघर प्रकाशन से मंगा सकती हैं।

आपकी सफलता के लिए ढेर सारी शुभकामनाएँ!

मदन कश्यप

राजेश जोशी
11 निराला नगर
भदभदा रोड, दुष्यंत कुमार त्यागी मार्ग
भोपाल 462003
फोन नं. 0755-2770046
ई मेल. rajesh.isliye@gmail.com

प्रिय Sinchu.A

आपका पत्र मिला. मेरे कविता संग्रह
1 धूपघड़ी 2. नेपथ्य में हँसी
3. दो पंक्तियों के बीच
4. चाँद की वर्तनी

ये सभी राजकमल प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित हुए हैं।
धूपघड़ी में मेरे शुरू के दोनों संग्रहों
(एक दिन बोलेंगे पेड़ तथा मिट्टी का चेहरा)
की सभी कविताएं हैं।
इनमें संभवतः आपके काम की कई कविताएँ
मिल जायेंगी।
आशा है आपके काम आ सकेंगी।
शुभकामनाओं के साथ

बी-3/12, अन्नपूर्णानगर
विद्यापीठ मार्ग
वाराणसी - 221 002

फोन: 0542-2221039

सिन्धु साहिबा,

16-1-10 को लिखित आपका पत्र।
उत्तर में इस प्रदीर्घ विलम्ब के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।
सबसे पहले तो यह कहूँ कि आपने अपने शोध का विषय बहुत
मौजूँ चुना है। अगर आप संलग्नता से काम करेंगी तो
नतीजा अच्छा निकलेगा और वह अकादमिक या कि साहित्यिक
क्षेत्र से इतर व्यापक समाज के लिए भी प्रासंगिक होगा।
मैं पुरउम्मीद हूँ। क्योंकि आपके निदेशक महोदय — प्रमोद जी —
से फोन पर बातें हुई हैं और मैं आश्वस्त हुआ हूँ कि
आपको एक समझदार मार्गदर्शक मिला है।
बेशक, पर्यावरण की चिन्ता मेरे कवि की प्रमुख चिन्ताओं में शामिल
है। इस दृष्टि से 'संशयात्मा' का अध्ययन उपयोगी होगा। लेकिन
जब तक आपको 'संशयात्मा' की प्रति हस्तगत नहीं होती, आप 'किताबघर
प्रकाशन': 4855-56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
से प्रकाशित मेरी प्रतिनिधि कविताओं का संकलन 'कवि ने कहा' (पेपरबैक
मूल्य: सत्तर रुपये) हासिल करने का प्रयास करें; इस संकलन में भी
पर्यावरण-चिन्ता को उकेरती कतिपय कविताएँ शामिल मिलेंगी।
एक बात कहूँगा; जिसे कहूँ, यह जरूरी लग रहा है। वह यह कि: प्राकृतिक
पर्यावरण की चिन्ता सामाजिक पर्यावरण या कि मनुष्य के आत्मिक
पर्यावरण की चिन्ताओं से जुड़ कर ही कविता में चरितार्थ होती है
और भोगवादी जीवन-संस्कृति का प्रत्याख्यान करती हुई चुपचाप
'जीने की कला' (कवि त्रिलोचन के एक कविता-संग्रह का शीर्षक) सिखाती
है; कविता के इस उपक्रम को मुक्तिबोध 'सभ्यता-समीक्षा' कहते थे।
गोया, कविता की भीतरी गहराइयों में अनेक चिन्ताओं के तार परस्पर
जुड़े मिलेंगे; कविता को उसकी सम्पूर्ण संश्लिष्टता में समझने का आयास
उचित होगा।
मेरी शुभकामनाएँ स्वीकारिये। यह पत्र मिला, बताइये। प्रमोदजी
को कृपया मेरा नमस्कार कहिये।

सस्नेह, ज्ञानेन्द्रपति
7-4-10

बेतियाहाता, गोरखपुर

मैं अपनी पर्यावरण संबंधी कुछ कविताएँ भेज दे रहा हूँ जिनमें 'आरा मशीन' शीर्षक कविता भी है।

मेरे काव्य संकलनों का नाम कविताओं के नीचे लिखा है। उनका प्रकाशन वर्ष एवम् प्रकाशक निम्नांकित हैं :—

1. 'चीज़ों को देखकर' (1970) – विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
2. साथ चलते हुए (1976) – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
3. बेहतर दुनिया के लिए (1985) ”

आपका
विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

संदर्भ ग्रंथ-सूची

काव्य-संग्रह

१. अजित कुमार - बच्चन रचनावली - २
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९८३

२. अनिता निहालनी - इन्द्रधनुष
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
प्र.सं.२००७

३. अरुण कमल - अपनी केवल धार
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, तीसरा.सं.१९९९

४. अरुण कमल - सबूत
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, नवीनतम
सं.२००४

५. अरुण कमल - पुतली में संसार
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००४

६. अरुण देव - क्या तो समय
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

७. अशोक वाजपेयी - कुछ रफू कुछ थिगडे
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

८. अशोक वाजपेयी - तत्पुरुष
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९८९

९. अज्ञेय - चुनी हुई कविताएँ
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, सं.२००३

१०. अज्ञेय - दूसरा सप्तक
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली,
तृतीय सं.१९८१

११. अज्ञेय - पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, दू.सं.१९७६

१२. अज्ञेय - बावरा अहेरी
सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.१९५४

१३. इन्दु जैन - कुछ न कुछ टकराएगा ज़रूर
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

१४. इमरोज़ - गुन रहा है गाँव
कलमकार प्रकाशन, जयपुर, प्र.सं.२००३

१५. ऋतुराज - आशा नाम नदी
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००७

१६. एकांत श्रीवास्तव - बीज से फूल तक
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००३

१७. कुमार अम्बुज - क्रूरता
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, दू.सं.२००७

१८. सं.कुमार विमल - रामधारीसिंह दिनकर रचना संचयन
साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००८

१९. केदारनाथ अग्रवाल - फूल नहीं रंग बोलते हैं
परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, दू.सं.१९७७

२०. केदारनाथ सिंह - अकाल में सारस
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९८८

२१. केदारनाथ सिंह - तालस्ताय और साइकिल
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००५

२२. केदारनाथ सिंह - बाघ
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, दू.सं.१९९८

२३. कैलाश वाजपेयी - भविष्य घट रहा है
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९९

२४. डॉ.गणेश गायकवाड - आज़ादी रिटायर हो रही है
संवेदना प्रकाशन, अलीगढ़, प्र.सं.२००८

२५. गिरिजाकुमार माथुर - धूप के धान
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, तृ.सं.१९६६
२६. गिरिजाकुमार माथुर - पृथ्वीकल्प
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९४
२७. गिरिजाकुमार माथुर - मुझे और अभी कहना है
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९१
२८. गोविंद मिश्र - ओ प्रकृति माँ !
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९५
२९. गंगाप्रसाद विमल - इतना कुछ
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९९४
३०. गंगाप्रसाद विमल - सन्नाटे से मुठभेड़
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९४
३१. चंद्रकांत देवताले - पत्थर की बैंच
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९६
३२. चंद्रकांत देवताले - लकड़बग्घा हँस रहा है
संभावना प्रकाशन, सं.१९७०
३३. सं.चंद्रकांत बाँदिवडेकर - धर्मवीर भारती ग्रंथावली (खण्ड - ३)
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९८
३४. सं.जयदेवसिंह, डॉ.वसुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खण्ड -१
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं.२०००
३५. सं.जयदेवसिंह, डॉ.वसुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खण्ड -२
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं.१९९८
३६. सं.जयदेवसिंह, डॉ.वसुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खण्ड -३
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं.१९७१
३६. जयशंकर प्रसाद - कामायनी
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००७
३७. जानार्दन राव चेलेर - वृन्द ग्रंथावली
विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, सं.१९७१

३८. देवीप्रसाद मिश्र - प्रार्थना के शिल्प में नहीं
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.१९८९

३९. डॉ.देशराजसिंह भाटी - रहीम ग्रंथावली (सटीक)
अशोक प्रकाशन, नयी दिल्ली, नवीनतम सं.२०००

४०. धर्मवीर भारती - अंधायुग
किताबमहल, इलाहाबाद, सं.२०००

४१. धर्मवीर शर्मा - छिलकों में छिपी सच्चाई
कवि सभा, दिल्ली, सं.२००३

४२. नरेश मेहता - उत्सवा
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९७९

४३. नरेश मेहता - अरण्या
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.१९८५

४४. नरेश मेहता - मेरा समर्पित एकांत
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९६२

४५. नरेश मेहता - बनपाखी सुनो
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली

४६. नंदकिशोर नवल - निराला रचनावली - १
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली

४७. नवल शुक्ल - दसों दिशाओं में
आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र.सं.१९९२

४८. निर्मला पुतुल - अपने घर की तलाश में
रमणिका फाउंडेशन, दिल्ली, सं.२००४

४९. निर्मला पुतुल - नगाडे की तरह बजते शब्द
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, सं.२००५

४९. नीलाभ - शब्दों से नाता अटूट है
उपासना प्राकशन, इलाहाबाद, सं.२०००

५०. प्रभाकर माचवे - मेपल
भारतीय ज्ञानपीठ, कलकत्ता, दू.सं.१९६७

५१. प्रभाकर माचवे - तेल की पकौडियाँ
भारतीय ज्ञानपीठ, कलकत्ता, दू.सं.१९६५

५२. सं.प्रभात त्रिपाठी - भवानीप्रसाद मिश्र संचयिता
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००३

५३. बद्रीनारायण - खुदाई में हिंसा
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली,
पहला.सं.२०१०

५४. बलदेव वंशी - धरती हाँफ रही है
आर्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्र.सं.२००७

५५. बलदेव वंशी - हवा में खिलखिलाती लौ
प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९८९

५६. बोधिसत्व - सिर्फ कवि नहीं
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९९१

५७. बोधिसत्व - हम जो नदियों का संगम हैं
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२०००

५८. भगवत रावत - दी हुई दुनिया
प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, सं.१९८१

५९. भवानीप्रसाद मिश्र - परिवर्तन जिए
सरला प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९७६

६०. मदन कश्यप - कवि ने कहा
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

६१. मदन कश्यप - कुरूज
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००६

६२. मदन सोनी - अशोक वाजपेयी : चुनी हुई रचनाएँ
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००१

६३. महादेवी वर्मा - दीपशिखा
भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
सं. सन् २०२२ वि.

६४. महादेवी वर्मा - यामा
भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
पाँचवीं.सं. सन् १९७१

६५. महादेवी वर्मा - महादेवी साहित्य - ३
सेतु प्रकाशन, झाँसी, प्र.सं.१९७०

६६. मैथिलीशरण गुप्त - साकेत
साकेत प्रकाशन, झाँसी, द्वि.सं.१९८३

६७. मंगलेश डबराल - कवि ने कहा
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००८

६८. मंगलेश डबराल - आवाज़ भी एक जगह है
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वि.सं.२००४

६९. योगेंद्र प्रताप सिंह - गोस्वामी तुलदीदास कृत विनयपत्रिका (सटीक)
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि.सं.२००२

७०. योगेंद्र प्रताप सिंह - गोस्वामी तुलसीदास कृत कवितावली
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.२००८

७१. राजेश जोशी - चाँद की वर्तनी
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली,
पहला.सं.२००६

७२. रामकिशोर शर्मा - कबीर ग्रंथावली (सटीक)
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि.सं.२००२

७३. रामचंद्र शुक्ल - जायसी ग्रंथावली
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि.सं.२००६

७४. सं.रामदरश मिश्र, स्मिता मिश्र - रामदरश मिश्र रचनावली खण्ड - १
नमन प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२०००

७५. सं.रामदरश मिश्र, स्मिता मिश्र - रामदरश मिश्र रचनावली खण्ड - २
नमन प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.२०००

७६. रामधारीसिंह दिनकर - रश्मिलोक
हिंदी बुक सेंटर, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९७४

७७. लक्ष्मीकांत वर्मा - अतुकांत
भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, कलकत्ता,
प्र.सं.१९६८

७८. लीलाधर जगूडी - अनुभव के आकाश में चाँद
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९४

७९. लीलाधर मंडलोई - काल बाँका-तिरछा
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

८०. विनायक राव - श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस
श्री विनायकी टीका सहित खण्ड - १
मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन, भोपाल

८१. वीरेन डंगवाल - दुश्चक्र में स्रष्टा
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
पहली आवृत्ति २००६

८२. विश्वनाथप्रसाद तिवारी - चीज़ों को देखकर
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं.१९७०

८३. विश्वनाथप्रसाद तिवारी - साथ चलते हुए
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९७६

८४. विश्वनाथप्रसाद तिवारी - बेहतर दुनिया के लिए
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९८५

८५. बी.पी.शर्मा - पृथ्वीराज रासो (लघु संस्करण)
विश्वभारती प्रकाशन, चण्डीगढ़,
सं.फालगुन १०१९

८६. शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली - १
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.२००३

८७. शोभाकांत - नागार्जुन रचनावली - १
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.२००३

८८. शशि सहगल - मौन से संवाद
नवराज प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.२००१

८९. शिवमंगल सिंह सुमन - सुमन समग्र खण्ड - १
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९५

९०. शिवमंगल सिंह सुमन - सुमन समग्र खण्ड - २
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९५

९१. शैल रस्तोगी - सुनो ओ, नन्हे दिये !
कवि सभा, दिल्ली, प्र.सं.२००४

९२. शैल रस्तोगी - विकल्प
साहित्य सहकार, दिल्ली, प्र.सं.२००६

९३. श्रीकांत जोशी - सत्य वहाँ सुरक्षित है
सार्थक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९९

९३. श्रीकांत जोशी - माखनलाल चतुर्वेदी रचनावली - १
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९८३

९४. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - कुआनो नदी
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९७३

९५. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - जंगल का दर्द
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
पहली आवृत्ति.२०००

९६. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - खूँटियों पर टँगे लोग
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९८४

९७. सुमित्रानंदन पंत - पल्लव
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली,
आठवाँ सं.१९७७

९८. सुमित्रानंदन पंत - युगपथ
भारती भण्डार, लीडरप्रेस, इलाहाबाद,
द्वि.सं.१९६४

९९. सुमित्रानंदन पंत - चिदम्बरा
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली,
आवृत्ति.१९९८

१००. सुमित्रानंदन पंत - लोकायतन
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वि.सं.१९७२

१०१. सुमित्रानंदन पंत - रजत शिखर
भारती भण्डार, लीडरप्रेस, इलाहाबाद, प्र.सं.२००८

१०२. सुमित्रानंदन पंत - शंख ध्वनि
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९७१

१०३. सुमित्रानंदन पंत - गीतहंस
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९६९

१०४. सुमित्रानंदन पंत - सौवर्ण
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, द्वि.सं.१९६३

१०५. डॉ.सूरज प्रसाद पचौरी - मोहभंग
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सं.२००५

१०६. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला - नये पत्ते
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.१९९७

१०७. संजय कुन्दन - चुप्पी का शोर
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

१०८. हरिवंशराय बच्चन - बंगाल का काल
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, सं.१९९१

१०९. हरीशचंद्र पाण्डे - भूमिकाएँ खत्म नहीं होती
भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००६

११०. त्रिलोचन - धरती
नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९७७

१११. त्रिलोचन - तुम्हें सौंपता हूँ
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९८४

११२. त्रिलोचन - अरघान
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९८४

११३. ज्ञानेंद्रपति - कवि ने कहा
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००७

११४. ज्ञानेंद्रपति - गंगातट
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९९

११४. ज्ञानेंद्रपति - संशयात्मा
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली,
पहला.सं.२००४

समीक्षा ग्रंथ

१. अजय तिवारी - नागार्जुन की कविता
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वि.सं.१९९८

२. सं.अनिल राय - आदिकालीन हिंदी साहित्य :
अध्ययन की दिशाएँ
शिवालिक प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.२००७

३. सं.वी.के.अब्दुल जलील - आधुनिक हिंदी साहित्य : विविध आयाम
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली

४. अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' - जायसी : एक नव्यबोध
साहित्य कुटीर, लखनाऊ, प्र.सं.१९७३

५. डॉ.ए.अरविंदाक्षन - आधारशिला
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सं.२००१

६. डॉ.ए.अरविंदाक्षन - समकालीन हिंदी कविता
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९८

७. डॉ.ए.अरविंदाक्षन - कविता सबसे सुन्दर सपना है
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली

८. अरविंद त्रिपाठी - कवियों की पृथ्वी
आधार प्रकाशन, पंचकूला, प्र.सं.२००४

९. अरुण कमल - कविता और समय
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९९

१०. सं.डॉ.आनंदप्रसाद दीक्षित - मैथिलीशरण गुप्त
वसुमती प्रकाशन, इलाहाबाद

११. आरती सिंह - नवोत्थानवादी चेतना और भारतेंदु
संजय बुक सेन्टर, वाराणसी, प्र.सं.२००७

१२. डॉ.इन्द्रपाल सिंह 'इन्द्र' - अध्ययन और विचार
विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर, सं.१९६९

१३. सं.उदयभानु सिंह - तुलसी
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली,
तृतीय सं.१९७२

१४. डॉ.जे.उमाकुमारी - नयी कविता : उपलब्धियाँ
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सं.२००६

१५. उषस.पी.एस - चंद्रकांत देवताले की कविता
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सं.२००८

१६. श्री.उमेश चंद्र मिश्र - प्रगतिवादी काव्य
ग्रंथम, कानपुर, सं.१९६६

१७. डी.डी.ओझा - ध्वनि प्रदूषण
ज्ञानगंगा, दिल्ली, सं.२००७

१८. श्रीमति कमला कानोडिया - भारतेंदुकालीन हिंदी साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्र.सं.१९७१

१९. डॉ.कुलदीप कौर - बलदेव वंशी का काव्य : सामाजिक यथार्थ
अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.२००६

२०. प्रो.कृष्णचंद्र पाण्ड्या - बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्र.सं.१९७२

२१. कृष्णदत्त पालीवाल - गिरिजाकुमार माथुर
साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००३

२२. कृष्णदत्त पालीवाल - भवानीप्रसाद मिश्र का काव्य संसार
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००४

२३. कृष्णदत्त पालीवाल - सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का रचनाकर्म
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००६

२४. केसरी नारायण शुक्ल - आधुनिक काव्यधारा
नन्दकिशोर एण्ड सन्स, वाराणसी
पंचम आवृत्ति १९६९

२५. क्रांतिकुमार शर्मा - हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास
नवयुग प्रकाशन, भोपाल, द्वि.सं.१९७१

२६. खगेंद्र ठाकुर - कविता का वर्तमान
परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९९२

२७. गणपतिचंद्र गुप्त - महादेवी : नया मूल्यांकन
भारतेंदु भवन, शिमला, प्र.सं.१९६९

२८. डॉ.गीता दवे - पंत काव्य में समाज एवं संस्कृति
गरिमा प्रकाशन, कानपुर, सं.२००२

२९. गोपिनाथ कालभोर - राष्ट्रवादी चिंतक : माखनलाल चतुर्वेदी
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, सं.२०००

३०. डॉ.चंद्रभानु प्रसाद सिंह - माखनलाल चतुर्वेदी और स्वाधीनता आंदोलन
आयाम प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९३

३१. जगनसिंह, स्मिता मिश्र - रामदरश मिश्र : व्यक्ति और अभिव्यक्ति
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९९

३२. डॉ.जनक खन्ना - तुलसी काव्य में प्रकृति, भूगोल तथा खगोल
सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९८

३३. डॉ.सी.के.जेम्स - सामाजिक यथार्थ के चितेरे नागार्जुन
और धूमिल
सार्थक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९८

३४. दर्शनलाल सेठी - जायसी का काव्य शिल्प
साहित्य सदन, देहरादून, प्र.सं.१९७०

३५. दानबहादुरपाठक 'वर' - मैथिलीशरण गुप्त और उनका साहित्य
विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र.सं.१९६९

३६. दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास - आधुनिक जीवन और पर्यावरण
प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००७

३७. डॉ.दुर्गाशंकर मिश्र - गिरिजाकुमार माथुर और उनका काव्य
हिंदी साहित्य भंडार, लखनाऊ, प्र.सं.१९७४

३८. देशराजसिंह भाटी - अज्ञेय : काव्य कोश
अशोक प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९७८

३९. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना - हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि
विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, द्वि.सं.१९७१

४०. डॉ.नगेंद्र - साकेत : एक अध्ययन
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, सं.१९७०

४१. नन्दकिशोर नवल - समकालीन काव्य यात्रा
किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९४

४२. नन्द भारद्वाज - संस्कृति जनसंचार और बाज़ार
सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली

४३. निर्मला कुमारी वार्ष्णेय - साहित्य के विविध आयाम
संजय बुक सेंटर, वाराणसी, सं.२००३

४४. निशांत सिंह - पर्यावरण और जल प्रदूषण
ड्रीम बुक सर्विस, दिल्ली, प्र.सं.२००३

४५. नित्यानंद तिवारी, डॉ.ज्ञानचंद्र गुप्त - रचनाकार रामदरश मिश्र
राधाकृष्ण पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली,
द्वि.सं.१९९७

४६. डॉ.पुष्पा थरेजा - भारतेंदु युगीन साहित्य में राष्ट्रीय भावना
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, प्र.सं.१९७८

४७. पद्मसिंह चौधरी - महादेवी साहित्य : एक नया दृष्टिकोण
अपोलो प्रकाशन, जयपुर, सं.१९७४

४८. पुष्पेंद्र सिंह, डॉ.दुर्गासिंह - धर्म ग्रंथों ने कहा पर्यावरण के बारे में
आदित्य पब्लिशर्स, मध्यप्रदेश, सं.२००१

४९. डॉ.पुष्पा भारती - हरिवंशराय बच्चन की साहित्य साधना
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००७

५०. डॉ.पूरनचंद टण्डन, डॉ.विनीता कुमारी - हिंदी साहित्य का इतिहास (आदिकाल से रीतिकाल तक) जगत्राम एण्ड सन्स, नयी दिल्ली, सं.२००७

५१. प्रकाशचंद्र भट्ट - नागार्जुन : जीवन और साहित्य सेवासदन प्रकाशन, म.प्र

५२. प्रतिमा जैन - दिनकर : काव्य कला और दर्शन ग्रन्थम, कानपुर, प्र.सं.१९८०

५३. प्रतिभा मुदलियार - नरेश मेहता के काव्य का अनुशीलन सार्थक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९७

५४. प्रभाकर श्रोत्रिय - सर्जना का अग्निपथ किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००५

५५. सं.प्रभाकर श्रोत्रिय - हिंदी कविता की प्रगतिशील भूमिका नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, सं.१९९५

५६. डॉ.प्रभा दीक्षित - मुक्तिबोध एवं नागार्जुन का काव्य दर्शन साहित्य निलय, कानपुर, सं.२००४

५७. डॉ.प्रमोद कुमार अग्रवाल - निबंध निधि नव चेतना प्रकाशन, दिल्ली, सं.२००३

५८. डॉ.प्रमोद कोवप्रत - भारतीय जीवन मूल्य और ज्ञानपीठ पुरस्कृत हिंदी कवि सार्थक प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००३

५९. डॉ.प्रमोद कोवप्रत - समकालीन हिंदी कविता का तापमान जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्र.सं.२०११

६०. प्रेमचंद्र मधुवाल - पर्यावरण और हमारा जीवन कविता बुक सेंटर, दिल्ली, प्र.सं.२००२

६१. प्रेमचंद्र महेश - कलम और तलवार के धनी रहीम वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९६८

६२. प्रेमलता बाफना - पंत का काव्य साहित्य सदन, देहरादून, प्र.सं.१९६९

६३. प्रेमशंकर - प्रसाद का काव्य
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९९४

६४. सं.डॉ.प्रेमशंकर त्रिपाठी - महाप्राण निराला : पुनर्मूल्यांकन
कुमारसभा पुस्तकालय, कलकत्ता

६५. डॉ.बलदेव वंशी - कबीर की चिंता
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००२

६६. बीना शर्मा - निराला और समकालीन हिंदी कविता
ज्ञान भारती, दिल्ली, प्र.सं.१९९६

६७. ब्रजबाला सिंह - भगवत रावत : अपने समय का चारितार्थ
प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००६

६८. ब्रजेश्वर शर्मा - सूरदास
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,
छठा सं.२००१

६९. श्री भगवान सिंह - आलोचना के मुक्त वातायन
भारती प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००३

७०. मधु छन्दा - श्रम का सौंदर्यशास्त्र और केदारनाथ अग्रवाल का काव्य
परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९९६

७१. मनीष झा - प्रकृति, पर्यावरण और समकालीन कविता
आनंद प्रकाशन, कोलकत्ता, प्र.सं.२००४

७२. महादेवी वर्मा - साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९९५

७३. मीरा श्रीवास्तव - आधुनिकता के आगे : श्रीनरेश मेहता
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९८९

७४. मुरली मनोहर प्रसाद सिंह - आधुनिक हिंदी साहित्य : विवाद और विवेचना
स्वराज प्रकाशन, दिल्ली

७५. डॉ.मृत्युंजय उपाध्याय - हिंदी की प्रगतिशील कविता : स्वरूप और प्रतिमान
अमर प्रकाशन, मथुरा, प्र.सं.२०००

७६. मैनेजर पाण्डेय - भक्ति आंदोलन और सूरदास
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वि.सं.१९९७
७७. डॉ.युगेश्वर - कामायनी महाभाष्य
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.२००६
७८. डॉ.रणजीत - हिंदी की प्रगतिशील कविता
हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली, प्र.सं.१९७१
७९. रणजीत सिंह - हिंदी साहित्य का आदिकाल
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९९५
८०. डॉ.रणधीर श्रीवास्तव - जायसी : एक अध्ययन
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली,
प्र.सं.१९९२
८१. डॉ.रमेशकुमार शर्मा - रीतिकाल और आधुनिक हिंदी कविता
विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र.सं.१९६७
८२. रमेशचंद्र गुप्त - कामायनी : एक नवीन दृष्टि
जीवन ज्योति प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९७१
८३. रमाकांत शर्मा - छायावादोत्तर हिंदी कविता
साहित्य सदन, देहरादून, सं.१९७०
८४. डॉ.राजकुमारी सैनी - सुमित्रानंदन पंत की सौंदर्य चेतना का विकास
जीवन ज्योति प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९८८
८५. राजेंद्र त्रिवेदी - कालिदास और तुलसी की सौंदर्य चेतना
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.२००७
८६. डॉ.राजेंद्र प्रसाद - अज्ञेय : कवि और काव्य
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वि.सं.२००६
८७. रामकमल राय - नरेश मेहता : कविता की ऊर्ध्वयात्रा
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९७२
८८. डॉ.रामकली सराफ - समकालीन कविता की प्रवृत्तियाँ
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्र.सं.१९९७
८९.डॉ.रामसजन पाण्डेय - विद्यापति : व्यक्ति और कवि
दिनमान प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९०

९०. रामविलास शर्मा - भारतीय सौंदर्यबोध और तुलसीदास
साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००१

९१. रामविलास शर्मा - प्रगतिशील काव्यधारा और केदारनाथ अग्रवाल
परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९८६

९२. रामविलास शर्मा - रूपतरंग और प्रगतिशील कविता की वैचारिक पृष्ठभूमि
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली

९३. डॉ.रंजन - भारतेंदु युगीन काव्य में भक्तिधारा
रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.१९७५

९४. रेखा अवस्थी - प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य
दि मैकमिलन कम्पनी ऑफ इंडिया लि.
नयी दिल्ली, प्र.सं.१९७८

९५. डॉ.ललिता अरोडा - दिनकर : एक अध्ययन
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली, सं.१९९१

९६. डॉ.ललिता अरोडा - नयी कविता का अनुशीलन
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली, सं.१९९३

९७. लालचंद्र गुप्त मंगल - हिंदी बारहमासा साहित्य
संजीव प्रकाशन, कुरुक्षेत्र, प्र.सं.१९८२

९८. ललित शुक्ल - सियारामशरण गुप्त : रचना एवं चिंतन
साहित्य सदन, झाँसी, प्र.सं.२०००

९९. डॉ.के.वनजा - माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं में मानवीय मूल्यों की अवधारणा
सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली, सं.१९९५

१००. विजेंद्र स्नातक - द्विवेदी युगीन हिंदी नवरत्न
आर्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्र,सं.१९९४

१०१. विमल अहूजा - हरिऔध काव्य शैली
आत्मराम एण्ड सन्स, दिल्ली, प्र.स.१९७०

१०२. सं.विश्वनाथ प्रसाद तिवारी - आठवें दशक की हिंदी कविता
प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, प्र.सं.१९८२

१०३. विश्वंभर मानव - प्राचीन कवि
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९८२

१०४. विश्वंभर मानव, डॉ.रामकिशोर शर्मा - आधुनिक कवि
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.२००८

१०५. विश्वंभर मानव, डॉ.रामकिशोर शर्मा - हमारे प्रतिनिधि कवि
किताब महल, इलाहाबाद, सं.१९७८

१०६. विश्वंभर मानव, - नयी कविता : नये कवि
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि.सं.१९६८

१०७. विष्णुकांत शास्त्री - आधुनिक हिंदी साहित्य के कुछ विशिष्ट पक्ष
प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

१०८. विष्णुकांत शास्त्री - कुछ चन्दन की कुछ कपूर की
हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, सं.१९७९

१०९. डॉ.विष्णुप्रभा शर्मा - श्री नरेश मेहता की वैष्णव काव्ययात्रा
आशा प्रकाशन गृह, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९८८

११०. डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ - समकालीन काव्य की दिशाएँ
मधुवन प्रकाशन, मथुरा, प्र.सं.१९९२

१११. बी.एल.शर्मा, पलक भारद्वाज - मानव एवं पर्यावरण
मलिक एण्ड कंपनी, जयपुर, सं.२००३

११२. शशि जोशी -काव्य रूढियाँ : आधुनिक कविता के परिप्रेक्ष्य में
उपमा प्रकाशन, जयपुर

११३. शिवगोपाल मिश्र - जल प्रदूषण
ज्ञान गंगा, दिल्ली, सं.२००६

११४. शिवगोपाल मिश्र, दिनेश मणि - मृदा प्रदूषण
ज्ञानगंगा, दिल्ली, सं.२००७

११५. शिवप्रसाद मिश्र - सियारामशरण गुप्त : व्यक्तित्व और कृतित्व
कमल प्रकाशन, इन्दौर, सन्१९६९

११६. शिवप्रसाद सिंह - विद्यापति
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,
अष्टम सं.१९८७

११७. शिवानंद नौटियाल - पर्यावरण : समस्या और समाधान
सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.२००४

११८. शेखर चंद्र जैन - राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्य कला
जयपुर पुस्तक सदन, जयपुर, १९७३

११९. श्यामचंद्र कपूर - हिंदी साहित्य का इतिहास
ग्रंथ अकादमी, नयी दिल्ली, सं.२००८

१२०. श्यामसुंदर शर्मा - सागर प्रदूषण
ज्ञानगंगा, दिल्ली, सं.२००६

१२१. श्यामसुंदर दूबे - समसामयिक निबंध
विद्याविहार, नयी दिल्ली, प्र.सं.२००४

१२२. श्रीप्रकाश शुक्ल - साठोत्तरी हिंदी कविता में लोक सौंदर्य
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.२००१

१२३. सं.सत्यपाल चुघ - प्रसाद भारतीयता के प्रतिमान
विद्याविहार, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९०

१२४. डॉ.सत्यप्रकाश मिश्र - मध्यकालीन काव्यधाराएँ एवं प्रतिनिधि कवि भाग-२
हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, प्र.सं.१९८९

१२५. डॉ.सत्यप्रकाश मिश्र - रीतिकाव्य : प्रकृति एवं स्वरूप
अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.१९७३

१२६. डॉ.संतोषकुमार तिवारी - छायावादी काव्य की प्रगतिशील चेतना
भारतीय ग्रंथ निकेतन, दिल्ली, प्र.सं.१९७४

१२७. डॉ.संतोषकुमार तिवारी - नये कवि : एक अध्ययन भाग - २
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९१

१२८. डॉ.संतोषकुमार तिवारी - नये कवि : एक अध्ययन भाग - ४
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९९१

१२९. डॉ.संतोषकुमार तिवारी - नये कवि : एक अध्ययन भाग - ६
भारतीय ग्रंथ निकेतन, नयी दिल्ली,
प्र.सं.१९९३
१३०. डॉ.संतोषकुमार तिवारी - संवादों के सिलसिले
अमर प्रकाशन, मथुरा, प्र.सं.२०००
१३१. डॉ.सुखदेव - भक्तिकाव्य में प्रकृति चित्रण
अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९७४
१३२. सुन्दरलाल बहुगुणा - धरती की पुकार
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
पहली आवृत्ति २००७
१३३. डॉ.रघुवीर शर्मा - कविवर वृंद : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
स्वराज प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९८
१३४. डॉ.सुनीता कुमारी - नरेश मेहता का काव्य : सांस्कृतिक मूल्यांकन
अनंग प्रकाशन, दिल्ली, सं.२००७
१३५. सुनिल शर्मा - हमारा पर्यावरण हमारी जागरूकता
प्रखर प्रकाशन, दिल्ली, सं.२००८
१३६. सुरेंद्रनाथ दीक्षित - विद्यापति पदावली
जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं.२००७
१३७. डॉ.सुरेशचंद्र शर्मा - निराला साहित्य में सामाजिक चेतना
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.१९८८
१३८. संजय कुमार - अज्ञेय प्रकृति काव्य काव्य प्रकृति
वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९९५
१३९. सं.हज़ारीप्रसाद द्विवेदी
विश्वनाथ त्रिपाठी - अब्दुल रहमान कृत संदेश रासक
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं.१९९५
१४०. हरबंशलाल शर्मा - सूरदास
राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
पाँचवाँ आवृत्ति १९८९
१४१. हरिचंद्र व्यास - जनसंख्या प्रदूषण और पर्यावरण
विद्याविहार, नयी दिल्ली, सं.२००७

१४२. सं.डॉ.हरिचरण शर्मा - सामाजिक चेतना के शिल्पी कवि महेंद्र भटनागर
बोहरा प्रकाशन, जयपुर

मलयालम-ग्रंथ

१. पी.एस.गोपीनाथन नायर - भूमिक्कु पनि
करन्ट बुक्स, तिरुवनंतपुरम, सं.१९९५

२. जार्ज.के.अलक्स - हरित राष्ट्रीयम्, चरित्रम्, सिद्धांतम्, प्रयोगम्
डी.सी.बुक्स, कोट्टयम, सं.२००३

३. प्रो.एम.के.प्रसाद - हरित चिन्तकळ
केरल शास्त्र साहित्य परिषद, कोच्चि, द्वि.सं.२००६

४. मारियम्मा तरकन - विज्ञानम् २१ आं नूट्टान्डिलेक्क परिस्थिति शास्त्रीय वीक्षणम्
स्टेट इन्स्टिटट्यूट ऑफ लांग्वेजस, तिरुवनंतपुरम्, प्र.सं.२००१

५. सी.रहीम - परिस्थितियुडे राष्ट्रीयम्
फेबियन बुक्स, आलप्पुषा

६. डी.वी.सिरिल - मनुष्यनुम् प्रकृतियुम्
करन्ट बुक्स, कोट्टयम, सं.२००७

७. सुगतकुमारी - कावु तीन्टल्ले
डी.सी.बुक्स, कोट्टयम, दू.सं.१९९८

अंग्रेज़ी-ग्रंथ

१. अलोका डेबी - एनवयोनमेन्टल साइंस एण्ड इंजिनीयरिंग
यूनिवर्सिटिस प्रेस, हैदराबाद

२. एन.एस.सुब्रह्मण्यम - इकोलजी
ए.वी.एस.एस.साम्पमूर्ति नारोसा पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली

३. यूगेन पी ओडम - बेसिक इकोलजी
सौंदर्स कॉलेज पब्लिशिंग, न्यूयॉर्क

४. योषिको वै.नकानो - मिराकुलस लाइफ चेयिन
हेलिक्स एडिशनस लि.चापेल स्कोयर, डेडिंगन ओक्सोन, सं.१९९४

कोश-ग्रंथ

१. द न्यू एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, एनसाइक्लोपीडिक ब्रिटानिक एजन्सी, लण्डन, वोल्यम ४, सं.१९७४

२. प्रियरंजन त्रिवेदी - इन्टरनैशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ इकोलजी एण्ड एनवयोनमेंट
वोल्यम १, इन्डियन इनस्टिट्यूट ऑफ इकोलजी एण्ड एनवयोनमेंट, नयी दिल्ली, सं.१९९४

समाचार-पत्र

१. द हिंदु - दिसंबर ७, २००९
२. द हिंदु - दिसंबर ८, २००९
३. द हिंदु - दिसंबर ९, २००९
४. द हिंदु - दिसंबर १०, २००९
५. द इंडियन एक्सप्रेस - दिसंबर १२, २००९
६. द न्यू सन्डे एक्सप्रेस - दिसंबर ६, २००९
७. मातृभूमि - जुलाई १९, २००९
८. मातृभूमि - सितंबर ११, २००९
९. मातृभूमि - नवंबर १५, २००९
१०. मातृभूमि - नवंबर १७, २००९

११. मातृभूमि - नवंबर २३, २००९
१२. मातृभूमि - दिसंबर २, २००९
१३. मातृभूमि - दिसंबर ७, २००९
१४. मातृभूमि - दिसंबर ८, २००९
१५. मातृभूमि - दिसंबर ९, २००९
१६. मातृभूमि - दिसंबर १०, २००९
१७. मातृभूमि - जनवरी ६, २००९
१८. मातृभूमि - जनवरी ८, २००९
१९. मातृभूमि - जून ५, २००९

पत्रिकाएँ

१. आजकल - जून २००९
२. आलोचना - जुलाई-सितंबर २०००
३. आलोचना - जुलाई-सितंबर २००२
४. आलोचना - अक्तूबर-दिसंबर २००३
५. आलोचना - जुलाई-सितंबर २००७
६. इस्पात भाषा भारती - अप्रैल-जून २००४
७. इस्पात भाषा भारती - जुलाई-सितंबर २००५
८. इस्पात भाषा भारती - दिसंबर २००९ जनवरी १०२०
९. कथन - अक्तूबर-दिसंबर २०१०
१०. कथन - जनवरी-मार्च २०१०
११. कथन - अप्रैल-मई २०१०
१२. गगनाञ्चल - अप्रैल-अगस्त २००३
१३. ज्ञान-विज्ञान - मई २००९
१४. ड्रीम २०४७ - अगस्त १००९
१५. दस्तावेज़ - अप्रैल-जून २००३
१६. नया ज्ञानोदय - मार्च २००४
१७. नया ज्ञानोदय - जनवरी २००६

१८. परमिता - अक्तूबर-दिसंबर २००८

१९. मानक दूत - जुलाई-सितंबर २००७

२०. मीरायान - दिसंबर-फरवरी २००९-२०१०

२१. मधुमती - जनवरी २००६

२२. मधुमती - अक्तूबर २००९

२३. मधुमती - जनवरी-मार्च २०१०

२४. मधुमती - अक्तूबर २०१०

२५. राजभाषा भारती - जुलाई-सितंबर २०००

२६. राजभाषा भारती - अप्रैल-जून २००४

२७. राजभाषा भारती - जनवरी-सितंबर २००५

२८. राजभाषा भारती - जनवरी-मार्च २००६

२९. राजभाषा भारती - जुलाई-सितंबर २००७

३०. राजभाषा भारती - जनवरी-मार्च २००८

३१. राजभाषा भारती - अप्रैल-जून २००८

३२. राजभाषा भारती - अक्तूबर-दिसंबर २००८

३३. रिसर्च लिंक - जनवरी २००९

३४. वर्तमान साहित्य - जनवरी २०११

३५. वसुधा - जुलाई-सितंबर २००९

३६. विकल्प - जुलाई-सितंबर २००५

३६. विकल्प - जनवरी-मार्च २०१०

३७. विज्ञान गरिमा सिन्धु - अक्तूबर-दिसंबर १९९९

३८. वीणा - अक्तूबर २००९

३९. श्री मिलिंद - जून २००९

४०. समकालीन भारतीय साहित्य - मई-जून २००४

४१. समकालीन भारतीय साहित्य - सितंबर-अक्तूबर २००५

४२. समकालीन भारतीय साहित्य - नवंबर-दिसंबर २००५

४३. समकालीन भारतीय साहित्य - सितंबर-अक्तूबर २००८

४४. समकालीन भारतीय साहित्य - नवंबर-दिसंबर २००८

४५. समकालीन भारतीय साहित्य - मई-जून २००९

४६. समकालीन भारतीय साहित्य - नवंबर-दिसंबर २००९
४७. समकालीन भारतीय साहित्य - जुलाई-अगस्त २०१०
४८. सामयिक मीमांसा - अप्रैल-जून २००९
४९. साहित्य अमृत - अगस्त २००६
५०. साहित्य अमृत - सितंबर २००८
५१. साक्षात्कार - अगस्त २००१
५२. साक्षात्कार - फरवरी २००६
५३. सुलभ इंडिया - दिसंबर २००९
५४. सुलभ इंडिया - अक्तूबर २०१०
५५. संग्रथन - जून २०१०

वेबसाइट

1. http://www.aksharparv.com
2. http://www.asle.org
3. BBC HINDI.com
4. http://www.bbc.couk/hindi
5. http://www.bhaskar.com
6. http://www.chakra.org
7. http://www.deshabandhu.co.in
8. http://www.edaa.in/image
9. http://www.electronicbookreview.com
10. http://www.globalissues.org
11. http://hindi.cri.in
12. http://hariruama.blogspot.com
13. http://hindi.indiawaterportal.org
14. http://hindi.webdunia.com
15. http://inJagaran.yahoo.com
16. http://khabar.ndtv.com
17. http://news.google.com
18. http://navabharathtimes.indiatimes.com

19. http://postbox7.blogspot.com
20. http://www.pressnote.in
21. http://patrika.com
22. http://Paryavaran.digest.blogspot.com
23. http://www.Paryavaranmitra.com
24. http://http://raviwar.com
25. http://Sachinwriteson.blogspot.com
26. http://enwikipedia.org
27. http://hiwikipedia.org
28. http://wikipedia.freeencyclopedia.com